नीरजा

१

पीठ की तरफ कई तकिये रखकर ऊँचा बना दिया गया है। नीरजा अर्धशायित अवस्था में रोग-शय्या पर पड़ी हुई है। पैरों को सफेद रेशम की चादर से ढके हैं। उसका रंग शंख के समान सफेद कान्तिहीन हो गया है, चूड़ियाँ ढीली हो गई हैं, दुबले हाथों में नीली शिराओं की रेखाएँ दिखाई पड़ती हैं, घनी भौंहोंवाली आँखों की पलकों पर रोगजनित कालिमा है।

फर्श पर संगमर्मर पत्थर जड़े हुए हैं, दीवाल पर रामकृष्ण परमहंस का चित्र टँगा हुआ है, कमरे में पलँग, तिपाई, दो बेंत के मोढ़े और एक कोने में कपड़े टाँगने के लिए रेगनी है, इनके सिवा और कोई सामान नहीं है। एक कोने में पीतल के फूल-दान में रजनीगन्धा का गुच्छा रक्खा है, उसी की मृदुगन्ध कमरे की बन्द हवा में भर रही है।

पूर्व ओर की खिड़की खुली हुई है। नीचे के बगीचे में 'अर-किड' का घर दिखाई पड़ता है जो छींटदार घेरों से तैयार किया गया है, उसपर जहाँ तहाँ अपराजिता की लताएँ फैली हुई हैं। निकट ही झील के किनारे पम्प चल रहा है, उससे जल कलकल करता हुआ बहकर नालियों से फूलों के पौधों की क्यारियों तक पहुँच जाता है। गन्ध से परिपूर्ण आम के बगीचे में कोयल बोल रही है, मानो प्राण दे देने को तैयार है।

बगीचे की ड्योढ़ी पर दुपहरिया के घंटे टनाटन बज उठे। प्रखर तापवाली धूप के साथ उसके स्वर का मेल हो गया। तीन

बजे तक मालियों को छुट्टी थी। उस घंटे की आवाज से नीरजा की छाती अन्दर से व्यथापूर्ण हो उठी, उसका मन उदास हो गया। आया दरवाजा बन्द करने के लिए आ गई। नीरू ने कहा—नहीं, नहीं, रहने दो। पेड़ों के नीचे जहाँ तहाँ छाया फैल रही थी, वहाँ ही दृष्टि निबद्ध करके वह देखने लगी।

फूल के व्यवसाय में उसके पति आदित्य ने नाम पैदा किया है। विवाह के दूसरे दिन से ही इस बगीचे की अनेक प्रकार की सेवाओं और भिन्न-भिन्न कार्यों के बहाने नीरजा और उसके पति का प्रेम विभिन्न धाराओं से आकर मिल गए हैं। यहाँ के फूल-पत्तों में नये-नये सौन्दर्य की उपलब्धि से दोनों के सम्मिलित आनन्द ने नवीन रूप ग्रहण किये हैं। जिस तरह विशेष-विशेष डाकों के आने के दिनों में प्रवासी अपने मित्रों के यहाँ से आनेवाली चिट्ठियों की प्रतीक्षा करता रहता है, ठीक उसी प्रकार एक ऋतु के बाद दूसरी ऋतु के आगमन पर वे दोनों भिन्न-भिन्न वृक्षों की सामूहिक अभ्यर्थना के लिए प्रतीक्षा करते रहे हैं।

आज नीरजा को केवल उसी दिन का चित्र याद आ रहा है। यह कोई बहुत दिनों की बात नहीं है, तो भी ऐसा जान पड़ता है मानो यह बहुत ही पुरानी बात है। बगीचे के पश्चिम ओर एक बहुत बड़ा नीम का पेड़ है। उसी का जोड़ीदार एक और नीम का पेड़ था। वह कुछ दिन हुए पुराना होकर गिर गया, उसी की जड़ का पटरा कटवाकर एक छोटी-सी मेज तैयार की गई है। उसी जगह पर प्रातःकाल दोनों एक साथ चाय पी लेते थे, पेड़ों के बीच-बीच से हरी डालियों से छनकर धूप उनके पैरों पर आकर पड़ रही थी। प्रसाद पाने की आशा से गिलहरियाँ आ जाती थीं। तदनन्तर दोनों मिलकर

बगीचे का अनेक प्रकार का काम करने लगते थे। नीरजा सिर पर फूलदार रेशमी छाता ओढ़ लेती थी, और आदित्य के सिर पर सोला की टोपी रहती थी, कमर में डालियों को काटनेवाली कैंची रहती थी। मित्रगण भेंट करने को आ जाते थे तो बगीचे के काम के साथ लौकिकता का मिश्रण हो जाता था। मित्रों के मुँह से प्रायः ही सुनाई पड़ता—'सच कहता हूँ भाई साहब' तुम्हारा यह 'डलिया' देखने से मन में डाह पैदा होती है।' कोई अनाड़ी की तरह पूछ बैठता—'ये सब क्या सूरज-मुखी के फूल हैं!'—नीरजा बहुत ही प्रसन्न होकर उत्तर देती—"नहीं, नहीं, ये तो गेंदा के फूल हैं।' एक दिन किसी चतुर व्यक्ति ने कहा—'इतनी बड़ी मोतिया की बेल आपने किस तरह लगायी है नीरजा देवी! आपके हाथ में तो जादू भरा हुआ है। यह तो 'टगर' सा जान पड़ता है।' समझदारी का पुरस्कार मिल गया। होला माली को, नाराज करके गमलासहित बेला फूल के पाँच पौधे वह लेकर चला गया है। कभी-कभी मुख्य मित्रों को साथ लेकर कुंज की परिक्रमा होती थी—फूल के बगीचे में, फलों के बगीचे में, तरकारियों के खेत में। विदाई के समय नीरजा डलिया में गुलाब, 'मैगनोलिया, 'कारनेशन, और इन सबके साथ ही पपीता, कागजी नीबू, आदि भर देती थी—जो कि उनके बगीचे की नामी चीजें थीं। सबके अन्त में ठीक ऋतु आने पर कच्चे नारियल का पानी लाया जाता था। प्यासे लोग कहते थे—'कितना मीठा पानी है।' उत्तर में वे सुनते थे—'यह मेरे अपने बगीचे के कच्चे नारियल का पानी है।' सभी कहते थे—"ओह, इसीलिए तो ऐसा कहना पड़ता है।"

उन दिनों प्रातःकाल पेड़ के नीचे दार्जिलिंग चाय की भाप से मिलकर विभिन्न ऋतुओं में जो गन्ध निकल पड़ती थी, उसकी

स्मृति लम्बी साँस के साथ मिलकर उसके मन में 'हाहाकार' उत्पन्न कर देती है। किस दस्यु के हाथ से वह उन सुनहले रंग से रंजित दिनों को छीन लाना चाहती है? विद्रोही मन किसी के सामने क्यों नहीं पाता? भले आदमी की तरह सिर झुकाकर भाग्य को मान लेनेवाली लड़की वह नहीं है। इसके लिए उत्तरदायी कौन है? कौन विश्वव्यापी लड़का? कौन विराट पागल? ऐसी सम्पूर्ण सृष्टि को इतने बड़े निरर्थक रूप से कौन उलट-पुलट देने में समर्थ हुआ।

विवाह के बाद सुख के साथ लगातार दस वर्ष निर्विघ्न बीत गये। मन ही मन सखियाँ ईर्ष्या करती रहीं। उनको ख्याल हुआ बाजार दर के हिसाब से उसका जो मूल्य है उसकी अपेक्षा वह बहुत अधिक पा गयी है। पुरुष मित्र आदित्य को 'लकी डाग' कहते थे।

नीरजा के गार्हस्थ्य सुख की पालवाली नाव जिस घटना से एक दिन एक ही झटके में डूब गयी, वह घटना 'डली' नामक कुतिया से सम्बन्ध रखती है। इस गृहस्थी में गृहिणी के आने के पहले ही वह उसके पति की एक मात्र संगिनी थी। अन्त में उस कुतिया का प्रेम दम्पति में बँट गया। बँटवारे में अधिक हिस्सा नीरजा की ही ओर चला गया था। दरवाजे के पास गाड़ी आने पर उसे देखते ही कुतिया का मन बिगड़ उठता था। अपनी पूँछ जोर से हिलाकर वह प्रस्थान के विरुद्ध आपत्ति प्रदर्शित करती थी। बिना बुलाये ही गाड़ी में उछलकर चढ़ जाने का उसका दुस्साहस मालकिन की तर्जनी के संकेत से ही रुक जाता था। लम्बी साँस लेकर पूँछ की कुण्डली के बीच अपने नैराश्य से घिरकर वह दरवाजे के पास पड़ी रहती थी। उनके वापस आने में देर होने पर वह मुँह ऊपर उठाकर हवा

सूँघती हुई इधर-उधर घूमने लगी थी, कुत्तों की अव्यक्त भाषा में वह आकाश में करुणोत्पादक आह उच्छ्वसित करने लगती थी। अन्त में उस कुतिया को कोई रोग हो गया। और एक दिन नीरजा की तरफ अपनी कातरतापूर्ण दृष्टि को स्तब्ध भाव से निबद्ध रखकर, उसकी गोद में वह मर गई।

नीरजा को प्यार करने की प्रचण्ड जिद थी। उस प्यार के विरुद्ध विधाता भी हस्तक्षेप करेंगे, यह बात उसकी कल्पना में भी नहीं आती थी। इतने दिनों तक अपनी अनुकूल गृहस्थी पर वह असन्दिग्ध रूप से विश्वास करती रही है। आज तक विश्वास डिगने का कारण उपस्थित नहीं हुआ। किन्तु आज जब कि 'डली' के लिए मर जाना अचिन्तनीय रूप से सम्भव हो गया, तब उसके दुर्ग की दीवार में पहला छेद दिखाई पड़ा। ऐसा जान पड़ा कि यही बुरे लक्षण का श्रीगणेश है। मालूम हुआ कि इस संसार के रचयिता अव्यवस्थित चित्त हैं—उनकी तात्कालिक प्रत्यक्ष कृपा पर भी अब आशा रखने से कोई लाभ नहीं।

नीरजा को सन्तान होगी, यह आशा सभी छोड़ चुके थे। अपने आश्रय में रहनेवाले गणेश के बच्चे को लेकर जब नीरजा की प्रतिहत स्नेहवृत्ति की उथल-पुथल बहुत प्रबल होने लगी और जब वह बच्चा उसके अशान्त अभिघातों को अधिक सहने में असमर्थ हो चला, उसी समय सन्तान होने की सम्भावना प्रकट हुई। भीतर ही भीतर मातृ-हृदय भर उठा, भविष्य का आकाश नवजीवन की प्रातःकालीन आभा से लाल हो उठा, पेड़ के नीचे बैठ-बैठकर नीरजा आगन्तुक के लिए तरह-तरह की सजावटों से सिलाई का काम करने लगी।

अन्त में प्रसव का समय आ गया। दाई आसन्न संकट को समझ गई। आदित्य इतना घबड़ा उठा कि डाक्टर ने डाँट-

कर उसे दूर हटा दिया। अस्त्रोपचार करना पड़ा, बच्चे को मार-कर उसने जननी को बचा लिया। उसके बाद नीरजा फिर उठ न सकी। बालू की शय्या पर लेटी हुई वैसाख की नदी की भाँति उसका स्वल्प रक्त वाला शरीर क्लान्त होकर पड़ा रहा। प्राण-शक्ति की अजस्त्रता बिलकुल ही समाप्त हो गयी। बिछौने के सामने की खिड़की खुली रहती थी। गरम हवा से मुचकुन्द फूल की गन्ध आती रहती थी। कभी-कभी 'बतानी' फूल का निःश्वास आता था, मानो उसके बहुत दिन पहले के, पिछले बसन्तकालीन दिन मधुर स्वर से उससे पूछ रहे थे—'कैसी हो।'

सबसे अधिक दुःख उसको तब मालूम हुआ जब कि उसने देखा कि बगीचे के काम में सहयोगिता के लिए आदित्य की दूरसम्पर्कीया बहिन सरला को बुलाना पड़ा है। खुली खिड़की से जब वह देखती कि अबरख और रेशम के कसीदे से मढ़ा हुआ एक बाँस का छाता सिर पर ओढ़े सरला बगीचे के मालियों से काम कराती हुई घूम रही है, तब वह अपने निकम्मे हाथ-पैरों को सह नहीं सकती थी। फिर भी स्वस्थ रहने की अवस्था में इसी सरला को प्रत्येक ऋतु में नवीन पौधे रोपने के उत्सव में निमंत्रण देती रहती थी। प्रातःकाल से ही काम होने लगता था। उसके बाद झील में तैरकर स्नान किया जाता था, उसके पश्चात् केलों के पत्तों पर खाया जाता था, और एक ग्रामोफोन पर देशी-विदेशी संगीत गाया जाता था। मालियों को दही-चिवड़ा, मिठाई बाँटी जाती थी। इमली के पेड़ के नीचे से उनका कलरव सुनाई पड़ता था। धीरे-धीरे दिन ढल जाता था, झील का पानी अपराह्न की हवा से काँपने लगता था, 'बकुल' पक्षी फूल की डाली पर बोलने लगते थे। आनन्दमय थकान से दिन का अवसान हो जाता था।

उसके मन में जो रस बिलकुल ही मीठा था, आज वह कड़ुवा क्यों हो गया ; जैसे आजकल का उसका दुर्बल शरीर उसके लिए अपरिचित है, वैसे ही इस समय का तीखा नीरस स्वभाव भी उसके लिए परिचित नहीं है। उस स्वभाव में कोई उदारता नहीं है। कभी-कभी यह दरिद्रता उसके लिए असह्य हो उठती है, मन में लज्जा जाग उठती है, तो भी किसी प्रकार सम्हाल नहीं सकती। डरने लगती है कि शायद इस दीनता को आदित्य समझ गया है; किसी दिन शायद वह प्रत्यक्ष ही देख लेगा कि नीरजा का आजकल का मन हाथी के द्वारा खाए हुए कैथे के समान किसी काम का नहीं है।

दोपहर के घंटे बज गये। सब माली चले गये। समूचा बगीचा निर्जन हो गया। नीरजा सुदूर दिशा की ओर निहारती रही, जहाँ दुराशा की मरीचिका का भी आभास न था, जहाँ छायाविहीन धूप में शून्यता के बाद शून्यता का पुनरागमन होता है।

२

नीरजा ने पुकारा—"रोशनी!"

'आया' कमरे में आ गयी। प्रौढ़ा थी, बाल काले सफेद मिले जुले थे, कठोर हाथों में पीतल के मोटे कंगन पहिने थी, घँघरे के ऊपर ओढ़नी थी। मांस-विरल शरीर की बनावट में और सूखे चेहरे के भाव में एक चिरस्थायी कठोरता थी। मानो अपनी अदालत में इन लोगों की गृहस्थी के विरुद्ध अपनी गवाही देने जा रही हो। नीरजा को उसने पाला-पोसा था, उसी पर उसका सारा प्यार है। उसके आस-पास जो लोग आते जाते थे—यहाँ तक कि नीरजा के पति भी—उन सभी के संबंध में वह मन-ही-मन सतर्क रहती थी।

कमरे में आकर उसने पूछा—पानी ला दूँ बच्ची।"

"नहीं बैठ।" आया घुटनों को ऊपर करके फर्श पर बैठ गई।

नीरजा को बातचीत करने की आवश्यकता रहती थी, इसी-लिए 'आया' की जरूरत थी।

नीरजा ने कहा—"आज भोर में दरवाजा खुलने की आवाज मैंने सुनी थी।"

'आया' कुछ बोली नहीं, किन्तु उसके विरक्त मुख के भाव का अर्थ यही था कि, 'कब नहीं सुनाई पड़ता।'

नीरजा ने अनावश्यक प्रश्न किया—"सरला को लेकर शायद बगीचे में गये थे ?" यह बात निश्चित रूप से मालूम थी, तो भी नित्य एक ही प्रश्न होता था। एक बार हाथ नचाकर मुँह बिचकाकर आया चुपचाप बैठी रह गई।

नीरजा बाहर की तरफ देखती हुई अपने मन-ही-मन कहने लगी—"मुझको भी भोर में जगाते थे, मैं भी बगीचे के काम में जाती थी, ठीक उसी समय। यह तो बहुत दिन की बात नहीं है।"

इस आलोचना में उसके भाग लेने की आशा कोई नहीं करता, तो भी आया रह न सकी। बोली—"उनको न ले जाने से शायद बगीचा सूख जाता ?"

नीरजा अपने मन में कहने लगी—प्रातःकाल के फूलों का चालान न्यूमार्केट में किये बिना मैं एक दिन भी नहीं बिताती थी। उसी तरह फूलों का चालान आज भी किया गया है, मैंने गाड़ी की आवाज सुनी है। आज-कल चालान की कौन देख-भाल करता है रोशनी।

इस जानी हुई बात का 'आया' ने कोई उत्तर नहीं दिया, ओठ दबाकर बैठी रह गई।

नीरजा ने 'आया' से कहा—"चाहे कुछ भी हो, कितने दिन में भी हो, माली लोग धोखा नहीं दे सकते।"

'आया' मन मसोसकर बोली—"वह दिन नहीं है, अब दोनों हाथों से लूट चल रही है।

"सचमुच ही क्या?"

"मैं क्या झूठ बोल रही हूँ। कलकत्ते के नये बाजार में कितने फूल पहुँचते हैं। जमाई बाबू के बाहर निकलते ही खिड़की के दरवाजे पर मालियों का फूलों का बाजार लग जाता है।"

ये लोग नहीं देखते?

"देखने की इतनी गरज किसको है?"

"जमाई बाबू से तू कहती क्यों नहीं?"

मैं कहनेवाली कौन हूँ। सम्मान बचाकर चलना तो पड़ेगा ही। तुम क्यों नहीं कहतीं। तुम्हारा ही तो सब कुछ है।"

होने दो न, होने दो, अच्छा ही तो है। चलने दो न ऐसे ही कुछ दिन, उसके बाद जब चौपट हो जायगा, तो आप ही मालूम होगा। एक दिन यह समझ में आ जायगा कि माँ की अपेक्षा सौतेली माँ का प्यार बड़ा नहीं है! चुपचाप रहो न।

"किन्तु यही कहती हूँ बच्ची, तुम्हारे बस होता माली से कोई काम नहीं कराया जा सकता।"

नौकरानी की विरक्ति का कारण केवल होटल के कामों में उदासीनता ही नहीं है, उसके ऊपर नीरजा का स्नेह असंगत रूप से बढ़ता जा रहा है, यही कारण सबसे गुरुतर है।

नीरजा ने कहा—"माली को मैं दोष नहीं देती। नयी मालकिन को सह सकेगा क्यों। उसकी है सात पुश्तों की मालीगिरी, और तुम्हारी बहिनजी की है पुस्तक में पढ़ी हुई विद्या,

वह हुकुम करने आती है तो क्या वह अच्छा मालूम होता है ? होला दुनिया से बाहर का कानून मानना नहीं चाहता, मेरे पास आकर नालिश करता है। मैं कहती हूँ इस बात का कुछ भी खयाल मत कर, चुपचाप पड़ा रह।"

"उस दिन बाबू उसको हटा रहे थे।"

"क्यों, किसलिए ?"

"वह बैठा बीड़ी पी रहा था और उसके सामने ही बाहरी गाय आकर पौधों को खा रही थी। जमाई बाबू ने कहा—"गाय को हाँक क्यों नहीं दिया ?" उसने मुँह पर ही जवाब दिया—"मैं हाँकूँगा गाय बैल ? गाय तो मुझे ही खदेड़ देती है। मुझे अपने प्राणों का भय नहीं है।"

सुनकर नीरजा हँसने लगी, बोली—"उसकी बातें इसी तरह की होती हैं। जो कुछ भी हो, उसे मैंने अपने ही हाथ से तैयार किया है।"

"जमाई बाबू तुम्हारी ही खातिर से तो उसको सहते जाते हैं, चाहे गाय बैल ही घुस जायँ या गैंडे ही उत्पात मचावें। आदर का इतना बढ़ावा अच्छा नहीं है, यह भी कह देता हूँ।"

"चुप रहो रोशनी। किस दुःख से उसने गाय को नहीं खदेड़ा, यह क्या मैं नहीं समझती। उसके हृदय में आग जल रही है। वह होला सिर पर अँगोछा रखकर कहीं जा रहा है। बुलाओ तो उसे।"

नौकरानी के पुकारने से हलधर माली घर में आ गया। नीरजा ने पूछा—"क्या रे, आजकल कोई नयी फरमाईश है ?"

होला बोला—"है तो जरूर ही। सुनकर हँसी भी आती है, आँखों में आँसू भी आता है।"

"किस तरह, सुनूँ भी तो।"

"वही सामने जो मल्लिक लोगों का पुराना मकान गिराया जा रहा है, वहाँ से ईंटों के टुकड़े लाकर पेड़ों के नीचे बिछा देना पड़ेगा। यही है उनका हुकुम। मैंने कहा, धूप होने पर लू लगेगी। मेरी बात पर कुछ भी ध्यान नहीं देता।"

"बाबू से कह क्यों नहीं दिया ?"

"बाबू से मैंने कहा था। बाबू ने धमकाकर कहा था, "चुपचाप पड़ा रह।" भाभी, छुट्टी दे दो मुझे. मुझसे सहा नहीं जाता।"

"तभी तो मैंने देखा था, तू टोकरी में कूड़ा-करकट लेकर जा रहा था।"

"भाभी, तुम मेरी मालकिन हो। तुम्हारी ही आँखों के सामने उसने मेरा सिर नीचा कर दिया। देश गाँव के लोगों के सामने मेरी जान चली जायगी। मैं क्या कुली मजूर हूँ ?"

"अच्छा, इस समय चला जा, तेरी बहिनजी जब तुझे ईंट सुरखी ढोने को कहेंगी। तब मेरा नाम लेकर कहना, मैंने मना किया है। खड़ा रह गया क्यों ?"

"देश से चिट्ठी आयी है, बड़े हल का बैल मर गया है।" यह कहकर सिर खुजलाने लगा।

नीरजा ने कहा—"नहीं, मर नहीं गया है, खूब अच्छी तरह बचा हुआ है। यह लो दो रुपये और ज्यादा बकवाद मत कर।"

यह कहकर तिपाई के ऊपर रखे हुए पीतल के बक्स से रुपये निकालकर दिये।

"और क्या।"

"बहू के लिए एक पुराना कपड़ा। तुम्हारा जयजयकार होगा।" यह कहकर वह जोर से हँस पड़ा।

नीरजा बोली—"रोशनी, रेगनी पर का वह कपड़ा इसको दे दे तो।"

रोशनी ने जोर लगाकर सिर हिलाकर कहा—"यह कैसी बात, वह तो तुम्हारी ढाकेवाली साड़ी है?"

"रहने दो न ढकहिया साड़ी। मेरे लिए आज सभी साड़ियाँ समान हैं। अब किस दिन पहनूँगी।"

रोशनी ने मुँह बिचकाकर कहा—"नहीं, यह नहीं होगा। उसको तुम्हारी लाल पाढ़वाली मिल की धोती दूँगी। देखा होगा, यदि तू बच्ची को इसी तरह तंग करता रहेगा तो बाबू से कहकर तुझे यहाँ से खदेड़ कर हटा दूँगी।

होला ने नीरजा के पैर पकड़कर रुलाई के स्वर से कहा—"मेरा भाग्य फूट गया है भाभी।"

"क्यों रे, तुझे क्या हो गया है।"

"आयाजी को मैं मौसी कहकर पुकारता हूँ। मेरी माँ नहीं है, इतने दिनों तक जानता था अभागे होला को आयाजी प्यार करती हैं। आज भाभी, तुमको यदि मेरे ऊपर दया हो गयी तो वे क्यों बाधा डालती हैं। किसी का दोष नहीं है, यह मेरे ही भाग्य का दोष है। नहीं तो, अपने होला को पराये हाथ में देकर तुम आज बिछौने पर पड़ी हो!"

"डरने की बात नहीं है रे, तेरी मौसी तुझे प्यार करती है। तेरे आने के पहले ही तेरा गुणगान कर रही थी। रोशनी, दे दे इसे वही कपड़ा, नहीं तो वह धरना देकर पड़ा रहेगा।"

अत्यन्त उदास चेहरे से आया ने कपड़ा लाकर उसके सामने फेंक दिया। होला ने उसे उठाकर जमीन पर पसरकर प्रणाम किया। उसके बाद उठ खड़ा हुआ, बोला—"उस गमछे से लपेट लूँ भाभी। मेरा हाथ गंदा है, दाग लग जायगा।"

सम्मति की प्रतीक्षा न करके ही रेंगनी से तौलिया लेकर उसीसे कपड़े को लपेट कर तुरन्त ही होला चला गया।

नीरजा ने आया से पूछा—"अच्छा, आया, तू ठीक जानती है बाबू बाहर चले गये हैं।"

"अपनी ही आँखों से मैंने देखा है। कैसी हड़बड़ी कर रहे थे। टोपी ले जाना भूल ही गये।"

आज यह बात पहली बार हुई। सबेरे का फूल पाने का मेरा जो हक है उसके मिलने में नागा हुआ। दिन पर दिन यह नागा बढ़ता जायगा। अन्त में मैं जा पड़ूँगी अपनी गृहस्थी के कूड़े-खाने में, जहाँ बुझे हुए जले कोयले की जगह है।"

सरला को आते देखकर आया मुँह घुमाकर चली गयी।

सरला घुस आयी कमरे में। उसके हाथ में एक 'अरकिड' था। फूल था सफेद, पँखड़ी के सिर पर बैंगनी रंग की रेखा थी, मानो बड़ी तितली आँख खोले हुए हो। सरला थी छरहरी लम्बी, साँवला रंग था, उसकी बड़ी-बड़ी उज्ज्वल करुण आँखें पहले ही दिखाई पड़ती थीं। वह मोटी खादी की साड़ी पहने हुए थी, बाल लापरवाही से बँधे हुए थे जो बन्धन ढीला होने के कारण कंधों की पर झुके हुए थे और उसके सजावट-विहीन शरीर ने यौवन के समागम को अनादृत कर रखा है।

नीरजा ने उसके मुँह की तरफ देखा ही नहीं। सरला ने धीरे-से फूल को बिछौने पर उसके सामने रख दिया।

नीरजा ने विरक्ति का भाव छिपाये बिना ही कहा—किसने लाने को कहा?

"आदित भैया ने।"

"स्वयं आये नहीं क्यों?"

दूकान पर चाय पीने के पश्चात् तुरन्त ही न्यूमार्केट को

दूकान पर झटपट चला जाना पड़ा।"

"इतनी हड़बड़ी किसलिए।"

"कल रात को आफिस का ताला तोड़कर चोरी हो जाने की खबर आयी है।"

"खींचातानी करके क्या पाँच मिनट भी समय नहीं दे सकते थे।"

"कल रात को तुम्हारी पीड़ा बढ़ गयी थी। भोर के समय तुम सो गयी थी। दरवाजे के पास तक आकर लौट गये। मुझसे कहते गये, दोपहर के पहले ही यदि स्वयं न आ सकें, तो तुमको मैं यह फूल अवश्य दे जाऊँ।

दिन का काम आरम्भ करने के पहले ही आदित्य प्रतिदिन विशेष रूप से चुना हुआ एक फूल स्त्री के बिछौने पर रख जाता था, नीरजा उसकी प्रतीक्षा करती रहती थी। आज के दिन का विशेष फूल आदित्य सरला के हाथ में दे गया। यह बात उसके ख्याल में नहीं आया कि फूल देने का प्रधान मूल्य अपने हाथ से देने में है। गंगा-जल होने पर भी पाइप के भीतर से आने पर उसकी महत्ता नहीं रहती।

नीरजा ने फूल को अवज्ञा के साथ हटा देने के बाद कहा—"जानती हो मार्केट में इस फूल का दाम कितना है? भेज दो वहीं पर, झूठमूठ नष्ट करने की क्या जरूरत है।"

यह कहते-कहते उसका गला भारी हो आया।

सरला समझ गयी इस मामले को। समझ गयी कि उत्तर देने से आक्षेप का वेग बढ़ेगा ही, घटेगा नहीं। वह चुपचाप खड़ी रही। थोड़ी देर बाद निरर्थक ही नीरजा ने पूछा—"इस फूल का नाम जानती हो?"।

यह कहने से ही हो जाता कि 'नहीं जानती, किन्तु मालूम

होता है कि उसके अभिमान को चोट लगी, बोली—"एमरिलिस।"

नीरजा ने अनुचित क्रोध के साथ धमकाया, तुम तो खूब जानती हो! इसका नाम है गैण्डीफ़्लोरा।"

सरला ने मीठे स्वर से कहा—"हो सकता है।"

"हो सकता है का अर्थ क्या है। अवश्य ही यही है। कहना चाहती हो, मैं नहीं जानती?"

सरला यह जानती थी कि नीरजा ने जान-बूझकर ही गलत नाम बताकर प्रतिवाद किया है, दूसरों को जलाकर अपनी जलन को शान्त करने के लिए सरला चुपचाप हार मानकर धीरे-धीरे बाहर चली जा रही थी, नीरजा ने वापस बुलाया—"सुन जाओ, सवेरे से तुम क्या करती रही, कहाँ रही।'

"अरकिड के घर में।"

नीरजा ने उत्तेजित होकर कहा—"अरकिड के घर में बार-बार जाने की तुमको क्या जरूरत है।"

"पुराने अरकिड को चीरकर विभक्त करके नया अरकिड बनाने के लिए आदित् भैया मुझसे कह गये थे।"

धमकी देने के स्वर से नीरजा बोल उठी—"अनाड़ी की तरह तुम सब नष्ट कर दोगी। मैंने अपने ही हाथ से होला माली को तैयार करके सिखाया है, उसको हुकुम देने से क्या वह नहीं कर सकता था।"

इसका कोई जवाब नहीं था। इसका अकपट उत्तर यही था कि नीरजा के निरीक्षण में होला माली का काम अच्छा ही चलता था, किन्तु सरला का कहना वह बिलकुल ही नहीं मानता। यहाँ तक कि उदासीनता दिखाकर वह उसका अपमान करता रहता है।

माली इस बात को समझ गया था कि इस शासनकाल में ठीक तौर से काम न करने से ही उस शासनकाल के मालिक खुश होंगे। मानों कालेज का बायकाट करके पास न करने का मूल्य ही डिग्री पा लेने की अपेक्षा बड़ा हो गया है।

सरला क्रोध कर सकती थी, किन्तु उसने क्रोध नहीं किया। वह समझ रही थी कि भाभी जी के हृदय का भीतरी भाग दुखित हो रहा है। निःसन्तान माँ के समस्त हृदय में जो बगीचा स्थान बनाये रहा, दस वर्षों के बाद आज इतना निकट रहने पर भी उस बगीचे से उसका निर्वासन हो गया है। नेत्रों के सामने ही निष्ठुर विच्छेद हो गया है।

नीरजा ने कहा—"बन्द करो, बन्द कर दो उस खिड़की को।"

सरला ने बन्द करके पूछा—"अब नारंगी का रस ले आऊँ?"

"नहीं, कुछ भी लाने की जरूरत नहीं है, अब तुम जा सकती हो।"

सरला डरते-डरते बोली—"मकरध्वज खाने का समय हो गया है।"

"नहीं, जरूरत नहीं है मकरध्वज की। तुम्हारे लिए बगीचे की और कोई फरमाइश है क्या।"

गुलाब की डालें रोपनी पड़ेंगी।"

नीरजा ने कुछ व्यंग से कहा—"उसका समय शायद यही है। यह राय तुमको किसने दी है सुनूँ तो।"

सरला ने मीठे स्वर से कहा—"मुफस्सिल से अचानक आर्डर आये हैं, यह देखकर वे किसी तरह आगामी वर्षा के पहले ही अधिकाधिक पौधे तैयार कर देने का प्रण कर चुके हैं। मैंने मना किया था।"

"मना किया था क्या ! अच्छा, अच्छा, बुला दो होला माली को।"

आ गया होला माली। नीरजा ने कहा—"बाबू बन गये हो ? गुलाब की डाल रोपने में हाथ में काँटा चुभता है। बहिनजी तुम्हारी असिस्टैण्ट माली हैं क्या ? बाबू के शहर से लौट आने के पहले ही जितना सामर्थ्य हो डाल रोप देना, आज तुमको छुट्टी नहीं है, कहे देती हूँ। झील के दायें किनारे की जली हुई घास-पत्तियों के साथ बालू मिलाकर झील के बायें किनारे जमीन तैयार कर लेना।

नीरजा ने मन ही मन निश्चय कर लिया कि यहीं सोये-सोये ही गुलाब के पौधे वह तैयार कर डालेगी। होला माली को अब छुटकारा नहीं है।

एकाएक होला प्रश्रय की हँसी से प्रसन्न होकर बोला—"भाभी, यह है एक पीतल का लोटा। कटक के हरसुन्दर माइती का बनाया हुआ है। इस चीज की दर्द तुम्हीं समझोगी। तुम्हारी फूलदानी इससे खूब अच्छी बन जायगी।"

नीरजा ने पूछा—"इसका दाम कितना है ?"

जीभ काटकर होला ने कहा—"ऐसी बात मत कहो। इस लोटे का फिर दाम ! मैं ठहरा गरीब आदमी, इसी कारण छोटा आदमी तो नहीं हूँ। तुम्हारा ही खा-पीकर तो आदमी बना हूँ।

लोटे को तिपाई पर रखकर दूसरी फूलदानी से फूल लेकर सजाने लगा। अन्त में जाने को तैयार होकर फिर घूमकर खड़ा होकर बोला—"तुमको मैंने बता दिया था कि मेरी भानजी का विवाह है। बाजूबन्द की बात भूल मत जाना भाभी। पीतल का गहना यदि दूँगा तो तुम्हारी ही निन्दा होगी। इतने बड़े घर का माली है, उसी के घर ब्याह पड़ा है, देश भर के लोग

देख रहे हैं।"

नीरजा ने कहा, "अच्छा, तुझे डरने की कोई बात नहीं है, तू अब चला जा।"

होला चला गया। नीरजा हठात् करवट बदल कर तकिये पर माथा रखकर मन मसोसकर बोल उठी—"रोशनी, रोशनी, मैं छोटी बन गयी हूँ, उस होला माली की ही तरह मेरा मन हो गया है।"

आया बोली, "यह तुम क्या कह रही हो बच्ची, छिः छिः।"

नीरजा आप ही आप कहने लगी, "मेरा फूटा हुआ भाग्य है, मुझे बाहर से उतार दिया है, फिर भीतर से भी उतार दिया क्यों। क्या मैं नहीं जानती कि आज होला मुझे किस दृष्टि से देख रहा है। मुझसे मेल मिलाकर हँसते-हँसते पुरस्कार लेकर चला गया। बुला दे। अच्छी तरह उसे धमका दूँगी। उसकी शैतानी हटानी पड़ेगी।"

आया जब होला को बुलाने के लिए उठ पड़ी तो नीरजा ने कहा—रहने दो, रहने दो आज रहने दो।

३

कुछ देर बाद उसका चचाजात देवर रमेन आकर बोला, "भाभी, भैया ने भेजा है। आज आफिस में काम की भीड़ है; होटल में खायँगे, लौटने में देर होगी।"

नीरजा ने हँसकर कहा—खबर देने का बहाना करके एक ही दौड़ में तुम चले आये हो बबुआ जी। क्यों, आफिस का बेहरा मर गया है शायद।

"तुम्हारे पास आने में तुम्हारे सिवा दूसरे बहाने की क्या जरूरत है भाभी। बेहरा क्या समझेगा इस दूतत्व का गौरव।"

"अजी, मिठाई बिखेर रहे हो अनुचित स्थान में। इस घर

में किस भूल से आये हो। तुम्हारी मालिनी है एकाकिनी निकुंज वन में। जाकर देख लो।"

"कुञ्ज वन की वन-लक्ष्मी को पहले दर्शन दे दूँ, उसके बाद मालिनी की खोज में जाऊँगा।" यह कहकर जेब से एक कहानी की किताब निकालकर उसने नीरजा के हाथ में दे दी।

नीरजा ने प्रसन्न होकर कहा—'अश्रु शिकल'—यही पुस्तक मैं चाहती थी। आशीर्वाद देती हूँ, तुम्हारे मालञ्च की मालिनी चिर दिन हृदय के पास हँसी की जंजीर से बँधी रहे। वही जिसको तुम कहते हो अपनी कल्पना का साथी, अपनी स्वप्न-संगिनी! कैसा सोहाग है जी!

रमेन ने हठात् कहा, "अच्छा भाभी, एक बात मैं पूछता हूँ। ठीक उत्तर देना।"

"कौन बात।"

"सरला के साथ आज क्या तुम्हारा झगड़ा हो गया है?"

'क्यों बताओ तो?'

"मैंने देखा, झील के किनारे घाट पर वह चुपचाप बैठी हुई है। स्त्रियों का मन तो पुरुषों की भाँति कामचोर उड़ने-भागनेवाला नहीं है। ऐसी बेकार दशा मैंने किसी दिन सरला की नहीं देखी थी। मैंने पूछा, 'मन किस तरफ है।' उसने कहा, "जिस तरफ गरम हवा सूखी पत्तियों को उड़ाती रहती है उसी तरफ है।" मैंने कहा—'यह तो हुई पहेली। स्पष्ट भाषा में बातें करो।' उसने कहा, "सभी बातों में ही भाषा मौजूद है?" फिर मैंने देखा वही पहेली। तब मुझे गाने की वह कड़ी याद आ गयी—'दिल दुखाया है किसकी बातों ने?"

"हो सकता है कि तुम्हारे भैया के वचन ने।"

"हो ही नहीं सकता। भैया तो पुरुष हैं। वह केवल तुम्हारे

उन मालियों को डाँट सकता है। किन्तु 'पुष्पराशाविवाग्निः', यह भी क्या सम्भव हो सकता है।"

'अच्छा, निरर्थक बातें कहने की जरूरत नहीं है। एक काम की बात मैं कहता हूँ, मेरा अनुरोध रखना ही पड़ेगा। दुहाई तुम्हारी, सरला से तुम ब्याह कर लो। सयानी अविवाहित लड़की का उद्धार करना महापुण्य है।'

'पुण्य का लोभ मैं नहीं रखता, किन्तु उस कन्या का लोभ रखता हूँ, यह बात मैं तुमसे शपथ करके कह रहा हूँ।'

'तो इस हालत में बाधा कहाँ रही। क्या उसका मन नहीं है।'

'यह बात मैंने पूछी भी नहीं। मैंने कहा तो है कि मेरी कल्पना की ही संगिनी बनी रहेगी, गृहस्थी की संगिनी न बनेगी।'

हठात् तीव्र आग्रह के साथ नीरजा ने रमेन का हाथ पकड़कर कहा, 'क्यों न बनेगी, बनना ही पड़ेगा। मरने के पहले मैं तुम लोगों का ब्याह देखूँगी जरूर, नहीं तो चुड़ैल बनकर तुम लोगों को जला-जलाकर परेशान करती रहूँगी, कहे देती हूँ।'

नीरजा की व्यग्रता देखकर रमेन आश्चर्यान्वित होकर कुछ देर तक उसके मुख की ओर देखता रहा। अन्त में सिर हिलाकर कहा—'भाभी, मैं सम्पर्क में छोटा हूँ, किन्तु उम्र में बड़ा हूँ। बहती हुई हवा में निकम्मे पौधों के बीज उड़कर चले आते हैं, प्रश्रय पाने पर उनकी जड़ें फैलती हैं, फिर उसके बाद उसको उखाड़ने की सामर्थ्य किसे रहती है।'

'मुझे उपदेश देना न पड़ेगा। मैं तुम्हारी गुरुजन हूँ, तुमको उपदेश दे रही हूँ, ब्याह करो। देर मत करो। इस फागुन महीने में अच्छा दिन है।'

'मेरे पञ्चांग में तीन सौ पैंसठ दिन अच्छे हैं। किन्तु यदि

चिन्ह हैं भी तो रास्ता नहीं है। मैं एक बार जेल में गया था और अब भी हूँ उसी पथ का पथिक। उस पथ का पथिक होने के कारण मेरा कोई वश नहीं है।'

'आजकल की लड़कियाँ ही शायद जेलखाने से डरती हैं ?'

'भले ही वे न डरती हों, किन्तु सप्तपदी गमन का रास्ता तो वह नहीं हैं। उस रास्ते में वहू को अपने पास न रखकर मन में रखने से बल प्राप्त होता है। वह रह गयी है सब दिन के लिए मेरे मन में।'

हारलिक्स के दूध का बर्तन तिपाई पर रखकर सरला चली जा रही थी। नीरजा ने कहा—जाओ मत, सुनो सरला। यह फोटोग्राफ किसका है। पहचान सकती हो ?'

सरला ने कहा—यह तो मेरा है।

'यह तुम्हारे पहले के दिनों का चित्र है। जबकि अपने बड़े बाबाजी के यहाँ तुम दोनों बगीचे का काम करते थे। देखने से मालूम होता है कि अवस्था पन्द्रह की होगी। मराठी स्त्रियों की तरह कछनी काछकर साड़ी पहिने हुए है।'

'इसको तुम कहाँ से पा गयी ?'

'मैंने इसे उनके एक डेस्क में देखा था, उस समय मैंने इसे अच्छी तरह लक्ष्य नहीं किया था। आज वहाँ से मँगवा लिया है। बबुआजी, उस समय से अब सरला देखने में और भी बहुत अच्छी हो गयी है। तुमको क्या जान पड़ता है।'

रमेन ने कहा—उस समय क्या कोई भी सरला कहीं थी। कम से कम मैं तो उसे जानता नहीं था। मेरे सामने तो इस समय की सरला ही एकमात्र सत्य है। तुलना करने जाऊँ किसके साथ।

नीरजा बोली—उसका आजकल का चेहरा हृदय के किसी

एक रहस्य में घनीभूत होकर भर उठा है—मानो जो मेघ था सफेद, उसके भीतर से आज सावन का जल झरना चाहता है—इसी को तुम लोग रोमाण्टिक कहा करते हो, ठीक है न बबुआजी।

सरला जाने को तैयार हुई; नीरजा ने उससे कहा—सरला जरा बैठो। बबुआजी, एक बार पुरुष नेत्र से सरला को देख लूँ। सबसे पहले उसकी क्या चीज दृष्टि में पड़ती है बताओ तो।

रमेन ने कहा—सब कुछ एक साथ हां। मुझे तो उसकी आँखों की गम्भीरता सबसे अधिक आकर्षित करती है। नहीं, उठना मत सरला। और थोड़ी देर बैठो। इसका शरीर भी कैसा सुन्दर सुगठित है।

'तुम क्या इसका नीलाम करने के लिए बैठी हुई हो भाभी। जानती ही तो हो, इतने में ही मेरे उत्साह में कोई कमी नहीं है।'

नीरजा दलाली के उत्साह से बोल उठी—'बबुआजी, देखो तो, सरला के दोनों हाथ, जैसे बलिष्ठ हैं, वैसे ही सुगठित कोमल हैं, वैसी ही उनकी सुघराई भी है। ऐसा कहीं और तुमने देखा है?

रमेन हँसकर बोला, 'और कहीं मैंने देखा है या नहीं, इसका उत्तर तुम्हारे मुँह के सामने कहा सुनाई पड़ेगा।'

'ऐसे दोनों हाथों पर तुम अपना दावा न करोगे?'

'चार दिन का दावा भले ही न कर सकूँ, क्षण-क्षण पर दावा तो करता ही रहता हूँ। तुम्हारे घर जब चाय पीने के लिये आता हूँ, तब चाय की अपेक्षा कुछ अधिक करामात उन्हीं हाथों से पा जाता हूँ। उस रस ग्रहण करने में पाणिग्रहण करने का जितना सम्बन्ध रहता है। इस अभागे के लिए उतना ही यथेष्ट है।'

सरला मोढ़े को छोड़कर खड़ी हो गयी। कमरे से बाहर निकलने को तैयार होते ही रमेन ने दरवाजा रोककर कहा—एक वचन दो, तभी रास्ता छोड़ूँगा।

'क्या, कहो।'

'आज है शुक्ला चतुर्दशी। मैं मुसाफिर बनकर तुम्हारे बगीचे में आऊँगा, यदि कोई बात रहेगी, तो भी कहने की जरूरत ही न पड़ेगी। अकाल पड़ गया है, भरपेट देखने को ही नहीं मिलता। एकाएक इस कमरे में मुष्टिभिक्षा की तरह देखना मुझे मंजूर नहीं है। आज तुम्हारे पेड़ों के नीचे खूब अच्छी तरह रहकर अपने मन को भर लेना चाहता हूँ।'

सरला ने सहज गले से ही कहा—अच्छा, तुम आ जाना।

रमेन ने खटिये के पास वापस आकर कहा—तो अब जा रहा हूँ भाभी।

'अब रहने की जरूरत ही क्या है। भाभी का जो काम था, वह तो पूरा हो ही गया।'

रमेन चला गया।

४

रमेन के चले जाने पर नीरजा अपने हाथों के नीचे मुँह छिपाकर पड़ी रही। सोचने लगी—मनको मस्त बना रखनेवाला ऐसा दिन उसका भी था। वसन्त की कितनी ही रातों को उसने मस्त बना दिया था। संसार की बारह आना स्त्रियों की भाँति वह क्या पति की घर-गृहस्थी की चीज थी? बिछौने पर लेटी-लेटी केवल यही याद पड़ती है। कितने ही दिन उसके पति उसके केशों को पकड़कर कहते थे—'मेरे रंगमहल की साकी।' दस वर्षों में रंग कुछ भी म्लान नहीं हुआ है, प्याला भरा हुआ था। मेरे पति मुझसे कहा करते थे, 'पुराने जमाने में स्त्रियों के

पैरों से छू जाने पर अशोकवृक्ष पर फूल लग आते थे, मुखमदिरा की छिटक पड़ जाने से बकुल फूल खिल जाते थे, मेरे बगीचे में कालिदास का वही युग आ गया है। जिस पथ में रोज तुम्हारे कदम पड़ते हैं, उनके ही दोनों तरफ रंगबिरंगे फूल खिल जाते हैं, बसन्त की हवा में मदिरा फैला दी है, गुलाब के बगीचे में उसका नशा लग गया है।' बात ही बात में वे कहा करते थे—'तुम्हारे न रहने पर इस फूलों के स्वर्ग में बनिये की दुकान वृत्रासुर बनकर इसपर अपना दखल जमा लेती। मेरे सौभाग्य के प्रभाव से तुम नन्दनवन की इन्द्राणी बनी हुई हो।' हाय रे, यौवन तो आजतक भी खतम नहीं हुआ है, किन्तु उसकी महिमा चली गयी है। इसीलिए तो इन्द्राणी आज अपने आसन को पूरा करने में समर्थ नहीं हो रही है। उस दिन उसके मन में कहीं भी क्या लेशमात्र भी भय था। वह जहाँ थी, वहाँ और कोई भी नहीं था, अपने आकाश में वह प्रातःकाल के सूर्योदय की भाँति बिलकुल ही अकेली थी। आज कहीं पर जरा भी परछाईं देखते ही उसकी छाती काँपने लगती है, अपने ऊपर अब भरोसा नहीं है। नहीं तो कौन है वह सरला और किस-लिए है उसका गर्व। आज उसे लेकर भी मेरा मन सन्देह से हिल रहा है। कौन जानता था कि दिन समाप्त होने के पहले ही भाग्य में इतना दैन्य उत्पन्न हो जायगा। इतने दिनों तक लगातार इतना सुख और गौरव देकर अन्त में विधाता ने इस तरह चोर की भाँति जो कुछ दिया था उसे छीन लिया।

'रोशनी, सुन जा।'

'क्या बच्ची।'

'तुम्हारे जमाई बाबू किसी समय मुझे रंगमहल की रंगिनी कहकर पुकारते थे। हमारा ब्याह हुए दस वर्ष बीत चुके हैं यह

रंग तो अभी तक फीका नहीं हुआ है। किन्तु वह रंग-महल जायगा कहाँ, तुम्हारा रंगमहल तो है ही। कल सारी रात तुम सोयी नहीं, जरा सो रहो तो, पैरों पर हाथ सहला दूँ।'

'रोशनी आज तो संभवतः पूर्णिमा ही है। कितनी ही चाँदनी रातों में मैं सोयी नहीं। हम दोनों मिलकर बगीचे में घूमते रहे। वह जगह एक थी और यह भी है एक जगह। आज यदि सो सकूँ तो समझूँगी कि जान बच गयी। किन्तु उचटी हुई नींद तो आना ही नहीं चाहती।'

'जरा चुपचाप पड़ी रहो न, नींद आप ही आ जायगी।'

अच्छा, क्या वे लोग चाँदनी रात में बगीचे में घूमते हैं?

मैंने उन्हें 'सवेरे के चालान के लिए फूल काटते देखा है। घूमेंगे कब, समय कहाँ है!'

सब माली आजकल खूब सोते हैं। तब तो शायद मालियों को जान-बूझकर जगाते नहीं हैं?'

'तुम नहीं हो, ऐसी दशा में उनके शरीर पर हाथ रखने की सामर्थ्य किसमें है?'

'यह क्या, उसी गाड़ी की तो आवाज जान पड़ रही है?'

'हाँ बाबू की वही गाड़ी आ गयी।'

'छोटे आईने को इधर ला दे। फूलदानी से बड़ा गुलाब ले आ। सेफ्टी पिन का बकस कहाँ है देखूँ तो। आज मेरा मुख बहुत ही पीला पड़ गया है। तू इस कमरे से चली जा।'

'जा रही हूँ, किन्तु दूध बार्ली पड़ा हुआ है, खा लो मेरी लक्ष्मी।'

'पड़ा रहने दो, नहीं खाऊँगी।'

'आज दो खुराक दवा तुमसे पी नहीं गयी।'

'तुझे बकवाद करने की जरूरत नहीं है। कहती हूँ तू

चली जा। उस खिड़की को खोलकर जा।'

आया चली गयी।

टन-टन करके तीन बज गये। धूप का रंग लाल हो चला है। छाया पूरब तरफ झुक गयी है, हवा दक्खिन से आ रही है, झील का पानी झर-झर कर रहा है। माली अपने काम में लग गये हैं। नीरजा दूर से जितना देख सकती है, उतना देख रही है।

आदित्य द्रुत गति से दौड़ता हुआ कमरे में आ गया। बसन्ती रंग के लैबरनम फूलों की मंजरी से हाथ भरा हुआ है। उसी से उसने नीरजा के पैरों के पास की जगह ढक दी। बिछौने पर बैठते ही उसका हाथ दबाकर वह बोला—'आज कितनी देर से तुमको मैंने नहीं देखा नीरू।'

यह सुनकर नीरजा अब स्थिर न रह सकी, फूल-फूलकर रोने लगी। आदित्य खटिया से उतर पड़ा, फर्श पर घुटने टेक-कर बैठ गया, नीरजा का गला जकड़कर उसके भींगे हुए गाल को चूमकर बोला, 'मन ही मन तुम खूब ही जानती हो कि मेरा कोई दोष नहीं था।'

'इतने निश्चित रूप से किस तरह मैं जानूँगी। बताओ तो। मेरा क्या अब वही पहले का दिन है।'

'दिन की बातों का हिसाब लगाने से क्या होगा। तुम तो मेरी वही तुम ही हो।'

'आज तो मुझे सभी बातों में डर लगता है। मन में मुझे बल नहीं मिलता है।'

'थोड़ा सा डरते रहने से अच्छा लगता है। ठीक है न? अपने व्यंग से मुझे जरा उकसा देना चाहती हो। यह चातुरी ... के लिए स्वभाव-सिद्ध है।'

'और भूल जाना शायद पुरुषों का स्वभाव-सिद्ध नहीं है।'

'भूल जाने की फुरसत ही तुम कब देती हो ?'

'बोलो मत; बोलो मत; बीहड़ विधाता के शाप से लम्बी फुरसत तो दे ही चुकी हूँ ।'

'तुमने यह उलटी बात कही है । सुख का दिन भूल जाता है, व्यथा का दिन नहीं ।'

'सच बताओ, आज सबेरे क्या तुम भूलकर नहीं चले गये थे ?'

'कैसी बात तुम कहती हो । चला जाना पड़ा था, किन्तु जब तक मैं लौटा नहीं, तब तक मन में शान्ति नहीं थी ।'

'किस तरह तुम बैठे हुए हो । अपने दोनों पैर बिछौने पर उठाकर बैठो ।'

'बेड़ी पहना देना चाहती हो शायद, कहीं भाग न जाऊँ ?'

'हाँ, बेड़ी ही पहना देना चाहती हूँ । जन्म में, मृत्यु में तुम्हारे दोनों चरण निस्संदेह मेरे पास बँधे हुए रहेंगे ।'

बीच बीच में कुछ कुछ सन्देह करती रहती हो, इससे आदर का स्वाद बढ़ जाता है ।'

'नहीं, जरा भी सन्देह नहीं । जरा भी नहीं । तुम्हारे समान पति किस स्त्री को मिला है । तुम्हारे ऊपर भी सन्देह, इससे तो मुझे ही धिक्कार मिलेगा ।'

'तब तो मैं ही तुमपर सन्देह करूँगा, नहीं तो नाटक जमेगा ही नहीं ।'

'यही करो, कोई भय नहीं है । यह हो जायगा प्रहसन ।'

'जो कुछ भी कहो, किन्तु आज तुमने मेरे ऊपर क्रोध किया था ।'

'क्यों फिर वही बात । तुमको सजा न देनी पड़ेगी—अपने ही अन्दर उसका दण्डविधान मौजूद है ।'

'दण्ड किसलिए ? क्रोध का ताप यदि बीच-बीच में न दिखाई पड़े, तो मैं यही समझूँगा कि प्रेम की नाड़ी अलग हो गयी है।'

'यदि किसी दिन भूल से तुम्हारे ऊपर मैं क्रोध करूँ, तो निश्चय जान लेना, मैं वह नहीं हूँ, कोई भूत-प्रेत मेरे ऊपर सवार है।'

हम सभी पर एक न एक प्रेत रहता ही है, बीच बीच में अकारण ही परिचय देता है। यदि सुबुद्धि आ जाती है, तो रामनाम जपने लगते हैं, वह भाग खड़ा होता है।'

आया कमरे में आ गयी। बोली—'जमाई बाबू, आज सबेरे से ही बच्ची ने दूध नहीं पिया, दवा नहीं पी, मालिश नहीं करायी। ऐसा करने से तो काम न चलेगा।'

यह कहकर ही हाथ हिलाती हुई वह चली गयी।

सुनते ही आदित्य खड़ा हो गया; बोला—अब मैं क्रोध करूँगा।

हाँ करो, खूब क्रोध करो, जितना कर सको उतना क्रोध तुम करो—मैंने अन्याय किया है—किन्तु उसके बाद क्षमा कर देना।

आदित्य दरवाजे के पास जाकर पुकारने लगा—सरला, सरला!

सुनते ही नीरजा की रग-रग मानो झन् झन् कर उठा। समझ गयी, लगाये हुए काँटे पर हाथ पड़ गया है। सरला कमरे में आ गयी। आदित्य ने रंज होकर पूछा—नीरू को तुमने आज दवा नहीं दी, दिन भर कुछ खाने को भी नहीं दिया गया?

नीरजा बोल उठी—उसको झिड़क रहे हो क्यों। उसका

दोष क्या है मैंने ही दुष्टता करके दवा नहीं पी। मुझे ही झिड़को न। सरला, तुम जाओ। झूठमूठ खड़ी रहकर झिड़की क्यों खाओगी।

'जायगी क्यों, दवा निकालकर दे। हरलिक्स तैयार करके लावे।'

'ओह! दिन भर उसको माली के काम में लगाकर मार डालते हो, उसके ऊपर फिर नर्स का काम क्यों? तुम्हारे मन में जरा भी दया नहीं आती। आया को बुलाओ न।'

'आया क्या अच्छी तरह यह काम कर सकेगी?'

'कौन बड़ा भारी काम है, खूब कर सकेगी, और अच्छी तरह ही कर सकेगी।'

'किन्तु—'

'किन्तु किसलिए। आया! आया!'

'इतना उत्तेजित मत हो जाओ। देख रही हूँ एक विपद् ढहा दोगे।'

'मैं आया को बुला देती हूँ,'—यह कहकर सरला चली गयी। नीरजा की बात का प्रतिवाद करने की कोई बात भी उसके मुँह से नहीं निकली। आदित्य भी मन ही मन आश्चर्य में पड़ गया; सोचने लगा, सचमुच ही क्या सरला से अनुचित रूप से काम कराया जा रहा है।

औषधि पथ्य हो जाने पर आदित्य ने आया से कहा—'सरला बहन को बुला दो।'

'बात बात में केवल सरला बहन ही, बेचारी को तुम तंग कर डालोगे, देख रही हूँ।'

'काम की बात है।'

'रहने दो तुम अभी काम की बात।'

'बहुत देर न लगेगी ।'

'सरला ठहरी स्त्री । उसके साथ इतने काम की बातें कैसी ! इससे तो अच्छा है कि होला माली को ही बुलाओ न ।'

'तुमसे ब्याह कर लेने के बाद से यह बात भलीभाँति समझ ली है कि स्त्रियाँ ही काम की हैं, पुरुष स्वभाव से ही निकम्मे होते हैं । हमलोग काम करते हैं, विवश होने पर । तुम लोग करती हो अन्तर्प्रेरणा से । इस विषय पर एक 'थीसिस' लिखने का मैंने विचार किया है । मेरी डायरी से बहुत से उदाहरण मिल जायँगे ।'

'उसी स्त्री को आज उसके कामों से वंचित कर दिया है जिस विधाता ने, उसकी मैं किन शब्दों में निन्दा करूँ । भूकम्प से हड़कम्प मचकर मेरे कामों की शृंखला छिन्न-भिन्न हो गई है, इसीलिए तो निर्जन खाली पड़े मकान में भूत का डेरा जम गया है ।'

सरला आ गयी । आदित्य ने पूछा—'अरकिड-घर का काम हो गया है ?'

'हाँ, हो गया है ।'

'सभी ।'

'सब ही ।'

'और गुलाब की कटिंग ?'

'माली उसके लिए खेत तैयार कर रहा है ।'

'खेत ! उसको तो मैंने पहले ही तैयार कर रखा है । होला माली पर तुमने भार दिया है । तब तो दातून पैदा करने की खेती ही होगी ।'

बातों में झटपट बाधा डालकर नीरजा बोली—'सरला जाओ, संतरे का रस तो तैयार करके ले आओ, उसमें जरा सा

अदरख का रस डाल देना, और मधु भी।'

सरला सिर झुकाये कमरे से बाहर चली गयी।

नीरजा ने पूछा—'आज तुम भोर में ही जाग गये थे, जैसे कि हम लोग रोज उठ जाया करते थे।'

'हाँ जाग गया था।'

'घड़ी में उसी तरह एलार्म की चाभी दी गयी थी ?'

'जरूर दी गयी थी।'

'उसी नीम वृक्ष के नीचे कटे पेड़ की धड़। उसके ऊपर चाय की सामग्री। बासू ने सब ठीक कर रखा था ?'

'कर रखा था। नहीं तो मैं तुम्हारी अदालत में नुकसान की नालिश दायर कर देता।'

'दोनों ही चौकियाँ बिछी हुई थीं ?'

'बिछी हुई थीं, पहले की तरह। और थी नीली धारीवाली बसन्ती रंग का चाय का सेट, दूध का जग था रूपा का, छोटी सफेद पत्थर की कटोरी में चीनी थी, और ड्रागन चिह्नित जापानी ट्रे था।'

'दूसरी चौकी को खाली रख दिया क्यों ?'

'इच्छापूर्वक मैंने नहीं रक्खा। आकाश में तारकाएँ गिनती में ठीक ही थीं, केवल शुक्ल पक्ष की पञ्चमी तिथि का चाँद बाहर पड़ा हुआ था। अवसर मिलता तो उसको पकड़कर घर ले आता।'

'सरला को तुम अपनी चाय की मेज पर क्यों नहीं बुलाते ?'

'इसके उत्तर में यही कहना पर्याप्त है कि, तुम्हारे आसन पर और किसी को बुलाने की इच्छा नहीं होती।' सत्यवादी ने यह न कहकर कहा—'सवेरे शायद यह जप तप करती है, मेरी तरह भजन-पूजन-हीन म्लेच्छ तो वह नहीं है।'

'चाय पी लेने के बाद आज तुम शायद उनको आरकिड-घर में ले गये थे ?'

हाँ, कुछ काम था, उसको समझा-बुझाकर तुरन्त ही दुकान पर दौड़ जाना पड़ा।'

'अच्छा, एक बात पूछती हूँ, सरला के साथ रमेन का ब्याह क्यों नहीं करा देते ?'

'ब्याह कराना क्या मेरा पेशा है ?'

'नहीं, मजाक नहीं है। ब्याह तो करना ही पड़ेगा, रमेन की तरह पात्र कहाँ पाओगे ?'

'पात्र है एक तरफ, पात्री है दूसरी तरफ। वे एक दूसरे को चाहते हैं या नहीं, यह जानने की फुरसत मुझे नहीं मिली। दूर से जान पड़ता है कि उनमें कोई खटका है।'

जरा झनकार के स्वर से नीरजा बोली—'यदि तुमको इस काम में सच्चा आग्रह रहता तो कोई खटका नहीं रहता।'

'ब्याह करेगा दूसरा ही पक्ष, सच्चा आग्रह अकेले मुझमें ही रहेगा, इससे क्या काम चलेगा, नहीं चल सकता है। तुम चेष्टा करके देखो न।'

'कुछ दिनों के लिए पेड़-पौधों से उस लड़की को छुट्टी दे दो तो समझूँ, ठीक जगह पर आप ही दृष्टि पड़ जायगी।'

'शुभ दृष्टि के प्रकाश से पेड़-पौधे पहाड़-पर्वत सभी स्वच्छ हो जाते हैं। वह एक श्रेणी का एक्टर ही तो है।'

'झूठ बोल रहे हो। असल बात यह है कि तुम्हारी इच्छा ही नहीं है कि यह विवाह हो जाय।'

'इतनी देर में ठीक बात समझ गयी हो। सरला के जाने से मेरे बगीचे की क्या दशा होगी, बताओ। लाभ-हानि के विषय पर सोचना पड़ता है। यह क्या हो गया। एकाएक तुम्हारी

पीड़ा बढ़ गयी क्या ?'

आदित्य घबड़ा गया, नीरजा ने रूखे गले से कहा—कुछ भी नहीं हुआ है। मेरे लिए तुमको अस्तव्यस्त न होना पड़ेगा।

आदित्य उठने जा रहा था, इतने में ही वह बोल उठी—हमारे ब्याह के बाद ही उस अरकिड के घर की पहले-पहल नींव पड़ी थी, उस बात को तुम भूल तो नहीं गये हो ? उसके बाद हम दोनों ने मिल जुल कर उस घर को सजा दिया है। उसको नष्ट कर देने में तुम्हारे मन में जरा भी चोट नहीं पहुँचती।

आदित्य ने आश्चर्य में पड़कर कहा—यह, कैसी बात ! नष्ट होने देने का शौक मुझमें तुमने कहाँ देख लिया ?

उत्तेजित होकर नीरजा बोली—सरला फूल के बगीचे का हाल क्या जानती है।

'यह क्या कह रही हो। सरला नहीं जानती ? जिस मौसाजी के घर मेरा पोषण हुआ था, वे ही तो सरला के बड़े चाचाजी हैं। तुम तो जानती हो, उन्हीं के बगीचे में मेरी इस विद्या का श्रीगणेश हुआ। बड़े चाचाजी कहा करते थे फूल के बगीचे का काम स्त्रियों का ही है, और गाय दुहना भी। उनके सभी कामों में वह उनकी संगिनी थी।'

'और तुम थे संगी।'

'था तो अवश्य ही। किन्तु मुझे कालेज की पढ़ाई करनी पड़ती थी, उसकी तरह ज्यादा समय मैं दे नहीं सकता था। उसको बड़े चाचाजी स्वयं पढ़ाते थे।'

'उसी बगीचे के कारण तुम्हारे मौसाजी का सत्यानास हो गया। वैसा ही उस लड़की का पौरा है। मुझे तो इसी का भय होता है। कुलच्छणी लड़की है। देखो न—मैदान की तरह ललाट

है, घोड़े की तरह कूदकर चलने की आदत है। स्त्रियों को पुरुषोचित बुद्धि अच्छी चीज नहीं है। उससे अकल्याण ही होता है।

"तुमको आज क्या हो गया है, बताओ तो नीरू। कैसी बातें कह रही हो। मौसाजी बगीचे लगाना ही जानते थे, व्यवसाय करना नहीं जानते थे। फूलों की खेती करने में वे बुद्धिहीन थे, अपना नुकसान करने में भी उनकी बराबरी का कोई नहीं था। सभी से वे नाम पाते थे, दाम नहीं पाते थे। बगीचा लगाने के लिए जब उन्होंने मूलधन के रुपये दिये थे, तब मैं क्या यह जानता था कि उनका कोष डूबने पर है। मुझे एक मात्र सान्त्वना यह है कि, उनके मरने के पहले ही मैंने सभी ऋण चुका दिया है।"

सरला संतरे का रस ले आई। नीरजा ने कहा—उसी जगह रख दो।

रखकर सरला चली गई। बर्तन पड़ा रह गया, उसने छुआ ही नहीं।

'सरला से तुमने ब्याह क्यों नहीं किया ?'

'एक बार मेरी बात सुन लो। ब्याह की बात किसी दिन याद ही नहीं पड़ी।

'याद ही नहीं पड़ी। यह शायद तुम्हारा कवित्व है।'

"जीवन में जिस दिन तुमको मैंने देखा, उसी दिन कवित्व की कला प्रकट हुई थी। उसके पहले हम दोनों जंगली एक साथ मिलकर वन की छाया में दिन बिताते रहे। अपने आपको हम भूले हुए थे। यदि मैं आधुनिक युग की सभ्यता का आदमी रहता तो उस हालत में क्या होता, कहा नहीं जा सकता।"

'क्यों सभ्यता का अपराध क्या है ?'

'वर्तमान सभ्यता दुःशासन की तरह हृदय का वस्त्र हरण कर लेना चाहती है। अनुभव प्राप्त करने के पहले ही आँख में अँगुली डालकर सावधान कर देती है। गन्ध का इशारा उसके लिए बहुत ही सूक्ष्म होता है, खबर लेती है, फूलों की पँखड़ी नोचकर।'

'सरला तो देखने में बुरी नहीं है।'

'सरला को मैं सरला कहकर ही जानता था। वह देखने में भली है या बुरी, यह बात बिलकुल ही निरर्थक है।'

'अच्छा, सच बताओ, उसको तुम प्यार नहीं करते थे?'

'अवश्य ही प्यार करता था। मैं क्या जड़ पदार्थ हूँ कि उसको प्यार न करूँगा। मौसीजी का लड़का रंगून में बैरिस्टरी करता है, उसके लिए कोई चिन्ता की बात नहीं है। उनके बगीचे को लेकर सरला रहेगी, यही उनके जीवन की साध थी। यहाँ तक कि उनको विश्वास था कि यह बगीचा ही उनके समस्त मन-प्राण को अपने अधिकार में कर लेगा, उसको ब्याह करने की गरज न रहेगी। उसके बाद वे चले गये। सरला अनाथा हो गई। पावनादारों के हाथ बगीचा बिक गया। उस दिन मेरा हृदय टूट गया था, तुमने क्या देखा नहीं था। वह तो प्यार करने की वस्तु है, उसको भला मैं प्यार न करूँगा? याद है, न किसी दिन सरला के चेहरे पर प्रसन्नता फूटी पड़ती थी। जान पड़ता था कि उसके पैरों की चाल में पक्षियों की उड़ान मौजूद है। आज वही चल रही है हृदय में भरा बोझ ढोती हुई, तो भी टूट नहीं गयी है। एक दिन के लिए भी मेरे सामने उसने लम्बी साँस नहीं ली, अपने को इसके लिए उसने अवकाश ही नहीं दिया।'

आदित्य की बातों को दबाकर नीरजा बोली—'रुको जी,

रुको, उसके बारे में तुमसे बहुत सी बातें सुन चुकी हूँ, और कुछ बोलने की जरूरत न पड़ेगी। वह है असाधारण लड़की। इसीलिए कहती हूँ उसको उस बरासत के बालिका-विद्यालय की प्रधानाध्यापिका बना दो। वे लोग तो कई बार अनुरोध कर चुके हैं।'

बरासत का बालिका-विद्यालय? क्यों, वह तो अण्डमन में भी है।'

'नहीं मजाक नहीं। सरला को अपने बगीचे का और कोई काम देना हो दे देना, किन्तु उस अरकिड घर का काम न दे सकोगे।'

'क्यों, क्या हो गया है?'

'मैं तुमको बता देती हूँ, सरला अरकिड को अच्छी तरह नहीं समझती।'

'मैं भी तुमको बता देता हूँ, मुझसे सरला अच्छा समझती है। मौसाजी का प्रधान शौक था अरकिड में। वे अपने आदमी भेजकर सेलिबिस से, जावा से, यहाँ तक कि चीन से अरकिड मँगाते रहे, उसका दर्द समझने लायक उस समय कोई आदमी नहीं था।'

इस बात को नीरजा जानती थी, इसीलिए यह बात उसके लिए असह्य थी।

'अच्छा अच्छा, खूब खूब। मान लेती हूँ मुझसे वह अधिक समझती है, यहाँ तक कि तुमसे भी अधिक, भले ही ऐसी बात हो, तो भी मैं कह रही हूँ, वह अरकिड घर केवल तुम्हारा और मेरा है, वहाँ सरला का कोई अधिकार नहीं है। अपने समूचे बगीचे को यदि तुम्हारी अत्यन्त इच्छा हो तो उसीको दे दो न; केवल बहुत ही थोड़ा सा बचा रखो जो केवल मुझे दे दिया

गया था। इतने दिनों के बाद कम से कम इतना ही दावा कर सकती हूँ। भाग्य-दोष से भले ही आज मैं शय्या पर पड़ी हुई हूँ; इसीलिए—'

बात को समाप्त न कर सकी, तकिये में मुँह छिपाकर अशान्त होकर रोने लगी।

आदित्य स्तम्भित हो गया। मानो इतने दिनों से स्वप्न में विचरण कर रहा था, ठोकर खाकर चौंक उठा। यह कैसा व्यापार है। समझ गया, यह रुलाई बहुत दिनों की है। वेदना का बवंडर नीरजा के हृदय में दिन पर दिन बढ़ता चला जा रहा था, आदित्य क्षण भर के लिए भी जान न सका था। इतना नासमझ था कि, उसने यही ख्याल किया था कि सरला बगीचे की देख-भाल करेगी तो नीरजा को प्रसन्नता होगी। विशेषतः ऋतुओं के अनुकूल हिसाब लगाकर चुने हुए फूलों की क्यारियाँ सजाने में वह अद्वितीय है। आज एकाएक उसे यह याद पड़ गया जब कि किसी उपलक्ष में सरला की प्रशंसा करके उसने कहा था, 'कामिनी का घेरा वह इतनी सुन्दरता से तैयार करती है मैं तो तैयार नहीं कर सकता, तब खूब जोरदार हँसी से नीरजा ने कहा था—'अजी उचित पावने की अपेक्षा अधिक देने से अन्त में उस आदमी का नुकसान ही होता है। आदित्य को आज वह बात याद पड़ गयी जब कि पेड़-पौधों के सम्बन्ध में किसी प्रकार सरला की कोई गलती यदि वह पकड़ लेता था तो नीरजा ठठाकर हँसती हुई उसी बात को बारबार मुखरित करने लगती थी। खूब याद पड़ गया कि अंग्रेजी पुस्तकों में ढूँढ़-ढूँढ़कर नीरजा अल्प परिचित फूलों के विचित्र नाम कण्ठस्थ कर रखती थी, फिर एक भले आदमी की तरह सरला से उनके नाम पूछती थी, जब वह नाम बताने में गलती करती, तो

उसकी हँसी का कल्लोल रुकना ही नहीं चाहता था, कहने लगती—भारी पण्डिता हो, कौन नहीं जानता कि उस फूल का नाम है कैसिया जावनिका। मेरा होला माली भी बता सकता था।

आदित्य बड़ी देर तक बैठा हुआ सोचता रहा। उसके बाद हाथ पकड़कर बोला—रोओ मत नीरू, बताओ मैं क्या करूँ। तुम क्या चाहती हो कि सरला को बगीचे के काम में न रक्खूँ?

नीरजा ने हाथ झटके से छुड़ाकर कहा—मैं कुछ नहीं चाहती, कुछ भी नहीं, वह तो तुम्हारा ही बगीचा है। तुम अपनी प्रसन्नता से जिसको भी चाहो रख सकते हो, उसमें मेरा क्या है।

'नीरू, ऐसी बात तुम कैसे कहती हो कि मेरा ही बगीचा है? तुम्हारा नहीं है? हमलोगों में यह बँटवारा कब से हो गया?'

'जब से तुम्हारे लिए विश्व के सभी पदार्थ रह गये, और मेरे लिए रह गया इसी घर का कोना। अपने इस टूटे हुए प्राण को लेकर किस जोर से तुम्हारी उस आश्चर्य-जनक सरला के सामने मैं खड़ी होऊँगी। मुझमें वह शक्ति आज कहाँ है कि तुम्हारी सेवा करूँ, तुम्हारे बगीचे का काम करूँ।'

'नीरू, तुम तो इसके पहले अनेक बार स्वयं ही सरला को बुलाती थी, उससे परामर्श लिया था। क्या याद नहीं है कि कुछ वर्ष पहले 'कागजी नीबू' के साथ 'कलम्बा' नीबू की कलम तुम दोनों ने मिल-जुलकर बाँधी थी, मुझको आश्चर्य में डाल देने के लिए।'

'उस समय तो उसको इतना घमण्ड नहीं था। विधाता ने तो आज मेरी ही तरफ अन्धकार कर दिया है, इसी कारण तो तुमको अकस्मात् यह धारणा हो गयी है कि वह इतना जानती

है, उतना जानती है, अरकिड पहचानने में मैं उसके सामने टिक नहीं सकती। उस समय तो इन बातों को मैंने किसी दिन नहीं सुना। तो फिर मेरे इस दुर्भाग्य के दिन में किसलिए हम दोनों की तुलना करने के लिए तुम आ गये। आज मैं उसके साथ बराबरी कैसे कर सकूँगी। नाप में समान हूँगी क्या लेकर।'

'नीरू, आज तुमसे यह सब जो कुछ मैं सुन रहा हूँ, इसके लिए मैं जरा भी तैयार नहीं था। मालूम हो रहा है मानो ये बातें मेरी नीरू की नहीं हैं, यह मानो कोई और ही कह रही है।'

'नहीं जी नहीं, वही नीरू है। उसकी बातें इतने दिनों में भी तुमने नहीं समझीं। यही मेरी सबसे बड़ी सजा है। ब्याह के बाद जिस दिन मैं जान गयी थी कि, तुम्हारा बगीचा, तुमको प्राणवत् प्रिय है, उसी दिन से उस बगीचे में और अपने में मैंने जरा भी भेद-दृष्टि नहीं रखी। नहीं तो तुम्हारी वाटिका के साथ मेरा भयंकर झगड़ा खड़ा हो जाता, उसको मैं सह नहीं सकती। वह बन जाती मेरी सौत। तुम तो जानते हो, मेरी दिन-रात की साधना क्या है। जानते हो किस प्रकार मैंने उसको अपने में मिला लिया है। बिलकुल ही उसके साथ एक हो गयी हूँ।'

'जानता हूँ अवश्य। मेरा सर्वस्व लेकर ही तो तुम हो।'

'इन बातों को रक्खो। आज मैंने देखा, उस बगीचे में अनायास ही दूसरे का प्रवेश हो गया। कहीं पर जरा भी व्यथा नहीं लगी। और किसी का प्राण मेरे शरीर के अन्दर चला देने के लिए तुम क्या मेरे शरीर को चीर डालने की बात कभी अपने ख्याल में ला भी सकते थे। मेरा वह बगीचा क्या मेरा शरीर नहीं है। मैं रहती तो क्या ऐसा कर सकती थी।'

'क्या करती तुम ?'

'बता दूँ मैं क्या करती ? बगीचा शायद छारखार हो जाता। व्यवसाय का दिवाला निकल जाता। एक की जगह पर मैं दस माली रख देती, किन्तु और किसी स्त्री को उसमें आने न देती, विशेषतः ऐसी किसी को जिसके मन में घमण्ड है कि वह मुझसे भी अधिक बगीचे का काम जानती है। इसी अहंकार से तुम प्रतिदिन मेरा अपमान करते रहोगे जब कि मैं आज मरने की दशा में आ गयी हूँ, जब कि अपनी शक्ति प्रमाणित करने का उपाय नहीं है ? ऐसी बात क्यों हो सकी, बता दूँ ?'

'बता दो।'

'तुम मुझसे उसको अधिक प्यार करते हो इसीलिए। इतने दिनों तक तुमने यह बात छिपा रखी थी।'

आदित्य कुछ देर तक अपने सिर के बालों में हाथ डालकर बैठा रह गया। उसके बाद विह्वल कंठ से बोला—नीरजा, दस वर्ष तक तुमने मुझे सुख में दुःख में, विभिन्न अवस्थाओं में, तरह-तरह के कामों में पहचाना है। उसके बाद भी यदि तुम आज ऐसी बात कह सकती हो तो मैं कुछ भी उत्तर न दूँगा। मैं जा रहा हूँ। निकट रहने से तुम्हारी तबियत खराब हो जायगी। फरनारी के पास जो जापानी घर है उसी स्थान पर रहूँगा। जब मेरी जरूरत पड़े, मुझे बुला लेना।

५

पोखरे के उस पार के किनारे चालता वृक्ष की ओट में चन्द्रोदय हो चुका है, पानी में घनी काली छाया पड़ी हुई है। इस पार बासन्ती वृक्ष की नवीन पत्तियाँ बच्चे की टूटी हुई नींद की आँखों की तरह लाल हैं। उसका फूल कच्चे सोने के रङ्ग का है, घनी गन्ध भारी होकर जम गयी है मानो गन्ध का कुहरा ही है। जुगनुओं का झुण्ड जारुल वृक्ष की डालियों पर जग-मग कर

रहा है। पक्के बँधे घाट की वेदी पर सरला स्तब्ध होकर बैठी हुई है। कहीं भी हवा नहीं है। पत्तियों में कम्पन नहीं है, पानी ऐसा मालूम हो रहा है, मानो काली छाया के फ्रेम से मढ़ा हुआ पालिशदार आईना ही हो।

पीछे की तरफ़ से किसी ने पूछा—मैं क्या आ सकता हूँ।

सरला ने स्निग्ध स्वर से उत्तर दिया—आओ।

रमेन घाट की सीढ़ी पर उसके पैरों के पास बैठ गया। सरला ने घबड़ाकर कहा—कहाँ बैठ गये रमेन भैया, ऊपर आ जाओ।

रमेन बोला—जानती ही हो, देवियों के वर्णन का आरम्भ होता है पद-पल्लवों से? पास में जगह रहेगी तो बाद में बैठूँगा। अपना हाथ दे दो, विलायती प्रथा के अनुसार अभ्यर्थना आरम्भ कर दूँ।

सरला का हाथ लेकर उसने चूम लिया। बोला—सम्राज्ञी का अभिवादन ग्रहण करो।

उसके बाद वह उठकर खड़ा हो गया, थोड़ा-सा अबीर लेकर उसने उसके ललाट पर लगा दिया।

'यह क्या?'

'जानती नहीं हो, आज होली का दिन है। तुम्हारे वृक्ष-वृक्ष पर डाल-डाल पर रंगों का फैलाव हो रहा है। वसन्त में मनुष्यों के शरीर पर तो रंग नहीं लगता, उनके मन में लगता है। उस रंग को बाहर प्रकट कर देना होगा, नहीं तो, हे वन-लक्ष्मी, तुम अशोकवन में निर्वासित हो जाओगी।'

'तुम्हारी बातचीत का उत्तर दे सकूँ, ऐसी उस्तादी मुझमें नहीं है।'

'बातचीत की आवश्यकता ही क्या है। पक्षी ही गाता है,

तुम मादा पक्षी चुपचाप सुनती रहोगी तो वही उत्तर स्वरूप हो जायगा। अब तुम मुझे अपने पास बैठ जाने दो।'

पास जाकर बैठ गया। बड़ी देर तक दोनों ही चुप रहे। एकाएक सरला ने प्रश्न किया—रमेन भैया, जेल में कैसे जाया जाता है, मुझको बतलाओ।

'जेल में जाने के मार्ग इतने असंख्य हैं और आजकल उनमें जाना इतना सहज हो गया है कि किस तरह जेल में नहीं जाया जाता, यही बतलाना कठिन हो उठता है। इस युग में गोरे के जुल्म ने घर में टिकने नहीं दिया।'

'नहीं, मैं मज़ाक नहीं करती, बहुत सोचकर मैंने देख लिया, मेरी मुक्ति वहीं है।'

'अच्छी तरह अपने मन की बात तुम खोलकर कह दो।'

'कह रही हूँ सब बात। यदि तुम आदित् भैया का चेहरा देख लेते तो पूरा समझ सकते थे।'

'आभास से कुछ मैंने देखा है।'

'आज तीसरे पहर बरामदे में मैं अकेली थी। अमेरिका से फूलों के पौधों का सचित्र कैटलग आया है, पन्ने उलटकर देख रही थी; नित्य तीसरे पहर साढ़े चार बजे के पहले चाय पी चुकने पर आदित् भैया मुझे बगीचे के काम में बुला लेते हैं। आज मैंने देखा कि, अन्यमनस्क होकर इधर-उधर घूम रहे हैं। माली का काम करते जा रहे हैं, उधर देख भी नहीं रहे हैं। खयाल हुआ शायद मेरे बरामदे की तरफ आ जाएँगे, दुविधा में पड़कर वे लौट गये। ऐसे कड़े आदमी हैं, लम्बे हैं, सभी तरफ सतर्क दृष्टि रखते हैं, कड़े मालिक होते हुए भी मुँह पर क्षमा की हँसी रहती है, आज उस मनुष्य की वह चाल नहीं है, बाहर वह दृष्टि नहीं है, न मालूम मन के अन्दर कहाँ डूबे

हुए हैं। बहुत देर के बाद वे धीरे-धीरे पास आ गये। दूसरा दिन होता तो उसी क्षण हाथ की घड़ी को दिखाकर कहते—समय हो गया है, मैं भी उठ पड़ती। आज वह बात न कहकर धीरे-धीरे मेरे निकट चौकी खींचकर बैठ गये। बोले—कैटलग देख रही हो शायद? मेरे हाथ से कैटलग लेकर वे पन्ने उलटने लगे। कुछ भी उन्होंने देखा, ऐसा मुझे मालूम नहीं हुआ। अकस्मात् एक बार उन्होंने मेरे चेहरे की तरफ देखा, मानो प्रतिज्ञा कर ली कि अधिक देर न करके इसी क्षण कुछ कह देना ही चाहिए। फिर उसी क्षण पन्ने की तरफ आँखों को झुकाकर बोले—तुमने देखा है सरला, कितना बड़ा नैस टर्शियम् है?' गले में गहरी थकावट थी। उसके बाद बड़ी देर तक कोई बात ही न बोले, पन्ने उलटते रहे। फिर एक बार उन्होंने मेरे मुँह की तरफ देखा, देखते ही झटपट पुस्तक बन्द करके मेरी गोद पर उसको फेंककर उठ पड़े। मैंने कहा—बगीचे में जाओगे नहीं? आदित् भैया ने कहा—नहीं, बाहर जाना पड़ेगा, काम है। यह कहकर ही झटपट मानो अपने को छुड़ाकर चले गये।

'आदित् भैया तुमसे क्या कहने के लिए आये थे, तुम क्या अनुमान करती हो?'

'वे कहने आये थे, पहले ही उजड़ गया है तुम्हारा एक बगीचा; इस बार हुकुम आया है, तुम्हारे भाग्य में और एक बगीचा उजड़ जायगा।'

'यदि ऐसी ही घटना हो जाय सरला, तब तो जेल में जाने की मुझे स्वाधीनता न रहेगी।'

सरला ने मलिन हँसी हँसकर कहा—तुम्हारा वह रास्ता क्या मैं बन्द कर सकती हूँ। सम्राट बहादुर स्वयं खुला रखेंगे।

'तुम वृन्तच्युत होकर रास्ते में पड़ी रहोगी, और मैं जंजीर

की झनकार से लोगों को अपनी ओर आकृष्ट करता हुआ जाऊँगा जेलखाने में ! यह क्या कभी हो सकता है। इस हालत में तो इस समय से मुझे इसी उम्र में भला आदमी बनना सीखना होगा।

'क्या करोगे तुम ?'

'तुम्हारे अशुभ ग्रह के साथ युद्ध-घोषणा कर दूँगा। जन्मपत्री से उसको निकाल बाहर करूँगा। उसके बाद लम्बी छुट्टी पाऊँगा, यहाँ तक कि कालापानी के उस पार तक।'

'तुमसे मैं कुछ भी छिपा नहीं सकती। एक बात कुछ दिनों से मेरे सामने स्पष्ट हो चुकी है। आज उसको मैं तुमसे कहूँगी, कुछ खयाल मत करना।'

'न कहोगी तो खयाल करूँगा।'

'बचपन से आदित् भैया के साथ रहकर बड़ी हुई हूँ। भाई बहिन की तरह नहीं, दो भाइयों की तरह। अपने ही हाथों से दोनों व्यक्ति मिट्टी खोदते थे, पेड़ काटते थे। बड़ी माँ और मेरी माँ दो तीन दिनों के अन्तर में एक के बाद एक करके टाय-फायड से मर गयीं, मेरी अवस्था उस समय छः वर्ष की थी। बाबूजी की मृत्यु उसके दो वर्ष बाद हुई। बड़े चाचाजी की बड़ी साध थी कि, मैं ही अपने परिश्रम से उनके बगीचे को बचा रखूँगी। इसी प्रकार उन्होंने मुझको तैयार किया था। किसी पर वे अविश्वास करना नहीं जानते थे। जिन मित्रों को उन्होंने रुपये उधार दिये थे, वे चुकता करके बगीचे की जिम्मे-दारी से बरी कर देंगे, इसमें उनको सन्देह नहीं था। चुकता किया है केवल आदित् भैया ने, और किसी ने भी नहीं। यह वृत्तांत शायद तुम कुछ कुछ जानते हो, तो भी आज सभी बातें जड़ से कहने की इच्छा हो रही है।'

'सभी फिर मुझे नयी सी लग रही हैं।'

उसके बाद जानते ही हो एकाएक सब कुछ ही डूब गया। जब बाढ़ से किनारे उठाकर लायी गयी, तब फिर एक बार आदित् भैया के पास पहुँचकर मेरा भाग्य ठहर गया। उसी प्रकार मैं मिल गयी—हम दो भाई हैं, हम दो मित्र हैं। उसके बाद से मैं आदित् भैया के आश्रय में हूँ, यह भी जैसा सच है, उनको मैंने आश्रय दिया है यह भी वैसा ही सच है। उसमें मेरी ओर से कुछ कमी नहीं हुई है, यह बात मैं जोर देकर कह सकती हूँ। इसीलिए मेरी ओर से संकोच करने का जरा भी कारण नहीं है। इसके पहले जब मैं एक साथ थी, तब हमलोगों की जो उम्र थी, उसी उम्र को लेकर ही मैं वापस आ गयी। इसी प्रकार चिरकाल व्यतीत हो सकता था। अधिक कहकर क्या होगा?'

'बात को खतम कर डालो।'

'एकाएक मुझे धक्का लगाकर मुझे यह क्यों जनाया कि मेरी उम्र हो गयी है। जिन दिनों की ओट में एक साथ काम किया है, उन दिनों का आवरण एक ही क्षण में हट गया है। तुम सब कुछ अवश्य ही जानते हो रमेन भैया, मेरा कुछ भी तुम्हारी दृष्टि में छिपा नहीं है। अपने ऊपर भाभीजी का क्रोध देखकर मुझे पहले पहल भारी आश्चर्य हुआ था। किसी तरह भी मैं समझ न सकी थी। इतने दिनों तक अपने ऊपर दृष्टि नहीं पड़ी थी। भाभी के विरागरूपी अग्नि के प्रकाश में अपने को मैंने देख लिया, स्वयं अपनी ही पकड़ में आ गयी। मेरी बातें समझ रहे हो क्या?'

'तुम्हारा बचपन का नीचे डूबा हुआ प्रेम हिल जाने से ऊपर की सतह पर उतरा गया है।'

'मैं क्या करूँ बताओ। अपने पास से स्वयं ही भाग जाऊँ

किस तरह ?' यह कहते कहते रमेन का हाथ उसने दबा दिया।

'रमेन चुप हो रहा। फिर उसने कहा—जितनी देर तक यहाँ मैं हूँ, उतनी देर तक मेरा अन्याय बढ़ता जा रहा है।'

'अन्याय किसके ऊपर ?'

'भाभी के ऊपर।'

'देखो सरला, मैं बीती हुई सभी बातों को नहीं मानता। दाने का मसविदा किस सत्य के बल पर बनाओगी। तुम लोगों का मिलना-जुलना कितने समय का है, उस समय तुम्हारी भाभी कहाँ थी।'

क्या कह रहे हो रमेन भैया। अपनी इच्छा की दुहाई देकर आदर पर यह कैसी जोर लगाने की बात। आखिर भैया के बारे में भी तो सोचने की जरूरत है।'

'है तो जरूर। क्या तुम सोच रही हो कि जिस आघात ने तुमको चौंका दिया है, क्या वही आघात उनको नहीं लगा है।'

'रमेन हो क्या।' पीछे से सुनाई पड़ा।

'हाँ भैया।' रमेन उठ पड़ा।

'तुम्हारी भाभी ने तुमको बुलाया है, अभी-अभी आया आकर यह बात कह गयी है।'

रमेन चला गया, सरला भी उसी क्षण उठकर जाने को तैयार हो गयी।

आदित्य ने कहा—'जाओ मत सरो, जरा बैठो।'

आदित्य की आकृति देखकर सरला का हृदय फट जाना चाहता था। लगातार काम में व्यस्त रहनेवाला अपने को भूला हुआ यह मस्त मनुष्य अबतक मानो केवल लहरों के बीच पड़ी हुई टूटी पतवारवाली नाव की भाँति चक्कर खाकर घूम रहा था।

आदित्य बोला—हम दोनों ने इस संसार में जीवन आरम्भ

किया था बिलकुल ही एक होकर। हम लोगों का मेल इतना सहज था कि किसी कारण भी इसमें किसी तरह का भेद उत्पन्न हो सकता है, यह बात सोचना भी असम्भव है। क्या यही बात नहीं है सरो ?

'अंकुर में जो चीज एक रहती है, वही बढ़ जाने पर बँट जाती है, इस बात को न मान लेने का तो कोई कारण नहीं है आदित् भैया।'

'वह बँटवारा तो बाहरी है, केवल आँखों से दिखाई पड़नेवाला बँटवारा है। भीतर तो प्राणों के बीच बँटवारा नहीं होता। आज तुमको मेरे पास से हटा ले जाने का धक्का आया है। मुझे यह इतनी अधिक चोट पहुँचावेगा, यह तो मैं किसी दिन सोच ही नहीं सका था। सरो, तुम क्या जानती हो कैसा धक्का आ गया है, एकाएक हम लोगों पर।'

'जानती हूँ भाई, तुम्हारे जान लेने के पहले से ही।'

'सह सकोगी ?'

'सहना ही पड़ेगा।'

'स्त्रियों में सह लेने की शक्ति क्या हम लोगों से अधिक है, यही सोचता हूँ।'

'तुम लोग पुरुष हो, दुःख के साथ लड़ाई करते हो, स्त्रियाँ युग युग में केवल दुःख ही सहती हैं, आँखों का आँसू और धीरज, इनके सिवा तो कुछ भी सम्बल उनका नहीं है।'

'तुमको मेरे पास से कोई छीन ले जाय, यह मैं होने न दूँगा, न होने दूँगा। यह है अन्याय, निष्ठुर अन्याय है।'

यह कहकर मुट्ठी को कड़ा बनाकर आकाश की किसी अदृश्य शक्ति के साथ लड़ाई करने को वह तैयार हो गया।

सरला आदित्य का हाथ लेकर उसके ऊपर धीरे-धीरे हाथ

सहलाने लगी। अपने मन-ही-मन मानो धीरे-धीरे कहती रही—'न्याय-अन्याय की कोई बात नहीं है भाई, सम्बन्ध का बन्धन जब खुल जाता है, तब उसकी वेदना बहुत-से लोगों में पहुँच जाती है, खींचातानी चारो तरफ से होने लगती है, इसके लिए किसको दोष दूँ।'

'तुम सह सकोगी, यह मैं जानता हूँ। एक दिन की बात मुझे याद पड़ रही है। कैसे तुम्हारे बाल थे, अब भी हैं। इन बालों का गर्व तुम्हारे मन में था। सभी उस गर्व को प्रश्रय देते थे। एक दिन तुम्हारे साथ झगड़ा हो गया। दोपहर को तकिये पर बाल फैलाकर तुम सो गयी थी, मैंने हाथ में कैंची लेकर कम-से-कम आधा हाथ बाल काट डाला। उसी समय जागकर तुम खड़ी हो गयी, तुम्हारी काली आँखें और भी काली हो गयीं। तुमने केवल कहा—'तुमने मुझे बेबस करने का विचार किया है?' यह कहकर तुमने मेरे हाथ से कैंची लेकर गर्दन तक कच्-कच् करके बाल काट डाले। मौसा जी तुमको देखकर आश्चर्य में पड़ गये। बोले—'यह क्या काण्ड हो गया।'

तुमने शांत मुख से सहज ही कहा—बहुत गरम लगता है। वे भी जरा हँसकर सहज ही में मान गये। कुछ भी प्रश्न उन्होंने नहीं किया, भर्त्सना नहीं की, केवल कैंची लेकर तुम्हारे बालों को समान कर दिया। तुम्हारे ही तो बड़े चाचा जी थे।

सरला ने हँसकर कहा—तुम्हारी जैसी बुद्धि है। उससे तुम सोच रहे हो कि यह मेरी क्षमा का परिचय है? जरा सा भी नहीं। उस दिन तुमने मुझे जितना बेबस कर दिया था उसकी अपेक्षा बहुत अधिक बेबस मैंने तुमको किया था। ठीक है कि नहीं बताओ।

एकदम ठीक है। उन कटे हुए बालों को देखकर मैंने केवल

रोना ही बाकी रखा था। उसके बाद दूसरे दिन लज्जा के मारे मैं तुमको अपना मुँह न दिखा सका। पढ़ने के कमरे में चुपचाप बैठा रहा। तुम कमरे में घुसकर तुरन्त ही मेरा हाथ पकड़कर सरासर मुझे खींचती हुई बगीचे के काम में ले गयी। मानो कुछ भी नहीं हुआ था। और भी एक दिन की बात याद आ रही है, फागुन महीने का वह दिन जबकि असमय में तूफान आया था और मेरे शयन-गृह का छप्पर उड़ा ले गया था तब तुमने आकर—।'

'रहने दो, अधिक कहने की जरूरत न पड़ेगी आदित् भैया—यह कहकर उसने लम्बी साँस ले ली। वे बीते हुए दिन फिर न आवें। यह कहकर वह झटपट उठ गयी।

आदित्य ने व्याकुल होकर सरला का हाथ दबाकर कहा—नहीं जाओ मत, अभी मत जाओ, किसी समय जाने का दिन आवेगा तब—

यह कहते कहते उत्तेजित होकर बोल उठा:—किसी भी दिन क्यों जाना पड़ेगा। क्या अपराध हुआ है। ईर्ष्या! आज दस वर्षों की संसार-यात्रा में मेरी परीक्षा हुई है, उसी का यह परिणाम है। किस बात को लेकर ईर्ष्या। ऐसा होने से तो तेईस वर्षों का इतिहास मिटा देना पड़ेगा, जबसे तुम्हारे साथ मेरी भेंट हुई थी।

'तेईस वर्षों की कोई बात मैं नहीं कह सकती भाई, किन्तु तेईस वर्षों की इस अन्तिम बेला में क्या ईर्ष्या का कोई कारण ही उपस्थित नहीं हुआ है। सच्ची बात तो कहनी ही पड़ेगी। अपने को भुला देने से लाभ ही क्या है। तुम्हारे हमारे बीच कोई बात ही अस्पष्ट न रहनी चाहिये।'

आदित्य कुछ देर तक स्तब्ध होकर बैठा रहा, बोल उठा,

ष्ट तो अब नहीं रहा। मेरी अन्तरात्मा कह रही है कि तुम्हारे हने से मेरा जगत् व्यर्थ हो जायगा। जिनके पास से जीवन की प्रथम बेला में तुमको पा गया, उनके अतिरिक्त और कोई तुमको छीनकर ले न जा सकेगा।

'बातें मत करो आदित् भैया, दुःख अब अधिक न बढ़ाओ, जरा स्थिर होकर सोचने दो।'

'भावना को लेकर तो पीछे की ओर जाया नहीं जा सकता। मौसाजी की गोद के पास दोनों ने जिस दिन जीवन आरम्भ किया था, वह तो बिना सोच-विचार के ही हो गया था। आज किसी तरह की खुरपी से हमारे उन दिनों को क्या उखाड़ सकोगी। तुम्हारी बात तो मैं नहीं कह सकता सरो, मेरी तो सामर्थ्य नहीं है।'

'पैरों पर गिरती हूँ, मुझे दुर्बल मत बनाओ। उद्धार के मार्ग को दुर्गम मत बनाओ।

आदित्य ने सरला के दोनों हाथ दबाकर कहा—उद्धार का मार्ग नहीं है, उस मार्ग को मैं न रखूँगा। तुमको मैं प्यार करता हूँ, इस बात को आज इतनी सरलता से शपथ करके कह सकता हूँ, इससे मेरी छाती फूल उठती है। तेईस वर्षों तक जो था कली के अन्दर, आज दैव की कृपा से वह खिल उठा है। मैं कहता हूँ, उसको छिपाने की चेष्टा करने से भीरुता ही होगी, वह हो जायगा अधर्म।

'चुप चुप, और कुछ मत कहो, आज रात भर के लिए माफ करो। मुझको माफ करो।'

'सरो, मैं ही कृपापात्र हूँ, जीवन के अन्तिम दिवस तक मैं ही तुम्हारी क्षमा के योग्य हूँ। क्यों मैं अच्छा बना हुआ था। क्यों मैंने तुमको नहीं पहचाना, क्यों भूल करके ब्याह करने

गया। तुमने तो नहीं किया, कितने ही पात्र तुमको पाने की इच्छा करके आये थे, यह तो मैं जानता हूँ।

'बड़े चाचाजी ने तो मुझको उत्सर्ग कर दिया था अपने बगीचे के काम में, नहीं तो शायद—'

'नहीं नहीं, तुम्हारे मन के अन्दर तुम्हारा उज्ज्वल सत्य निहित था। अनजान में भी उसके पास तुमने अपने को बाँध रखा था। तुमने मुझे क्यों सचेत नहीं कर दिया। हमलोगों का मार्ग क्यों पृथक् हो गया।'

'रहने दो, रहने दो, जिसको मान ही लेना पड़ेगा, उसे न मानने के लिए तुम किसके साथ झगड़ा कर रहे हो। क्या होगा झूठमूठ छटपटाते रहने से। कल दिन के समय जो कुछ भी हो एक उपाय निश्चित कर लिया जायगा।'

'अच्छा मैं चुप हो रहा। किन्तु ऐसी चाँदनी रात में मेरी तरफ से बातें करती रहे, ऐसी कोई चीज तुम्हारे पास रख जाऊँगा।'

बगीचे में काम करने के लिए आदित्य की कमर में एक झोली बँधी रहती है, कुछ न कुछ संग्रह करने की जरूरत पड़ती है। उसी झोली में से उसने छोटे से गुच्छे में बँधे हुए नागकेशर के फूल निकाल लिये। बोला—मैं जानता हूँ, तुम नागकेशर पसन्द करती हो। तुम्हारे कन्धे के आँचल पर लगा दूँ? यह सेफ्टीपिन लाया हूँ।'

सरला ने आपत्ति नहीं की। आदित्य ने खूब समय लगाकर धीरे-धीरे पहना दिया। सरला उठ खड़ी हुई; आदित्य सामने खड़ा होकर उसके दोनों हाथ पकड़कर उसके मुँह की तरफ देखता रहा, मानों आकाश के चाँद की तरफ देख रहा हो। बोला—कैसी आश्चर्यजनक हो तुम सरो, कैसी आश्चर्यप्रद।

सरला हाथ छुड़ाकर दौड़ती हुई चली गयी। आदित्य ने पीछा नहीं किया, जितनी देर तक दिखाई पड़ी, चुपचाप खड़ा देखता रहा। उसके बाद उस घाट की वेदी पर बैठ गया। नौकर ने आकर खबर दी, खाना आया है।

आदित्य बोला—आज मैं नहीं खाऊँगा।

६

रमेन ने दरवाजे के पास से पूछा—भाभी, तुमने मुझे बुलाया है क्या?

नीरजा ने रुँधे गले को साफ करके उत्तर दिया—आओ।

कमरे की सब बत्तियाँ बुझी हुई थीं। खिड़की खुली थी, चाँदनी बिछौने पर पड़ी हुई थी, नीरजा के चेहरे पर थी और सिरहाने के पास आदित्य के दिये हुए उस लैबरनम् के गुच्छे पर भी थी। बाकी सब कुछ अस्पष्ट था। तकिये पर ओठँगकर नीरजा आधा उठकर बैठी थी, खिड़की के बाहर देख रही थी, उस तरफ अरकिड का घर पार करके सुपारी वृक्षों की कतार दिखाई पड़ रही थी। अभी अभी हवा चलने लगी है, पत्तियाँ हिलने लगी हैं, आम के बौरों की गन्ध आ रही है। बहुत दूर से ढोल बजने और गाने की आवाज सुनाई पड़ रही है, बैल-गाड़ियों के गाड़ीवानों के मुहल्ले में होली जम चुकी है। फर्श के ऊपर मलाई की बर्फियाँ और अबीर पड़ा हुआ है। दरबान उपहार दे गया है। रोगी का विश्राम भंग हो जाने के भय से आज समूचा मकान निस्तब्ध है। एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर 'पिउ कहाँ पिउ कहाँ'—पक्षियों का उत्तर प्रत्युत्तर चल रहा है, कोई भी हार मानना नहीं चाहता। रमेन मोढ़ा खींचकर बिछौने के पास बैठ गया। पीछे कहीं रुलाई टूट न जाय, इस डर से

बहुत देर तक नीरजा ने कोई बात नहीं कही। उसके ओंठ काँपने लगे, गले के पास मानो वेदना की आँधी चक्कर काटती हुई उठ रही थी। कुछ देर बाद उसने सम्हाल लिया, लेबरनम के गुच्छे से खिसककर गिरे हुए दो फूल उसकी मुट्ठी में रौंद गये। उसके बाद कोई भी बात न कहकर उसने रमेन के हाथ में चिट्ठी दे दी। चिट्ठी आदित्य की लिखी हुई थी। उसमें लिखा था—

इतने दिनों के परिचय के बाद आज एकाएक दिखाई पड़ा कि मेरी निष्ठा पर सन्देह करना तुम्हारे लिए सम्भव हो गया है। इसके सम्बन्ध में तर्क-वितर्क चलाने में मुझे लज्जा लगती है। तुम्हारे मन की वर्तमान अवस्था में मेरी सभी बातें, सभी काम ही तुम्हारे अनुभव के विपरीत होंगे। वही अकारण वेदना तुम्हारे दुर्बल शरीर को प्रतिक्षण आघात पहुँचाती रहेगी। जब तक तुम्हारा मन स्वस्थ नहीं हो जाता, तब तक मेरे लिए दूर रहना ही अच्छा है। मैं यह भी समझ गया कि सरला को यहाँ के कामों से मैं विदा कर दूँ, यही तुम्हारी इच्छा है। सम्भवतः करना ही पड़ेगा। मैंने सोचकर देख लिया है कि इसके सिवा दूसरा रास्ता नहीं है। तो भी मैं कह रखता हूँ कि, मेरी शिक्षा-दीक्षा, उन्नति सब कुछ बड़े चाचा की कृपा से हुआ। मेरे जीवन की सार्थकता का मार्ग उन्होंने ही दिखाया है। उनके ही स्नेह की सम्पत्ति सरला सर्वस्व खोकर असहाय हो गयी है। आज यदि मैं उसको बहा दूँ तो अधर्म होगा। तुम्हारे प्रति प्रेम रखने के कारण भी मैं यह न कर सकूँगा।

'बहुत सोचकर मैंने निश्चय किया है कि अपने व्यवसाय के अन्तर्गत मैं एक नया विभाग खोलूँगा, वह होगा फल और तरकारी सब्जी तैयार करने का विभाग। मानिकतला में मकान

समेत जमीन मिल जा सकती है। उसी जगह सरला को काम देकर बैठा दूँगा। इस काम को आरम्भ करने लायक रुपये मेरे पास नहीं हैं। अपना यही बगीचा समेत मकान बन्धक रखकर रुपया एकत्र करना पड़ेगा। इस प्रस्ताव से तुम क्रोध मत करना, यही मेरा अनुरोध है। याद रखो, सरला के बड़े चाचा ने मेरे इस बगीचे के लिए मुझे मूलधन बिना सूद का उधार दिया था; मैंने सुना है उसका भी कुछ अंश उनको उधार लेना पड़ा था। केवल यही नहीं, काम शुरू कर देने लायक बीज, कलमी वृक्ष, दुर्लभ फूल के पौधों का चारा, अरकिड, घास काटने की मशीन और दूसरे बहुत से यन्त्र उन्होंने बिना मूल्य दिए थे। इतना बड़ा अवसर यदि वे मुझे न देते, तो आज तीस रुपये के मकान किराये पर किरानीगिरी करनी पड़ती, तुम्हारे साथ विवाह होने का सौभाग्य भी प्राप्त न होता। तुम्हारे साथ बात-चीत होने के बाद मेरे मन में यही प्रश्न बार बार उठता रहा है कि, मैंने ही उसको आश्रय दिया है या सरला ने ही मुझे आश्रय दिया है? यही सहज बात मैं भूल गया था, तुमने ही मुझे याद दिला दिया। अब तुमको भी इसे याद रखना पड़ेगा। कभी यह मत सोचना कि सरला मेरा गलग्रह है। उनका ऋण किसी दिन भी मैं चुकता न कर सकूँगा, मेरे ऊपर उसके दावे का भी अन्त न रहेगा। मेरे मन में यह चेष्टा बराबर बनी रहेगी कि तुम्हारे साथ किसी दिन भी उसकी भेंट न होने पावे। किन्तु मेरे साथ उसका जो सम्बन्ध है वह कभी विच्छिन्न होने वाला नहीं है, इस बात को जिस प्रकार मैं आज समझ गया हूँ, वैसा पहले कभी मैंने नहीं समझा था। सभी बातें मैं कह न सका, मेरा दुःख आज बातचीत के परे हो गया है। यदि अनुमान से समझ सकी हो तो समझ ही गयी हो, नहीं तो जीवन में मेरी

यही जो प्रथम वेदना है वह तुम्हारे लिए अव्यक्त रह गयी ।'

रमेन ने चिट्ठी दो बार पढ़ डाली । पढ़कर चुप हो रहा ।

नीरजा ने घबड़ाहट-भरे स्वर से कहा—तुम भी कुछ कहो बबुआजी ।

रमेन ने तो भी कुछ उत्तर नहीं दिया ।

नीरजा तब बिछौने पर लोट गयी और तकिये पर अपना माथा पटकने लगी, बोली—मैंने अन्याय किया है । किन्तु तुम लोगों में से कोई भी क्या यह नहीं समझ सकता कि किस बात ने मेरा दिमाग खराब कर डाला है ।

'क्या कर रही हो, भाभी । शान्त हो जाओ, तुम्हारा शरीर तो टूट जायगा ।'

इस टूटे हुए शरीर ने ही तो मेरा भाग्य फोड़ दिया है, इसके लिए ममता ही कैसी ! उनके ऊपर मेरा अविश्वास रहता है, यह बात प्रकट हुई कहाँ से । यह तो असमर्थ जीवन को लेकर अपने ही ऊपर मेरा अविश्वास है । वही उनकी नीरू आज कहाँ है, जिसको वे कभी कहते थे, 'मालिनी' कभी कहते थे 'वनलक्ष्मी' । आज उनके उपवन को किसने छीन लिया । मेरा क्या एक ही नाम था । काम पूरा करके लौटने में जिस दिन उनको देर हो जाती थी, उस दिन मैं उनका खाना अगोरती हुई बैठी रहती थी, तब वे मुझे अन्नपूर्णा कहकर पुकारते थे । सन्ध्या समय वे पोखरे के घाट पर बैठे रहते थे, चाँदी की छोटी थाली में बेला फूल का ढेर लगाकर उसके ऊपर पान सजाकर मैं उनको दे देती थी, हँसकर वे मुझसे कहते थे 'ताम्बूल-करङ्क-वाहिनी' । उन दिनों वे गृहस्थी के सभी परामर्श मुझसे लेते थे । मेरा नाम उन्होंने रक्खा था 'गृहसचिव', कभी कहते थे 'होम सेक्रेटरी ।' मैं मानो परिपूर्ण नदी बनकर समुद्र में जा गिरी थी, विभिन्न

दिशाओं में बहुत सी अपनी शाखाएँ मैंने फैला दी थीं, सभी शाखाओं में आज एक ही क्षण में जल सूख गया, उनमें से पत्थर निकल पड़े।'

'भाभी, तुम फिर रोग-मुक्त हो जाओगी—पूर्ण शक्ति के साथ तुम फिर अपना अधिकार प्राप्त कर लोगी।'

'झूठी आशा तुम मत दो बबुआजी। डाक्टर क्या कहता है वह बात मेरे कानों में पहुँचती है। इसीलिए इतने दिनों की सुखपूर्ण गृहस्थी को इस तरह जकड़ रखने में मेरी निराशा की यह कंजूसी है।'

'जरूरत ही क्या है भाभी। अपने आपको तो इतने दिनों से तुमने अपनी गृहस्थी में ढाल दिया है। इसकी अपेक्षा क्या कोई बड़ी बात है। जैसा तुमने दिया है, वैसा तुमको मिला है, इतना भी भला किस स्त्री को मिलता है। यदि डाक्टर की बात सच हो। यदि जाने का दिन आ ही गया हो, तो जिसको महान रूप में तुमने पाया था उसको महान बनाकर चली जाओ। इतने दिन जिस गौरव से तुमने बिताये हैं उस गौरव को छोटा बनाकर क्यों जाओगी। इस मकान में जो तुम्हारी अन्तिम स्मृति है उसको जाते समय तुम नवीन महिमा प्रदान कर देना।

छाती फटी जाती है बबुआजी, छाती फटी जाती है। अपने इतने दिनों के आनन्द को पीछे फेंककर हँसती हुई मैं चली जा सकती थी। किन्तु कहीं पर क्या जरा भी खाली जगह न रहेगी जहाँ पर मेरे लिए विरह का दीपक भी टिमटिमाता हुआ जलेगा। इस बात को सोचने से मरने की भी इच्छा नहीं होती। वही सरला पूर्णरूप से सब दखल कर लेगी, क्या विधाता की यही इच्छा है?

'यदि मैं सच्ची बात कहूँ भाभी तो, तुम क्रोध मत करना। तुम्हारी बात मैं अच्छी तरह समझ ही नहीं सकता। जिसको तुम स्वयं भोग न कर सकोगी उसको भी तुम प्रसन्नचित्त से उसे न दे सकोगी जिसे इतने दिनों तक देती रही हो? तुम्हारे प्रेम में इतनी बड़ी त्रुटि रह जायगी? अपनी गृहस्थी में अपनी ही श्रद्धा के दीपक को तुम आप ही आज चूर कर डालने को तैयार हो गयी हो। उसकी वेदना को बचाकर तुम चली जाओगी, किन्तु वह चिरकाल तक हमें आघात पहुँचाती रहेगी। विनयपूर्वक कहता हूँ, अपने सारे जीवन की उदारता को अन्तिम क्षण में कृपण बनाकर मत जाओ।'

नीरजा फूल फूलकर रो उठी। रमेन चुपचाप बैठा रहा। सान्त्वना देने की उसने चेष्टामात्र भी नहीं की। रुलाई का वेग रुक जाने पर नीरजा बिछौने पर उठ बैठी। बोली—मेरी एक याचना है, बबुआजी।

'आज्ञा दो भाभी।'

'कहती हूँ सुनो। जब आँसुओं से अन्दर ही अन्दर हृदय बहने लगता है, तब मैं परमहंस देव के उसी चित्र की तरफ देखने लगती हूँ। मेरा मन बदसूरत और छोटा है। जिस तरह भी हो मुझे गुरु का पता बता दो। नहीं तो बन्धन न कटेगा' आसक्ति में बँध जाऊँगी। जिस गृहस्थी में सुखमय जीवन बिताती रही. मर जाने के बाद उसी स्थान में दुःख की हवा में युग-युगान्तरों तक रो-रोकर घूमता रहना पड़ेगा। उससे मेरा उद्धार करो, उद्धार करो।

'तुम तो जानती हो भाभी, शास्त्र में जिसको पाखण्डी कहते हैं, वही मैं हूँ। कुछ भी मैं नहीं मानता। प्रभास मिसिर बहुत ही खींचातानी करके एक बार मुझे अपने गुरु के पास ले

गया था। बन्धन में पड़ने के पहले ही मैं भाग निकला। जेलखाने की भी याद है, यह बन्धन असीम है।

'बबुआजी, तुम्हारा मन जोरदार है, तुम किसी तरह भी मेरी विपत्ति न समझोगे। खूब जानती हूँ, जितना इधर-उधर कर रही हूँ, उतना ही अगाध जल में डूबती जा रही हूँ अपने को सम्हाल नहीं सकती।'

भाभी, एक बात कहता हूँ, सुनो। जब तक तुम यह खयाल करती रहोगी कि तुम्हारा धन कोई छीनकर लेता जा रहा है तब तक छाती आग से जलती रहेगी; तुमको शान्ति नहीं मिलेगी। किन्तु स्थिरभाव से बैठकर एक बार कहो तो—मैंने दी है, सबसे अधिक मूल्यवान जो चीज है वही चीज। मैंने उनको दे दी है, जिनको सबसे अधिक प्यार करती हूँ। इस हालत में एक ही क्षण में सब भार उतर जायगा। मन आनन्द से भर उठेगा। गुरु की जरूरत नहीं है, इसी क्षण तुम कह दो—दिया दिया, कुछ भी मैंने हाथ में नहीं रक्खा, अपना सर्वस्व दे दिया, मुक्त निर्मल दान कर जाने के लिए तैयार हो गयी, किसी दुःख की गाँठ को गृहस्थी में रखकर मैं नहीं गयी।'

'अहा, कहो, कहो बबुआजी, बार बार मुझे तुम सुनाओ। उनको अबतक जो कुछ मैं दे सकी हूँ उसी से मुझे आनन्द मिलता रहा है, आज जो चीज देने में मैं असमर्थ हो रही हूँ उसी से इतना अधिक कष्ट पा रही हूँ। दूँगी, दूँगी, दूँगी, अपना सब दे डालूँगी—अब देर नहीं है। तुम उनको बुला लाओ।'

'आज नहीं भाभी, कुछ दिनों तक अपने मन को तुम बाँध लो। अपना संकल्प दृढ़ हो जाने दो।'

'नहीं; नहीं, अब मैं सह नहीं सकती। जिस समय से वे

कह गये हैं कि इस मकान को छोड़कर जापानी घर में रहेंगे, उसी समय से यह शय्या मेरे लिए चिता-शय्या हो गई है। यदि लौटकर न आवेंगे तो यह रात बीतेगी नहीं, छाती फट जाने से मर जाऊँगी। किसी तरह सरला को बुला लाओ। मैं हृदय के काँटे को उखाड़ डालूँगी। तुमको निश्चित रूप से बता रही हूँ, मुझे भय न लगेगा।'

'अभी समय हुआ नहीं है भाभी, आज रहने दो न।'

'समय चला जायगा यही भय है। इसी वक्त बुला लाओ।'

'परमहंस देव के चित्र की तरफ देखती हुई दोनों हाथ जोड़ कर बोली—'बल प्रदान करो ठाकुर' बल प्रदान करो, अधम मतिहीन नारी को मुक्ति प्रदान करो। मेरे दुःख ने भगवान् को रोक रक्खा है, मेरी पूजा-अर्चना सब चली गयी। बबुआ जी, एक बात कहती हूँ, आपत्ति मत करो।'

'क्या कहती हो।'

'एक बार मुझे ठाकुरजी के घर में दस मिनट के लिए जाने दो, इससे मुझे बल मिलेगा। कोई भय न रह जायगा।'

'अच्छा जाओ, मैं आपत्ति न करूँगा।'

'आया।'

'क्या बच्ची।'

'देव-गृह में मुझे ले चल।'

'यह कैसी बात। डाक्टर साहब—'

'डाक्टर साहब यमराज को रोक न सकेगा, और मेरे ठाकुरजी को रोकेगा?'

'आया, तुम इनको ले जाओ। डरने की बात नहीं है। अच्छा ही होगा।'

'आया को पकड़कर नीरजा जब चली गयी, उसी समय

आदित्य कमरे में आ गया। आदित्य ने पूछा—यह क्या, नीरू कमरे में नहीं हैं क्यों ?

'अभी तुरन्त ही आवेंगी, वे देवगृह में गयी हैं।'

'देवगृह में ! वह तो निकट ही नहीं है। डाक्टर की मनाही भी तो है।'

'भैयाजी, सुन तो न। वह काम डाक्टर की दवा से अधिक फल देगा। एक बार केवल फूलों की अंजलि चढ़ाकर प्रणाम करके ही चली आवेंगी।'

नीरजा को पत्र लिखकर जब भेजा था, उस समय आदित्य स्पष्टरूप से यह बात नहीं जानता था कि भाग्यविधाता ने उसके ललाट में पहले ही जो लिखावट अदृश्य स्याही से लिख छोड़ी है, बाहर की आँच लगने से वह एकाएक इतनी उज्ज्वल हो उठेगी। वह सरला से कहने आया था कि और कोई उपाय नहीं है, अलगाव बिलगाव करना पड़ेगा। वह बात कहने के समय ही उसके मुँह से उलटी बात निकल पड़ी। उसके बाद चाँदनी रात में घाट पर बैठे बैठे बार बार कहता रहा—जीवन में सत्य का आविष्कार देर से किया है, इसी कारण उसको अस्वीकार नहीं कर सकता। उसका तो अपराध नहीं है, लज्जा करने की कोई बात नहीं है। अन्याय तभी होगा जबकि सत्य को छिपाना चाहेगा। छिपाकर न रखेगा, यह ध्रुव निश्चय है। फलाफल जो कुछ भी हो। आदित्य यह बात अच्छी तरह समझ गया है कि यदि अपने जीवन के केन्द्र से, कर्म के क्षेत्र से आज वह सरला को हटा देगा, तो उस एकाकी जीवन से, उस नीरसता से उसका सब कुछ नष्ट हो जायगा, उसके काम तक बन्द हो जायँगे।'

'रमेन, मुझे मालूम है, तुम हमलोगों की सभी बातें जानते हो।'

'हाँ, जानता हूँ।'

'आज सब चुकता करूँगा, आज परदा खोल डालूँगा।'

'तुम तो अकेले नहीं हो भैया। बोझ कन्धे से गिरा देने से ही तो काम नहीं बनता। भाभीजी उस तरफ हैं। गृहस्थी की गाँठ जटिल होती है।'

'तुम्हारी भाभीजी, और अपने बीच में मिथ्या को खड़ा न रख सकूँगा। बाल्यकाल से सरला के साथ मेरा जो सम्बन्ध चला आ रहा है उसमें कोई अपराध नहीं है, यह बात तुम मानते हो न ?'

'मानता तो हूँ अवश्य ही।'

'उस सहज सम्बन्ध की पेंदी में गहरा प्रेम छिपा हुआ था, तुम जान नहीं सके, यह क्या हमारा दोष है।'

'कौन कहता है कि दोष है ?'

'आज उसी बात को यदि मैं छिपा रखूँ तो उस हालत में मिथ्याचारिता का अपराध होगा। मैं मुँह खोलकर ही कहूँगा।'

'छिपाने किसलिए जाओगे, और समारोह करके प्रकट ही करोगे क्यों ? भाभीजी को जो कुछ जान लेना है, वह खुद ही जान गयी हैं। और कुछ ही दिनों के बाद तो यह परम दुःख का बन्धन आप ही ढीला हो जायगा। तुम उसको लेकर झूठमूठ खींचातानी मत करो। भाभीजी जो कुछ कहना चाहें, वह सुन लो। उसके उत्तर में तुमको जो कुछ कहना उचित है वह आप ही सहज हो जायगा।'

नीरजा को कमरे में आते देखकर रमेन बाहर चला गया।

नीरजा ने कमरे में घुसते ही आदित्य को देख लिया, फर्श के ऊपर वह लोट पड़ी और उसके पैरों पर सिर रखकर अश्रु गद्‌गद् स्वर से बोली—माफ करो, माफ करो मुझे, मैंने अपराध

किया है। इतने दिनों के बाद तुम मुझे त्याग मत करो, मुझे दूर मत फेंको।

आदित्य ने दोनों हाथों से उसे उठा लिया, गोद में लेकर धीरे-धीरे उसे बिछौने पर लिटा दिया। बोला—नीरू, तुम्हारी व्यथा क्या मैं नहीं समझता ?

नीरजा की रुलाई रुकना ही नहीं चाहती थी। आदित्य धीरे-धीरे उसके माथे पर हाथ सहलाने लगा। नीरजा ने आदित्य का हाथ खींचकर छाती पर दबा रखा; बोली—सच-सच बता दो, मुझे क्या तुमने क्षमा किया है। तुम प्रसन्न न होगे तो मर जाने के बाद भी मुझे सुख न मिलेगा।

'तुम तो जानती हो नीरू, बीच-बीच में हम दोनों में मत-भेद उपस्थित होते रहे। किन्तु उसके कारण क्या मन का मेल टूटता रहा है।'

'इसके पहले तो किसी दिन भी तुम मकान छोड़कर नहीं चले गये। इस बार क्यों चले गये। इतना निष्ठुर तुमको किसने बना दिया।'

'अन्याय किया है नीरू, माफ करना पड़ेगा।'

'क्या कहते हो इसका ठीक ही नहीं है। तुमसे ही मेरी सारी सजाएँ हैं, सभी पुरस्कार हैं। अभिमान से तुम्हारा विचार करने गई थी तभी तो मेरी ऐसी दशा हो गयी—'बबुआजी से मैंने कहा था, सरला को बुला लाने के लिए, अभी तक लाये क्यों नहीं ?'

'सरला को बुलाने की बात सुनकर आदित्य के मन में झट से चोट लग गई। समस्या को कम से कम आज के लिए ही किसी तरह एक तरफ हटा रखने में ही वह निश्चिन्त रहता। बोला—रात हो गयी है, अभी रहने दो।'

उसी समय नीरजा बोल उठी—वह सुनो, मुझे जान पड़ता है, वे लोग दरवाजे के बाहर प्रतीक्षा कर रहे हैं। बबुआजी, तुम लोग कमरे में आ जाओ।

सरला को लेकर रमेन कमरे में आ गया। नीरजा बिछौना छोड़कर उठ खड़ी हुई। सरला ने नीरजा के पैर छूकर प्रणाम किया। नीरजा ने कहा—आओ बहन, मेरे पास आओ।

'सरला का हाथ पकड़कर उसने बिछौने पर बैठाया। तकिये के नीचे से गहने का कैस बक्स खींचकर एक मोती की माला निकालकर उसने सरला को पहना दी। बोली—किसी दिन मेरी इच्छा थी कि, जब चिता पर मेरा दाह-संस्कार होगा, यह माला मेरे गले में ही रहेगी। किन्तु उससे तो यही अच्छा है कि मेरी तरफ से तुम्हीं यह माला पहिने रहो, अन्तिम दिवस तक। विशेष विशेष दिवसों को कितनी बार यह माला मैं पहनती रही, यह बात तुम्हारे भैया को मालूम है। तुम्हारे गले में रहने से वे सब दिन उनको याद आते रहेंगे।

'मैं हूँ अयोग्य बहन, अयोग्य हूँ, क्यों मुझे लज्जित बनाती हो?'

नीरजा ने समझा था, आज अपने सर्पदान यज्ञ का यह भी एक अंग होगा। किन्तु उसके हृदय में छिपी मानसिक ज्वाला इस दान के बीच उद्दीप्त होकर प्रकाश पा गयी इस बात को वह खुद भी स्पष्टरूप से समझ नहीं सकी। इस काम में सरला को किस परिमाण तक चोट लगी इसको आदित्य ने अनुभव किया। उसने कहा—यह माला मुझे दे दो न सरला। इसका मूल्य मेरे लिए जितना है, उतना और किसी के लिए नहीं है। इसको मैं और किसी को न दे सकूँगा।'

नीरजा ने कहा—मेरा भाग्य ही ऐसा है, इतना करके भी

शायद मैं समझा न सकी, सरला, मैंने सुना था, इस बगीचे से तुम्हारे चले जाने की बात उठी थी। यह काम मैं किसी तरह भी न होने दूँगी। मैं अपनी गृहस्थी की जो कुछ भी सामग्री है सभी के साथ तुमको बाँध रखूँगी, यह हार उसी का चिन्ह है। अपना यह बन्धन तुम्हारे हाथ में इसलिए मैंने दिया था कि निश्चिन्त होकर मर सकूँ।'

'तुमने भूल की है बहन, मुझे तुम बाँधना मत चाहो, इससे अच्छा फल न होगा।'

'यह कैसी बात कहती हो।'

'मैं सच्ची बात ही कहूँगी। इतने दिन तुम मेरे ऊपर विश्वास रख सकती थी, किन्तु मुझपर विश्वास मत करो, यही बात मैं तुम सभी लोगों के सामने कह रही हूँ। भाग्य ने जिस दान से मुझे वंचित किया है, किसी को वंचित करके उसे मैं नहीं लूँगी। तुम्हारे पैरों में यही मेरा प्रणाम रहा, मैं जाती हूँ। अपराध मेरा नहीं है, अपराध है मेरे उस ठाकुरजी का, जिनकी अपने सरल विश्वास से दोनों समय पूजा करती रही हूँ। यह मेरी पूजा भी आज समाप्त हो गयी।'

यह कहकर सरला द्रुत पद से कमरे के बाहर चली गयी। आदित्य अपने को स्थिर न रख सका, वह भी चला गया।

'बबुआजी, यह क्या हो गया बबुआजी। बोलो बबुआजी, एक बात कह दो।'

'इसीलिए तो मैंने कहा था कि आज रात को उसे मत बुलाओ।'

'क्यों, मन को खोलकर मैंने तो सब कुछ ही दे दिया है। इसे भी क्या वह न समझ सकी।'

'समझ तो गयी है अवश्य ही। समझ गयी है कि तुम्हारा

मन खुला नहीं है, सुर बजा नहीं है।'

'किसी बात से भी मेरा मन विशुद्ध नहीं हुआ!' इतनी मार खा लेने से भी! कौन इसे विशुद्ध बना देगा। अजी संन्यासी, मुझे बचाओ न, बबुआजी, मेरा कौन है, किसके पास मैं जाऊँगी।'

'मैं हूँ भाभी, तुम्हारा दायित्व मैं ग्रहण करूँगा। तुम अब सो रहो।'

'सोऊँगी किस तरह! इस मकान से यदि वे फिर चले जायँगे तो उस हालत में मृत्यु न हो जाने से मुझे नींद न आवेगी।'

वे जान ही न सकेंगे। उनकी ऐसी इच्छा ही नहीं है। यह लो नींद आने की दवा, तुमको नींद आने के बाद ही मैं जाऊँगा।'

जाओ बबुआजी, तुम जाओ। वे दोनों कहाँ चले गये, देख आओ। नहीं तो मैं खुद ही जाऊँगी, उससे मेरा शरीर चाहे टूट जाय या रहे।'

'अच्छा, अच्छा मैं जा रहा हूँ।'

७

यह देखकर कि, आदित्य भी उसके साथ चला आया, सरला ने कहा—'तुम क्यों आ गये, अच्छा नहीं किया, लौट जाओ, अपने साथ तुमको इस तरह मैं जकड़ने न दूँगी। 'तुम दोगी या नहीं, यह तो कोई बात नहीं है, जकड़ना तो हो ही चुका है। वह भला हो या बुरा हो, उसमें हम लोगों का वश नहीं है।'

'ये सब बातें पीछे होंगी, लौट जाओ, जाकर रोगी को शान्त करो।'

'अपने इस बगीचे की एक शाखा और बढ़ाऊँगा; उसी बात को—'

'आज रहने दो। मुझे दो चार दिन सोचने का समय दो। इस समय मुझमें सोचने की शक्ति नहीं है।'

रमेश ने आकर कहा—'जाओ भैया, भाभी को दवा पिला-कर नींद में सुला दो, देर मत करो, किसी तरह भी उनको कोई बात मत कहने देना। रात हो गयी है।'

आदित्य के चले जाने पर सरला ने कहा—श्रद्धानन्द पार्क में कल तुम लोगों की एक सभा है न?

'है।'

'तुम जाओगे नहीं?'

'जाने की बात तो थी। किन्तु इस बार जाना नहीं होगा।'

'क्यों?'

'वह बात तुमसे कहने से क्या होगा?'

'तुमको डरपोक कहकर सभी निन्दा करेंगे।'

'जो लोग मुझे पसन्द नहीं करते वे लोग मेरी निन्दा करेंगे ही।'

'तो अब मेरी बात सुनो। मैं तुमको छुटकारा दूँगी। सभा में तुमको जाना ही पड़ेगा।'

'और कुछ स्पष्ट करके कहो।'

'मैं भी जाऊँगी सभा में, झण्डा हाथ में लेकर।'

'मैं समझ गया।'

'पुलिस बाधा देगी तो उसे मान लेने को मैं राजी हूँ, किन्तु तुम बाधा दोगे तो न मानूँगी।'

'अच्छा, मैं बाधा न दूँगा।'

'यही बात ठीक रही?'

'रही।'

हम दोनों जने ही जायँगे कल शाम को पाँच बजे।'

'हाँ जायँगे, किन्तु वे दुर्जन लोग उसके बाद हमें एक साथ रहने न देंगे।'

उसी समय आदित्य आ गया। सरला ने पूछा—'यह क्या, इतनी जल्दी तुम आ गये ?'

दो चार बातें कहते-कहते ही नीरजा थककर सो गयी, मैं धीरे-धीरे चला आया।'

रमेन ने कहा—'मुझे काम है, जा रहा हूँ।'

सरला ने हँसकर कहा—'डेरा ठीक कर रखना, भूल मत जाना।'

'कोई डर नहीं है। परिचित स्थान है।' यह कहकर वह चला गया।

८

सरला बैठी हुई थी, उठकर खड़ी हो गयी; बोली—जो सब बातें कहने योग्य नहीं हैं, उनको आज मुझे मत सुनाओ, पैरों पर गिरती हूँ।

'कुछ भी न कहूँगा, डरने की बात नहीं है।'

'अच्छा तो मैं ही कुछ कहना चाहती हूँ सुनो। बोलो, बात मानोगे।'

टाल देने लायक न होने से अवश्य ही मान जाऊँगा। तुम तो जानती ही हो।'

'समझने में कसर नहीं है, मैं पास रहूँगी तो किसी तरह भी काम न चलेगा। इस अवसर पर बहन की सेवा कर सकती तो मैं खुश होती, किन्तु यह बात मेरे भाग्य में होनेवाली नहीं है। मुझे अनुपस्थित रहना ही पड़ेगा।—जरा रुको, बात को समाप्त कर लेने दो। तुमने सुन तो लिया ही है डाक्टर ने कहा है, अधिक दिनों तक उनका समय नहीं है। इतने ही समय के अन्दर उनके मन का काँटा तुमको उखाड़ फेंकना ही होगा। इस

थोड़े से दिनों में मेरी परछाईं किसी भी हालत में उनके जीवन में मत पड़ने देना।'

'मेरे मन से यदि आप ही परछाईं पड़ जाय। तो मैं क्या कर सकता हूँ।'

'नहीं, नहीं, अपने सम्बन्ध में ऐसी अश्रद्धा की बातें मत कहो। क्या तुम्हारा मन साधारण बंगाली लड़कों की भाँति भींगी मिट्टी की तरह नरम है? कभी नहीं, मैं तुमको जानती हूँ।'

आदित्य का हाथ पकड़कर उसने कहा—मेरी ओर से तुम यह व्रत ग्रहण करो। बहन के जीवन के अन्तिम समय के जो कुछ इने गिने दिन हैं, उनको तुम अपने दाक्षिण्य से परिपूर्ण कर दो। बिलकुल ही भूल जाओ कि मैं आई थी उनके सौभाग्य के भरे हुए घड़े को फोड़ देने के लिए।

आदित्य चुपचाप खड़ा रहा।

'वचन दे दो भाई।'

'दूँगा, किन्तु तुमको भी एक वचन देना पड़ेगा। बोलो, दोगी।'

'तुम्हारे साथ मेरा पार्थक्य यही है कि मैं यदि तुमसे कोई प्रतिज्ञा कराऊँ तो वह होगी साध्य, किन्तु यदि तुम कराओगे तो सम्भवतः वह असम्भव ही होगी।'

'नहीं, नहीं होगी।'

'अच्छा, कहो।'

'जो बात मैं मन ही मन कहता रहता हूँ, वही बात तुम्हारे सामने मुँह खोलकर कहने में अपराध नहीं है। तुम जो कुछ कहती हो उसे मैं सुनूँगा और उसका त्रुटि के बिना पालन करना तभी सम्भव होगा जब कि मैं निश्चित रूप से जान जाऊँगा कि एक दिन तुम मेरी सारी शून्यता को पूर्ण कर दोगी।—क्यों चुप हो रही।'

'जानती तो नहीं हूँ भाई, कि किसी दिन प्रतिज्ञा-पालन करने में कैसा विघ्न उपस्थित हो सकता है।

'तुम्हारे हृदय में क्या विघ्न मौजूद है। वही बात पहले कह दो।'

'तुम क्यों मुझे दुःख देते हो। तुम क्या नहीं जानते कि भाषा द्वारा कह देने से जिसका प्रकाश बुझ जाता है। ऐसी बातें हैं।

'अच्छा, यह मैंने सुन लिया, यह सुनकर ही मैं काम पर जा रहा हूँ।'

'फिर क्या घूमकर देखोगे नहीं?'

'नहीं, किन्तु तुम्हारे चेहरे पर अव्यक्त प्रतिज्ञा की सिल मोहर कर देने की इच्छा हो रही है।

'जो बात सहज है उसको लेकर जोर मत लगाओ। रहने दो इस समय।'

'अच्छा तो एक बात मैं पूछता हूँ—अब तुम क्या करोगी, रहोगी कहाँ।'

'यह भार रमेन भैया ने लिया है।'

'रमेन तुमको आश्रय देगा? उस अभागे के पास क्या टूटी मड़ैया भी है?'

'तुम डरो मत, पक्का आश्रय है। अपनी सम्पत्ति नहीं है, किन्तु विघ्न न पहुँचेगा।'

'मैं जान सकूँगा तो?'

'अवश्य ही जान सकोगे; मैं वचन देकर जा रही हूँ, किन्तु इसके बीच मुझे देखने के लिए तुमको जरा भी घबड़ाना नहीं होगा, तुम यही प्रतिज्ञा कर लो।'

'तुम्हारा भी मन घबड़ायगा नहीं?'

यदि घबड़ा जायगा तो अन्तर्यामी के अतिरिक्त और कोई

जान न सकेगा।'

'अच्छा, किन्तु जाते समय भिक्षा के पात्र को बिलकुल ही खाली रखकर विदा हो जाओगी ?'

पुरुष की आँखें डबडबा उठीं।

सरला ने उसके समीप जाकर अपना मुँह ऊपर को उठा दिया।

९

'रोशनी।'

'क्या बच्ची।'

'कल से सरला दिखाई नहीं पड़ती क्यों ?'

'यह कैसी बात। क्या तुम नहीं जानतीं कि सरकार बहादुर ने उसका जेल में चालान कर दिया है ?'

'क्यों, उसने क्या किया था।'

'दरवान के साथ मिलकर षड्यंत्र करके बड़े लाट के मेम साहब के घर में घुस गई थी।'

'क्या करने के लिए ?'

'महारानी का सिल मोहर जिस बकस में रहता है उसी को चुराने के लिए—बड़ी ही दुस्साहसी है।

'लाभ क्या है ?'

'यह सुनो! उसको पा जाने से ही सब काम बन जाता। लाट साहब को फाँसी पर चढ़ाया जा सकता था, उस मुहर की छाप से ही तो राज्य संचालन हो रहा है।

'और बबुआजी।'

'सेंध मारने का औजार उनकी पगड़ी में से निकाला गया है, उनको जेलखाने में भेज दिया है। पचास वर्ष तक पत्थर तोड़ना पड़ेगा। अच्छा बच्ची, एक बात मैं पूछती हूँ, मकान से जाते

समय सरला बहन अपनी जाफरानी रंग की साड़ी मुझे दे गयी है। उसने कहा है—अपने लड़के की बहू को दे देना। मेरी आँखों में आँसू आ गया। उसको मैंने कम दुःख तो नहीं दिया है। यदि मैं इस साड़ी को रख छोड़ूँ तो कम्पनी बहादुर मुझे गिरफ्तार तो नहीं करेगा ?'

डरने की बात तेरे लिए नहीं है, किन्तु शीघ्र चली जा, बाहर के कमरे में अखबार पड़ा हुआ है उसे ले आ।'

अखबार उसने पढ़ डाला। आश्चर्य में पड़ गयीं कि इतनी बड़ी खबर आदित्य ने उसे नहीं दी। यह क्या अश्रद्धा करके। जेल में जाकर वह लड़की जीत गयी। यदि शरीर की हालत ठीक रहती तो क्या मैं नहीं जा सकती थी ? हँसते-हँसते फाँसी पर लटक जा सकती थी।'

'रोशनी, अपनी सरला बहनजी का काण्ड तुमने देख लिया ? बाजारू लोगों के सामने भले घर की लड़की—'

आया ने कहा—याद पड़ने से शरीर के रोंगटे खड़े हो जाते हैं, चोर डाकुओं का-सा उपद्रव है। छिः छिः !

'सभी कामों में उसकी अपने मन की ज़बर्दस्ती से बहादुरी चलती है। निर्लज्जता की सीमा पार कर गयी है, बगीचे से आरम्भ करके जेलखाना तक। मरते-मरते भी घमंड दूर नहीं होता।

आया को याद पड़ गयी जाफरानी रंग की साड़ी की बात। बोली—किन्तु बच्ची, बहनजी का मन बहुत उदार है।

इस बात ने नीरजा को एक बहुत बड़ा धक्का पहुँचाया। वह मानो एकाएक जाग उठी, बोली—तूने ठीक बात कही है रोशनी, ठीक बात कही है। मैं भूल गयी थी। शरीर खराब रहते ही मन खराब रहता है। पहले से अब मानो नीची हो गयी हूँ। छिः छिः

अपने आपको मार डालने की इच्छा होती है। सरला सच्ची लड़की है, झूठी बात वह नहीं जानती। ऐसी लड़की तो दिखलाई नहीं पड़ती। मुझसे बहुत अच्छी है। शीघ्र हमारे गणेश मुनीम को बुला दे।'

आया के चले जाने पर वह पेन्सिल लेकर एक चिट्ठी लिखने लगी। गणेश आया। उससे कहा—चिट्ठी जेलखाने में सरला बहन के पास पहुँचा सकोगे ?

गणेश गंगूली को अपने कृतित्व का अभिमान था। बोला—सकूँगा। कुछ खर्च लगेगा। किन्तु तुमने क्या लिखा है बेटी, सुन लूँ, क्योंकि पुलिस के हाथ से यह चिट्ठी जायगी।

नीरजा ने पढ़कर सुना दिया—'धन्य है तुम्हारा महत्व। इस बार जेलखाने से जब तुम बाहर आओगी, तब देखोगी, तुम्हारे मार्ग के साथ मेरा मार्ग मिल गया है।

गणेश बोला—वही जिस मार्ग की बात तुमने लिख दी है। वह सुनने में अच्छा नहीं लगता। अपने वकील साहब को दिखाकर ठीक कराना होगा।'

गणेश चला गया। नीरजा ने मन ही मन रमेन को प्रणाम करके कहा—बुआजी, तुम हो मेरे गुरुदेव।'

१०

आदित्य ने एक प्याली में दवा लेकर कमरे में प्रवेश किया।

नीरजा बोली—यह फिर क्या।

आदित्य बोला—डाक्टर कह गया है प्रति घंटे पर दवा पिलानी पड़ेगी।

दवा पिलाने के लिए शायद दूसरा आदमी मुहल्ले में नहीं मिला। नहीं तो दिन के लिए एक नर्स रख दो न, यदि मन में इतनी अधिक घबड़ाहट होती हो तो।

यदि सेवा के बहाने तुम्हारे पास आने का अवसर पाऊँ तो छोड़ूँगा क्यों ?"

'इससे तो अच्छा यही है कि अवसर पाकर यदि तुम बगीचे के काम में जाओ तो मैं बहुत अधिक प्रसन्न होऊँगी। मैं पड़ी हुई हूँ और दिन पर दिन बगीचा नष्ट होता जा रहा है।'

'नष्ट हो जाय न। रोग से मुक्त हो जाओ पहले, उसके बाद उन दिनों की तरह हम दोनों मिलकर काम करेंगे।'

'सरला चली गयी है, तुम अकेले पड़ गये हो, काम में मन नहीं लगता। किन्तु उपाय क्या है। इसीलिए हानि न होने दो।'

'हानि की बात मैं नहीं सोचता। बगीचा लगाना मेरा व्यवसाय है, यह बात एक दिन तुमने ही भुला रखी थी। इसलिए वही सुख था। अब मन नहीं लगता।'

'इस तरह आक्षेप क्यों कर रहे हो। अभी उस दिन तक तुम खूब अच्छी तरह काम कर रहे थे। कुछ दिनों के लिए यदि बाधा पड़ जाय तो उसे लेकर तुम इतने व्याकुल मत हो जाना।'

'क्या पंखा चला दूँ ?'

'तुम ज्यादती मत करो, यह सब काम तुम लोगों का नहीं है। इससे मैं और भी घबड़ा जाती हूँ। यदि किसी तरह दिन बिताना चाहते हो तो तुम लोगों का हर्टी कलचरिष्ट क्लब तो है ही।'

'तुम तो रंगीन लिली पसन्द करती हो, उसको बगीचे में बहुत ढूँढ़ने पर भी तो मैं न पा सका। इस बार अच्छी वर्षा नहीं हुई है, इसलिए पेड़ों में तेज नहीं है।'

'तुम झूठ-मूठ क्या बकवाद कर रहे हो। इससे तो यही अच्छा होगा कि होला को बुला दो। मैं लेटी-लेटी ही बगीचे का काम करूँगी। तुम क्या कहना चाहते हो मैं शय्या पर पड़ी हुई हूँ इसी कारण मेरा बगीचा भी शय्यागत हो जायगा। मेरी बात सुन

लो। मौसम सूखा है फूलों के पौधे उखाड़कर वहीं खेत तैयार कर लो। सीढ़ी के नीचेवाले मेरे कमरे में सरसों की खली का बोरा है। होला के पास इसकी चाभी है।'

'क्या ऐसी बात है, होला ने तो इतने दिनों तक कुछ भी नहीं बताया।'

बताना उसे अच्छा क्यों लगेगा। उसको तुम लोगों ने उसी प्रकार तुच्छ बना डाला है। अनाड़ी साहब आकर प्रवीण क्लर्क की परवा नहीं करता। नहीं तो और क्या।'

'होला माली के बारे में यदि सच्ची बात कहना चाहता हूँ तो वह अप्रिय हो उठेगी।'

'अच्छा, मैं इस बिछौने पर पड़ी रहकर ही उसी से काम कराऊँगी। देख लोगे, दो ही दिनों में बगीचे की रंगत बदल जाती है या नहीं। बगीचे का नकशा मुझे दे दो। और मेरे बगीचे की डायरी भी। मैं नकशे में पेन्सिल से चिन्ह लगाकर सब व्यवस्था कर दूँगी।'

'उसमें मेरा कुछ भी हाथ न रहेगा ?'

'नहीं। जाने के पहले इस बगीचे में अपनी पूरी छाप लगा जाऊँगी। कहे देती हूँ, रास्ते के किनारे वे सब जो बटल पाम हैं उनमें से एक को भी मैं न रखूँगी। वहाँ झाऊ की पाँत लगा दूँगी। इस तरह सिर मत हिलाओ। हो जायगा तब तुम देख लेना। तुम्हारी उस बात को मैं रहने न दूँगी। वहाँ मैं मार्बल पत्थर की एक वेदी बनवा दूँगी।'

'वेदी क्या उस जगह पर अच्छी लगेगी। मानो यह सस्ती नवाबी होगी।'

'चुप रहो। खूब अच्छी लगेगी। तुम कोई बात कह न सकोगे। कुछ दिनों के लिए यह बगीचा अकेला मेरा ही हो

जायगा, पूर्ण रूप से मेरा। उसके बाद अपने उस बगीचे को मैं तुमको दे जाऊँगी। तुमने सोचा था मेरी शक्ति चली गयी है। दिखा दूँगी, मैं क्या कर सकती हूँ। तीन मालियों की मुझे और जरूरत है और छः मजदूर भी लगेंगे। याद है? एक दिन तुमने कहा था, बगीचे को सजाने की शिक्षा मुझे नहीं मिली है। मिली है या नहीं इसको परीक्षा दे जाऊँगी। तुमको याद रखना ही पड़ेगा कि यह बगीचा मेरा है, मेरा अधिकार किसी तरह भी जानेवाला नहीं है।'

'अच्छा, यही ठीक है, तो मैं क्या करूँगा।'

तुम अपनी दूकान लेकर रहो। वहाँ तुम्हारे दफ्तर में काम तो कम नहीं है।'

'तुमको लेकर रहने की भी तो मनाही हो रही?'

हाँ, मेरे पास बराबर रहने की आवश्यकता अब नहीं है अब तो मैं किसी दूसरे की याद भर दिला सकती हूँ—इससे लाभ ही क्या है।'

'अच्छा, ठीक है। जब तुम मेरी आवश्यकता समझोगी तभी मैं आऊँगा। मुझे बुला भेजना। आज डलिया में तुम्हारे लिए गन्धराज लाया हूँ, तुम्हारे बिछौने पर रख जाता हूँ, कुछ भी खयाल मत करना।'

यह कहकर आदित्य उठ पड़ा।

नीरजा ने हाथ पकड़कर कहा—नहीं, जाओ मत, जरा बैठो।

फूलदानी में एक फूल दिखाकर बोली—जानते हो इस फूल का नाम क्या है?

आदित्य जानता था कि क्या उत्तर देने से वह प्रसन्न होगी, इसलिए झूठमूठ ही बोला—नहीं, 'मैं नहीं जानता।'

'मैं जानती हूँ, बता दूँ—पैटूनिया। तुम समझते हो, मैं कुछ भी नहीं जानती, मैं मूर्ख हूँ।

आदित्य ने हँसकर कहा—तुम हो सहधर्मिणी, यदि मूर्ख भी हो तो कम से कम मेरी ही तरह मूर्ख, हम दोनों के जीवन में मूर्खता का व्यवसाय आधे साझे में चल रहा है।

वह व्यापार मेरे भाग्य में अब समाप्त हो चला है।

वही दरबान जो वहाँ बैठकर तम्बाकू मल रहा है, वह ड्योढ़ी पर रहेगा, कुछ दिन बाद मैं न रहूँगी। वह बैलगाड़ी जो पत्थर का कोयला गिराकर खाली वापस चली जा रही है, उसका यातायात सर्वदा चलता रहेगा, किन्तु मेरा यह हृदय-यन्त्र नहीं चलेगा।

आदित्य का हाथ एकाएक जोर से दबाकर उसने कहा—बिलकुल ही न रहूँगी? जरा भी न रहूँगी? बताओ न मुझको, तुमने तो बहुत सी पुस्तकें पढ़ी हैं, बता दो न मुझे सचाई के साथ।'

जिनकी लिखी पुस्तकें मैंने पढ़ी हैं, उनकी विद्या जितनी है, मेरी भी उतनी है, यमराज के दरवाजे के पास आकर रुक गया हूँ, उसके आगे नहीं बढ़ा।'

बताओ न। तुम क्या समझते हो। मैं जरा भी न रहूँगी? जरा भी नहीं?

'इस समय हूँ यही यदि सम्भव हो, उस समय रहूँगा वह भी सम्भव होगा।'

'अवश्य ही सम्भव है, वह बगीचा सम्भव है, और मैं ही हो जाऊँगी असम्भव—यह बात हो ही नहीं सकती, किसी तरह भी नहीं। सन्ध्या समय इसी प्रकार अस्पष्ट प्रकाश में कौए अपने घोंसलों में वापस आ जायँगे, इसी तरह सुपारी वृक्ष की डालें मेरी ही आँखों के सामने हिलती रहेंगी। उस दिन तुम याद रखना, मैं हूँ, समूचे बगीचे में सर्वत्र ही मैं हूँ। समझ लेना कि

जब हवा तुम्हारे बालों को उड़ाती रहेगी तब मेरी अँगुलियों का स्पर्श उसमें मौजूद होगा। बताओ, याद रक्खोगे।

आदित्य को कह देना पड़ा—'हाँ याद रक्खूँगा।'

किन्तु ऐसे स्वर से न कह सका जिससे उसके विश्वास का प्रमाण मिलता हो।

नीरजा अस्थिर होकर बोल उठी—तुम लोगों की पुस्तकें जो लोग लिखते हैं, वे बड़े भारी पण्डित तो हैं, किन्तु जानते कुछ भी नहीं। मैं निश्चित जानती हूँ, मेरी बातों पर विश्वास करो। मैं रहूँगी, मैं यहीं रहूँगी, मैं तुम्हारे ही पास रहूँगी, बिलकुल ही स्पष्ट रूप से देख रही हूँ। यही तुमको कहकर जा रही हूँ, वचन दे जा रही हूँ, तुम्हारे बगीचे के पेड़-पौधों को सभी को मैं देखूँगी जिस तरह पहले देख रही थी, उसकी अपेक्षा बहुत अच्छी तरह देखूँगी।

किसी की जरूरत न पड़ेगी।

'किसी की भी नहीं।'

नीरजा बिछौने पर लेटी हुई थी, उठकर तकिये पर टेक लगाकर बैठ गयी। बोली—'मेरे ऊपर दया करो, दया करो। तुमको इतना अधिक प्यार करती हूँ इसी बात को याद करके मेरे ऊपर दया करो। इतने दिनों तक जैसे आदर से अपने घर में तुमने मुझे स्थान दिया है, मुझे उस दिन भी वैसे ही स्थान देना। एक ऋतु के बाद दूसरी ऋतु में तुम्हारे जो फूल खिलेंगे, उसी तरह मन ही मन उठाकर मेरे हाथों पर रख देना। यदि तुम निष्ठुर हो जाओगे, तो उस दशा में मैं यहाँ रह न सकूँगी। मेरा बगीचा यदि तुम छीन लोगे तो हवा में किस शून्य स्थल में मैं उड़ती फिरूँगी।'

नीरजा के दोनों नेत्रों से आँसू झर झर बहने लगा।

आदित्य मोढ़ा छोड़कर बिछौने पर उठ बैठा। नीरजा का मुँह छाती पर खींच लाने के बाद उसके माथे पर धीरे-धीरे हाथ सहलाने लगा। बोला—नीरू, शरीर नष्ट मत करो।

'जाने दो मेरा शरीर। मैं और कुछ भी नहीं चाहती, मैं केवल तुमको चाहती हूँ। सुनो, एक बात कहती हूँ, मेरे ऊपर क्रोध मत करना, क्रोध मत करना।'

कहते-कहते गला रुँध गया। जरा शान्त हो जाने के बाद बोली—सरला के साथ मैंने अन्याय किया है। तुम्हारे पैर पकड़ कर कह रही हूँ, अब अन्याय न करूँगी, जो कुछ हो गया है, उसके लिए मुझे माफ करो। किन्तु मुझे प्यार करो, तुम प्यार करो, जो चाहोगे, मैं वह सब करूँगी।'

आदित्य बोला—'शरीर के साथ ही साथ मन भी अस्वस्थ था, नीरू, इसी कारण तुम अपने आपको झूठमूठ दुःख देती रही हो।

'सुनो, कहती हूँ, कल रात से ही बार बार मैंने प्रण किया है। इस बार भेंट होने पर मैं शुद्ध मन से उसे अपनी बहन की भाँति छाती से लगा लूँगी। मेरी इस अन्तिम प्रतिज्ञा की रक्षा में तुम मेरी सहायता करो। बोलो, मैं तुम्हारे प्रेम से वंचित न होऊँगी, तो उस हालत में मैं सभी को अपना प्रेम दे जा सकूँगी।'

इस बात का कोई उत्तर न देकर आदित्य ने बार-बार उसका मुँह चूम लिया, उसके ललाट को भी चूम लिया। नीरजा के नेत्र मुँद गये। थोड़ी देर बाद नीरजा ने पूछा—सरला किस दिन जेल से छुटकारा पावेगी, वही दिन गिन रही हूँ। डर लगता है कि कहीं उसके पहले ही मर न जाऊँ। यह भी उससे कहकर न जा सकूँ कि मेरा मन बिलकुल ही साफ हो गया है। अब बत्ती जला दो। मुझे पढ़कर सुनाओ अक्षय बड़ाल की 'एषा नामक कविता।'

तकिये के नीचे से पुस्तक निकालकर दे दी। आदित्य पढ़कर सुनाने लगा।

सुनते-सुनते ज्योंही जरा नींद आने लगी, त्योंही आया ने कमरे में आकर कहा—चिट्ठी है। नींद का नशा टूट जाने से नीरजा चौंककर उठ गयी। उसकी छाती धड़कने लगी। किसी मित्र ने आदित्य को समाचार भेजा है कि, जेलखाने में स्थानाभाव है, इसीलिए जिन कैदियों को मीयाद पूरी होने के पहले ही छोड़ दिया जायगा, सरला उनमें से एक है। आदित्य का हृदय उछल पड़ा, अपने हृदय को जी जान से बल लगाकर दबा रक्खा। नीरजा ने पूछा—किसकी चिट्ठी है, क्या खबर है?'

पीछे कहीं पढ़ने से गले की आवाज काँपने न लगे इसलिए उसने नीरजा के ही हृदय में चिट्ठी दे दी, नीरजा आदित्य के मुँह की तरफ देखने लगी। मुँह से बात तो निकली नहीं अवश्य, किन्तु बातों की जरूरत नहीं। नीरजा के मुँह से भी कुछ देर तक बात नहीं निकली। उसके बाद खूब जोर लगाकर बोली—तो अब तो देर नहीं है। आज ही आ जायगी। उसको मेरे पास ले आना।

'यह क्या! क्या हो गया! नीरू! नर्स! डाक्टर साहब हैं?"

'हैं बाहरी कमरे में।'

'अभी तुरन्त ही बुला लाओ।'

'यही तो डाक्टर साहब! अभी-अभी खूब मजे में बातें कर रही थी; कहते-कहते बेहोश हो गयी।'

डाक्टर नाड़ी देखकर चुप हो रहा।

कुछ क्षण बाद आँखें खोलकर ही बोली—'डाक्टर साहब, मुझे बचाना ही पड़ेगा, सरला को देखे बिना मैं जा न सकूँगी। इससे अच्छा न होगा। अन्तिम आशीर्वाद।'

फिर आँखें बन्द हो गयीं। हाथ की मुट्ठियाँ कड़ी हो गयीं। बोल उठी—बबुआजी, अपनी बात मैं रखूँगी। कृपण की तरह न मरूँगी।

कभी-कभी चेतना क्षीण हो जाने से जगत् कुहरे का सा होता जा रहा है, फिर बुझते हुए दीपक की भाँति जीवन-शिखा जल उठने लगती है। रह रहकर पति से पूछ रही है—सरला कब आवेगी ?

रह रहकर पुकार उठती—'रोशनी।'

आया ने कहा—क्या बच्ची।

'बबुआजी को इसी क्षण बुला ला।'

एक बार आपही बोल उठी—क्या होगा मेरा बबुआ। दूँगी, दूँगी, सब दूँगी।'

× × ×

उस समय रात के नौ बज चुके थे। नीरजा के कमरे के एक कोने में एक मोमबत्ती क्षीण प्रकाश से जल रही है। हवा में चम्पा फूल की गन्ध आ रही है। खुली खिड़की से बगीचे के वृक्षों की ढेर लगी हुई कालिमा दिखाई पड़ रही है, और उसके ऊपर आकाश में काल पुरुष की नक्षत्र-श्रेणियाँ हैं। इस आशंका से कि रोगी को नींद आ गयी है, सरला को दरवाजे के पास रखकर आदित्य धीरे-धीरे बिछौने के पास आ गया।

आदित्य ने देखा, ओठ हिल रहे हैं। मानो चुपचाप कुछ जप रही हो, ज्ञान-अज्ञान से पूर्ण आकृति है। कानों के पास सिर झुकाकर आदित्य बोला—'सरला आ गयी है।'

'आँखों को जरा खोलकर नीरजा बोली—'तुम जाओ।' —एक बार पुकार उठी—'बबुआजी'—कहीं कोई आहट नहीं मिली।

सरला ने आकर प्रणाम करने के लिए ज्योंही पैरों पर हाथ रक्खा, त्योंही बिजली के आघात से उसका सारा शरीर छटपटा उठा, बोली, 'नहीं रुकती, नहीं रुकती, दे न सकूँगी, दे न सकूँगी।' कहते-कहते उसके शरीर में अस्वाभाविक बल आ गया, आँखों की पुतलियाँ प्रसारित होकर चमकने लगीं। सरला का हाथ उसने दबा लिया। गले का स्वर तीखा हो गया। बोली—जगह न मिलेगी तुझे राक्षसी, जगह न मिलेगी। मैं रहूँगी, रहूँगी, रहूँगी।

एकाएक ढीली शमीज पहिने पीली दुबली मूर्ति बिछौना छोड़कर उठ खड़ी हुई। अद्भुत गले से बोली—भाग जा, भाग जा इसी क्षण, नहीं तो दिन पर दिन तेरे हृदय में शेल सी बिधती रहूँगी, तेरा रक्त सुखा डालूँगी।

यह कहकर ही वह फर्श पर जा गिरी।

गले की आवाज सुनकर आदित्य दौड़ता हुआ कमरे में आ गया। उस समय नीरजा की अन्तिम बात समाप्त हो गई थी और उसके प्राण-पखेरू देह-पिंजर को छोड़कर उड़ गए थे।

❀ समाप्त ❀

चार अध्याय

भूमिका

एला को याद आती है, उसके जीवन की प्रथम सूचना विद्रोहों के बीच प्राप्त हुई थी। उसकी माँ मायामयी का स्वभाव झक्की था, उनका व्यवहार विचार-विवेचना का प्रशस्त मार्ग पकड़-कर चल नहीं सकता था। वे प्राय: अपने झक्की जीवन के कारण असंयत झड़ियों से गृहस्थी को क्षुब्ध कर डालती थीं। अन्याय का सहारा लेकर शासन करती थीं और बिना कारण ही सन्देह करती रहती थीं। लड़की जब किसी अपराध को अस्वीकार करती तो झट से बोल उठतीं—झूठ बोल रही है। किन्तु यह बात कही जा सकती है कि विशुद्ध सत्य बोलना लड़की का एक व्यसन-सा हो गया था। इसके लिए उसको सबसे अधिक सजाएँ मिलती थीं। सभी प्रकार के अन्यायों के विरुद्ध उसकी असहिष्णुता उसके स्वभाव में प्रबल हो उठी। उसकी माँ को खयाल हुआ कि यह बात तो स्त्री-धर्म-नीति के विरुद्ध है।

एक बात वह बचपन से ही समझ गयी थी कि, दुर्बलता अत्याचार का प्रधान वाहन है। उसके परिवार में जो आश्रित अन्नजीवी थे, जो लोग पराये अनुग्रह-निग्रह के संकीर्ण क्षेत्र में असहाय रूप से आबद्ध थे, उन लोगों ने ही उसके परिवार के वातावरण को कलुषित बना डाला है, उनलोगों ने ही उसकी माँ की अन्ध प्रभुत्वचर्चा को निर्विघ्न बना डाला है। इस

अस्वास्थ्यकर अवस्था की प्रतिक्रिया के रूप में ही उसके मन में छोटी उम्र से ही स्वतन्त्रता की अभिलाषा अतिशय दुर्दमनीय हो उठी थी।

एला के पिता नरेश दास गुप्त साइकॉलोजी में विलायती विश्व-विद्यालय से डिग्री लेकर आये हैं। उनकी वैज्ञानिक विचार-शक्ति तीक्ष्ण है। अध्ययन-कार्य में वे विशेष रूप से यशस्वी हैं। प्रान्तीय प्राइवेट कालेज में नौकरी करते हैं, क्योंकि उसी प्रान्त में उनका जन्म हुआ है। वे गार्हस्थिक उन्नति के लोभी नहीं हैं उस सम्बन्ध में दक्षता भी साधारण है। भूल करके लोगों पर विश्वास कर लेने और विश्वास करके अपनी हानि करते रहने की अभिज्ञता बार-बार होने पर भी वे उनका सुधार नहीं कर सके। धोखा देकर अथवा बिना प्रयास के ही जो लोग लाभ उठा लेते हैं, उनकी कृतघ्नता सबसे अधिक निर्दय होती है। जब इस तरह की बात खुल जाती है तो वे उसे मनस्तत्व का विशेष तथ्य कहकर स्वीकार कर लेते हैं, मन में या मुँह से शिकायत नहीं करते। धन-दौलत कमानेवाली बुद्धि की त्रुटि के कारण पत्नी से कभी उनको क्षमा नहीं मिली। बराबर झिड़कियाँ ही खाते रहे। शिकायत के कारण अतीत काल के गर्भ में निहित रहने पर भी उनकी स्त्री उसको कभी भूलती न थीं, जबतब तीखे व्यंग्य वचनों से उकसाकर अपनी जलन को शीतल करने में असम्भव स्थिति उत्पन्न कर देती थीं।

विश्वास-परायण उदारता के गुणों से ही अपने पिता को केवल धोखा खाते और कष्ट पाते देखकर पिता पर एला का सर्वदा व्यथापूर्ण स्नेह बना रहता था—जैसा कि नासमझ बालक पर माता का करुणापूर्ण स्नेह बना रहता है। सबसे अधिक चोट उसको उस समय पहुँचती थी, जब कि झगड़ा उठने पर

माता की बातों में इस बात का तीव्र इंगित रहता था कि वे अपने पति की अपेक्षा बुद्धि-विवेचना में श्रेष्ठ हैं। विभिन्न अवसरों पर एला ने अपनी माता के द्वारा पिता का अपमान होते देखा है। इस बात को लेकर निरर्थक क्रोध से नेत्रों के जल से रात के समय उसका तकिया तक भींग गया है। इस तरह के अत्यधिक धीरज को अन्याय समझकर एला ने बहुत बार अपने पिता को अपराधी मान लिया है।

अत्यन्त पीड़ित होकर एक दिन एला ने अपने पिता से कहा—इस तरह का अन्याय चुपचाप सह लेना ही अन्याय है।

नरेश ने कहा—स्वभाव का प्रतिवाद करना उत्तप्त लोहे के ऊपर हाथ सहलाकर उसे ठंडा करने की चेष्टा के समान है। उसमें वीरता हो सकती है किन्तु सुख और शान्ति नहीं है।

चुपचाप पड़े रहने में उससे भी कम आराम है—कहकर एला तेजी से चली गयी।

इधर एला देखती है कि गृहस्थी में जो लोग माँ के मन के अनुसार उनको प्रसन्न रखने की युक्ति जानते हैं, उनके षड्यन्त्र से निरपराधियों पर ही निष्ठुरतापूर्ण अन्याय आ पड़ता है। एला यह सहन नहीं कर सकती, उत्तेजित होकर विचार-कर्त्री के सामने सच्चाई का प्रमाण उपस्थित कर देती है। किन्तु कर्त्तव्य के घमंड के सामने अकाट्य युक्ति भी दुस्सह स्पर्धा मानी जाती है। अनुकूल तूफानी हवा की भाँति उसमें विचार की नाव आगे को नहीं बढ़ती, बल्कि नाव को एक तरफ झुक जाना पड़ता है।

इस परिवार में एक और भी उपसर्ग था, जो एला के मन को बराबर आघात पहुँचाता था। यह है उसकी माँ की अत्यधिक आचार-परायणता। एक दिन किसी मुसलमान अभ्यागत

को बैठने के लिए एला ने चटाई बिछा दी थी—उस चटाई को माँ ने फेंक दिया, गलीचा बिछा देती तो कोई दोष न लगता, एला का मन तार्किक है, तर्क किये बिना वह स्थिर नहीं रह सकता। एक दिन उसने पिता से पूछा—अच्छा, यह सब छुआछूत, नहाने-खाने का बखेड़ा केवल स्त्रियों पर ही क्यों धाक जमाता है। इसमें हृदय को तो कोई जगह है नहीं, बल्कि उसके विरुद्ध भावना की प्रबलता है। यह तो केवल यंत्र की तरह अन्ध भाव से मानकर चलना है।

साइकालोजिस्ट (मनोवैज्ञानिक) पिता ने कहा—स्त्रियों का मन हजारों वर्ष से हथकड़ी में बँधा है। वे लोग इसे मानती ही रहेंगी, कोई प्रश्न नहीं करेंगी—यही तो समाज प्रभुओं से उन्हें पुरस्कार मिला है। इस कारण मान लेने की प्रवृत्ति जितनी अधिक दृढ़ होती है, उसका मूल्य उन लोगों के लिए उतना ही अधिक बढ़ जाता है। स्त्रियोचित स्वभाववाले पुरुषों की भी यही दशा है।

आचार की निरर्थकता के सम्बन्ध में एला बार-बार माँ से प्रश्न किये बिना नहीं रह सकती। बार-बार उसका उत्तर भर्त्सना में ही मिला है। बार-बार इस तरह के धक्के लगते रहने से एला का मन अवाध्यता की तरफ झुक गया है।

नरेश ने देखा कि इन सब पारिवारिक द्वन्द्वों के कारण लड़की की शारीरिक अवस्था खराब हो रही है। इससे उनको बहुत चोट लगी। ऐसे ही समय में एक दिन एला ने किसी विशेष अन्याय से कठोर रूप से आहत होकर नरेश के पास आकर कहा—बाबूजी, मुझे कलकत्ते के किसी बोर्डिंग में भेज दीजिए।

प्रस्ताव उन दोनों के ही लिए दुःखजनक था, किन्तु पिता

अवस्था समझ गये, और मायामयी की तरफ से प्रचुर तूफानी आघात होते हुए भी एला को उन्होंने दूर भेज दिया। फिर अपनी निष्कलुष गृहस्थी और अध्ययन-अध्यापन में वे निमग्न हो गये।

माँ ने कहा—शहर में भेजकर लड़की को मेम साहब बनाना चाहते हो तो बनाओ, किन्तु तुम्हारी इस लाड़की बेटी को असह्य यातनाएँ भोगनी पड़ेंगी ससुराल में गृहस्थी सम्हालते समय। तब तुम मुझे दोष मत देना।

लड़की के व्यवहारों में कलिकालोचित स्वतंत्रता के दुर्लक्षण देखकर यह आशंका उसकी माँ बार-बार प्रकट कर चुकी हैं। एला अपनी भावी सास की हड्डी जलाती रहेगी इस सम्भावना को सुनिश्चित समझकर उस काल्पनिक गृहिणी के प्रति उनकी अनुकम्पा अत्यधिक मुखरित हो उठती थी, इन बातों से लड़की के मन में यह धारणा दृढ़ हो गयी थी कि लड़कियों को ब्याह के लिए तैयार होना पड़ता है अपने आत्मसम्मान को पंगु बनाकर, न्याय-अन्याय के ज्ञान को निकम्मा बनाकर।

एला जिस समय मैट्रिक परीक्षा पार करके कालेज में प्रवेश कर गयी, उस समय माता का देहान्त हो गया। नरेश ने बीच बीच में ब्याह के प्रस्ताव में लड़की को राजी करने की विशेष चेष्टा की थी। एला थी अपूर्व सुन्दरी, पात्रों की तरफ से प्रार्थियों का अभाव नहीं था। किन्तु विवाह की ओर से उसकी विमुखता उसके संस्कार में परिणत हो चुकी थी। लड़की ने परीक्षाएँ पास कर लीं। पिता उसको अविवाहित छोड़कर ही परलोक चले गये।

सुरेश उनका छोटा भाई था। नरेश ने अपने इस भाई को पाल-पोसकर बड़ा किया था, अन्त तक अपने खर्च से पढ़ाया-

लिखाया। दो साल से उसको विलायत भेजकर वे पत्नी से लांछित हुए और महाजनों के ऋणी हुए, सुरेश इन दिनों डाक-विभाग में ऊँचे पद पर काम करता है। काम के सिलसिले में उसको बहुत से प्रदेशों में घूमना पड़ता है। उसी के ऊपर आ पड़ा एला का भार। बहुत ही यत्न के साथ उन्होंने भार ले लिया।

सुरेश की स्त्री का नाम है माधवी। वे जिस परिवार की लड़की हैं। उस परिवार की स्त्रियों में परिमित पढ़ने-लिखने की ही प्रथा प्रचलित है। उसका कद मझोले से कम ही है, ज्यादा नहीं। पति विलायत से लौटकर ऊँची जगह लेकर जब दूर-दूर घूमने फिरने लगे, तब उनको बाहर के बहुत तरह के लोगों से सामाजिकता करनी पड़ती थी। कुछ दिनों के अभ्यास से माधवी निमंत्रण-आमंत्रणों में विजातीय लौकिकता का पालन करने में अभ्यस्त हो गयी। यहाँ तक कि गोरों के क्लबों में भी वे अपनी पंगु अंग्रेजी भाषा से उपहासास्पद होने की लज्जा छोड़कर काम चला लिया करती थीं।

ऐसे ही समय में, जब सुरेश किसी प्रदेश के एक बड़े शहर में रह रहे थे, तभी एला उनके घर में आ गयी। अपने सौन्दर्य से, गुणों से, विद्या से उसने अपने काका के मन को विचलित कर दिया। अपने ऊपर के लोगों या सहकर्मियों और देशी तथा विलायती जान-पहचान के इष्ट-मित्रों के यहाँ विभिन्न अवसरों पर एला को प्रकट करने के लिए वे व्यग्र हो उठे। एला की स्त्री-बुद्धि में यह बात समझने में कसर नहीं रही कि इसका नतीजा अच्छा नहीं हो रहा है। माधवी झूठे आराम का बहाना दिखाकर बार-बार कहने लगी—जान बच गयी—विलायती रीति-रस्म की सामाजिकता का दायित्व मेरे कंधे पर रखने से क्या लाभ। मुझमें न तो विद्या है और न बुद्धि ही।

रंग-ढंग देखकर एला ने अपने चारों ओर प्रायः एक परदा सा खड़ा कर दिया। सुरेश की कन्या सुरमा को पढ़ाने का भार उसने अतिरिक्त उत्साह के साथ ले लिया। अपने शेष समय को उसने एक निबंध लिखने में लगा दिया। इसका विषय था बँगला 'मङ्गल काव्य' और 'चॉसर' के काव्य की तुलना। इस विषय को लेकर सुरेश भी महाउत्साहित हो गये। उन्होंने इस समाचार का चारों तरफ प्रचार करना शुरू किया। माधवी ने मुँह टेढ़ा बनाकर कहा—अति सर्वत्र निन्दनीय होता है।

उन्होंने पति से कहा—एला के पास झटपट तुमने लड़की को पढ़ने के लिए ठीक कर दिया! क्यों, अधर मास्टर ने क्या अपराध किया है? तुम कुछ भी क्यों न कहो, किन्तु मैं—

सुरेश ने अवाक् होकर कहा—यह तुम क्या कह रही हो? एला के साथ अधर की तुलना!

दो-चार नोट बहियों को कंठस्थ करके पास कर लेने से ही विद्या नहीं होती। यह कहकर गरदन टेढ़ी करके गृहिणी कमरे के बाहर चली गयीं।

वह पति से एक बात कहना चाहती है परन्तु उसके मुँह में रुकावट पड़ती है। सुरमा की उमर पन्द्रह वर्ष से अधिक जा रही है, आज के बाद कल लड़का ढूँढ़ने के लिए देश में इधर-उधर दौड़-धूप करनी पड़ेगी। तब एला सुरमा के पास रहेगी तो—आजकल के लड़कों की आँखों में कई रंगों का धूमिल नशा रहता है—वे लोग क्या जानें कि किसको सुन्दरी कहना चाहिए।

वह लम्बी साँस छोड़ने लगती और सोचती, ये सब बातें पति से कहने का कुछ फल नहीं होगा। पुरुष तो 'घर-गृहस्थी के मामले में अन्धे ही होते हैं।

जितनी जल्दी हो सके एला का ब्याह हो जाय, इस चेष्टा में गृहिणी भी जान से लग गयीं। अधिक चेष्टा भी करनी नहीं पड़ी। अच्छे-अच्छे लड़के आप ही आ-आकर जुटने लगे— ऐसे सब लड़के जिनका सम्बन्ध सुरमा से कराने के लिए माधवी मोहित हो उठतीं। किन्तु एला उनको बारबार निराश करके लौटा देती।

भतीजी की इस जिदभरी नासमझी से सुरेश घबड़ा गये, काकी बहुत असहिष्णु हो गयीं। वे जानती हैं योग्य वर की उपेक्षा करना सयानी बंगाली लड़की के लिए अपराध है। वे उम्र के अनुसार होनेवाली तरह-तरह की दुर्घटनाओं की आशंका करने लगीं और अपने दायित्व को समझकर उनका अन्तःकरण अभिभूत हो गया। एला स्पष्ट रूप से ही समझ गयी कि वह अपने काका के स्नेह के साथ उनकी गृहस्थी में द्वन्द्व पैदा करने लगी है।

ऐसे ही समय में उस शहर में इन्द्रनाथ का आगमन हुआ। देश के छात्र उनको चक्रवर्ती नरेश की तरह मानते थे। उनका तेज असाधारण था, और विद्या की ख्याति भी बहुत थी। एक दिन सुरेश के यहाँ उनका निमंत्रण था। उस दिन किसी एक मौके से, एला उनसे अपरिचित रहने पर भी संकोच छोड़कर उनके पास जाकर बोली—मुझको अपने यहाँ कोई काम आप नहीं दे सकते?

आजकल के दिनों में इस तरह का आवेदन विशेष आश्चर्य का विषय नहीं है, किन्तु तो भी लड़की की दीप्ति देखकर इन्द्रनाथ को चौंक जाना पड़ा। उन्होंने कहा—कलकत्ते में सम्प्रति लड़कियों के लिए नारायणी हाई स्कूल खोला गया है, तुमको उसकी अध्यक्षा का पद मैं दे सकता हूँ, तैयार हो?

'तैयार हूँ, यदि मेरे ऊपर आप विश्वास करें।'

इन्द्रनाथ ने एला की ओर अपनी उज्ज्वल दृष्टि रखकर कहा—मैं मनुष्य पहचानता हूँ। तुम्हारे ऊपर विश्वास करने में मुझे पलभर भी देर नहीं लगी, तुमको देखने के साथ ही मुझे मालूम हो गया है, तुम नवयुग की दूती हो, नवयुग का आह्वान तुम्हारे अन्दर निहित है।

अकस्मात् इन्द्रनाथ के मुँह से ऐसी बात सुनकर एला की छाती में कँपकपी उठ गयी।

उसने कहा—आपकी बातों से मुझे डर लगता है। गलती करके मुझे ऊपर मत चढ़ा दीजियेगा। आपकी धारणा के अनुसार योग्यता प्राप्त करने की दुसाध्य चेष्टा करने से मैं टूट जाऊँगी। अपनी शक्ति की सीमा के भीतर जितना कर सकूँगी, उतना आपके आदर्श की रक्षा करती हुई चलूँगी, किन्तु वैसा अपने को दिखा न सकूँगी।

इन्द्रनाथ ने कहा—गृहस्थी के बन्धन में किसी दिन आबद्ध न होगी, यह प्रतिज्ञा तुमको स्वीकार करनी पड़ेगी। तुम समाज की नहीं हो, तुम देश की हो।

एला ने सिर ऊपर उठाकर कहा—यही प्रतिज्ञा मेरी है।

काका ने गमनोद्यत एला से कहा—तुमसे अब कभी ब्याह की बात न कहूँगा। तू मेरे पास ही पड़ी रह। यहाँ ही मुहल्ले की लड़कियों को पढ़ाने का भार लेकर एक छोटा मोटा क्लास खोल देने में क्या हर्ज है?

काकी ने स्नेहार्द्र पति की अविवेचना से विरक्त होकर कहा—उसकी उम्र बढ़ चुकी है, वह अपना दायित्व अपने ऊपर ही लेना चाहती है, यह तो अच्छी ही बात है। तुम बीच में पड़-कर बाधा क्यों देना चाहते हो?—तुम जो भी क्यों न कहो,

मैं पहले ही कहे देती हूँ, उसके लिए कोई चिन्ता मैं न कर सकूँगी।

एला ने खूब जोर लगाकर कहा—मुझे काम मिल गया है, मैं काम करने ही जाऊँगी।

एला काम करने ही चली गयी।

इस भूमिका के बाद पाँच वर्ष का समय बीत गया। अब यह कहानी बहुत दूर आगे बढ़ गयी है।

प्रथम अध्याय

दृश्य—चाय की दूकान। उसके ही एक तरफ एक छोटा-सा कमरा है। उस कमरे में बिक्री के लिए सजी-सजायी स्कूल-कालेज की पाठ्य-पुस्तकें हैं, उनमें बहुत सी सेकेण्ड हैण्ड हैं। कुछ हैं यूरोपीय आधुनिक गल्प-नाटकों के अंग्रेजी अनुवाद। उन सबको गरीब लड़के पन्ने उलट-पुलटकर देख जाते हैं, दूकानदार कुछ आपत्ति नहीं करता। इसके स्वत्वाधिकारी हैं कन्हाई गुप्त पुलिस के पेन्शन-भोगी पुराने सबइन्सपेक्टर।

सामने सदर सड़क है। बायीं तरफ से गली चली गयी है। जो लोग एकान्त में चाय पीना चाहते हैं, उन लोगों के लिए उसी कमरे में एक अधफटे टाट के परदे से अलग हिस्सा बना दिया गया है। आज उसी तरफ एक विशेष आयोजन के लक्षण दिखाई पड़ रहे हैं। यथेष्ट परिमाण में स्टूल-कुर्सियों के अभाव की पूर्ति दार्जिलिंग चाय कम्पनी के भाकोंवाले पैक बाक्सों से की गयी है। चाय के बर्त्तनों में भी अनिवार्य असमानता है। उनमें कुछ तो नीले रंग के एनामेल हैं, कुछ सफेद चीनी मिट्टी के, मेज पर टूटी बांहवाले दूध के 'जग' में फूलों का गुलदस्ता

है। दिन के प्रायः तीन बजे होंगे। लड़कों ने एला लता को निमंत्रण का समय बता दिया था ठीक ढाई बजे। कह दिया था— एक मिनट भी देर करके आने से काम न चलेगा। यह असमय का निमंत्रण था, क्योंकि उस समय दूकान खाली पड़ी रहती है, चाय-पिपासुओं की भीड़ लगती है साढ़े चार बजे के बाद से। एला ठीक समय पर ही उपस्थित हुई थी। परन्तु लड़कों में से एक का भी पता नहीं था। इस कारण अकेली बैठी हुई वह सोच रही थी—तो क्या सुनने में तारीख की भूल हुई है? ऐसे ही समय में इन्द्रनाथ को कमरे में प्रवेश करते देखकर वह चौंक उठी, इस जगह पर किसी तरह भी उनके आने की आशा नहीं की जा सकती।

इन्द्रनाथ ने यूरोप में बहुत दिन बिताये हैं, 'सायन्स' में वे विशेष ख्याति पा चुके हैं। यथेष्ट ऊँचे पद पर पहुँचने का उन्हें अधिकार था; यूरोपीय अध्यापकों के प्रशंसा-पत्र उदार भाषा में मौजूद थे। यूरोप में रहते समय किसी एक भारतीय पोलिटिकल बदनाम आदमी के साथ किसी दिन उनकी भेंट-मुलाकात हो गयी थी। इसी से स्वदेश लौट आने पर उसकी ही लांछना उनको सभी कामों में बाधा पहुँचाने लगी। अन्त में इंगलैण्ड के सुप्रसिद्ध किसी विज्ञानाचार्य की विशेष सिफारिश से उन्होंने अध्यापन का कार्य प्राप्त कर लिया था। किन्तु वह काम था अधिनायक के अधीन। अयोग्यता के साथ प्रखर ईर्ष्या रहती है। इसीलिए उनकी वैज्ञानिक गवेषणा की चेष्टा ऊपर वालों के हाथों से पद-पद पर बाधा पाने लगी। अन्त में उनको ऐसी जगह पर बदली में जाना पड़ा, जहाँ लेबोरेटरी नहीं थी। वे समझ गये कि इस स्थान में उनके जीवन के सर्वोच्च अध्यवसाय का मार्ग अवरुद्ध है। दूसरों की तरह एक ही प्रदक्षिणा के मार्ग

में अध्यापन के चिरअभ्यस्त चाक को घुमाते हुए अन्त में कुछ पेनशन उपभोग करके जीवन-लीला समाप्त कर देनी पड़ेगी— अपनी इस दुर्गति की आशंका को वे किसी तरह भी स्वीकार न कर सके। वे निश्चित रूप से जानते थे कि दूसरे किसी भी देश में सम्मान प्राप्त करने की शक्ति उनमें यथेष्ट है।

एक दिन इन्द्रनाथ ने जरमन फ्रांसीसी भाषा सिखाने के लिए एक प्राइवेट क्लास खोल दिया, उसके साथ ही भार ले लिया 'बाटोनी' 'ज्योलाजी' में कालेज के छात्रों की सहायता करने का। क्रमशः इस छोटे से अनुष्ठान की गुप्त पेंदी से एक अप्रकट साधना की जटिल जड़ जेलखानों के आंगन के बीचो-बीच से बहुत दूर तक फैल गयी।

इन्द्रनाथ ने पूछा—एला, तुम यहाँ कैसे ?

एला ने कहा—आपने मेरे मकान पर इन लोगों के जाने की मनाही कर दी है, इसीलिए लड़कों ने मुझे यहाँ ही बुला लिया है।

'यह खबर पहले ही मैं पा चुका हूँ। पाने के साथ ही मैंने उन लोगों को अन्यत्र जरूरी काम में लगा दिया। उन सभी लोगों की ओर से क्षमा मांगने आ गया हूँ। बिल भी चुका दूँगा।'

'क्यों, आपने मेरा निमंत्रण भंग कर दिया ?'

'लड़कों के साथ तुम्हारी सहृदयता का सम्पर्क है, इस बात को छिपा रखने के लिए। कल तुम देख सकोगी, तुम्हारे नाम से मैंने एक प्रबन्ध पत्रिका में भेज दिया है।'

'आपने लिखा है ? आपकी कलम से नकली नाम नहीं चल सकता। लोग उसको अकृत्रिम कहकर विश्वास न कर सकेंगे।'

'बाएँ हाथ से कच्चे अक्षर बनाकर लिखा गया है। उसमें

बुद्धि का परिचय नहीं है, सदुपदेश है।'

किस तरह ?

'तुमने लिखा है—लड़कों ने अकाल जागरण से देश को चौपट करना शुरू कर दिया है। बंगाल की महिलाओं से तुम्हारी सकरुण अपील यह है कि उन्हें उन अभागों का दिमाग ठंढा कर देना चाहिये। तुमने लिखा है—दूर से भर्त्सना करने से वह उनके कानों तक न पहुँचेगी। उन लोगों के बीच जाना पड़ेगा, जहाँ उनके नशे का अड्डा है। शासनाधिकारियों को सन्देह हो सकता है, भले ही हो। तुमने कहा है—तुम लोग मातृ जाति हो; उनके दंड को स्वयं अपने ऊपर लेकर भी यदि उनको बचा सको, तो वह मरण भी सार्थक होगा। आजकल सर्वदा ही तुम लोग कहती रहती हो कि तुम हो माया की जाति, इस बात को नमकीन जल में अत्यंत मार्मिक शब्दों में व्यक्त किया है। मातृ-वत्सल पाठकों के नेत्रों में आँसू आ जायँगे। यदि तुम पुरुष रहती, तो इसके बाद तुम्हारे लिए रायबहादुरी की उपाधि पा लेना असम्भव नहीं होता।

'आपने जो कुछ लिखा है, वह बिलकुल मेरी बात हो ही नहीं सकती, ऐसा मैं न कह सकूँगी। इन चौपटानन्द लड़कों को मैं प्यार करूँ—ऐसे लड़के हैं कहाँ। किसी समय उनके साथ मैं कालेज में पढ़ती थी। पहले पहल मेरे नाम से वे बोर्ड पर जो भी मन में आता अंट संट बातें लिख देते रहे—पीछे से छोटी इलायची कहकर चिल्लाकर पुकारने के साथ ही भले आदमी की तरह आकाश की तरफ ताकने लगते थे। फोर्थ इयर में मेरी एक सहेली पढ़ती थी इन्द्राणी—उसे वे कहते थे बड़ी इलायची। वह बेचारी देखने में कुछ लम्बी थी, उसका रंग भी उज्ज्वल नहीं था। इन सब छोटे-मोटे उपद्रवों से बहुत सी लड़कियाँ नाराज हो

जाया करती थीं। किन्तु मैं लड़कों का ही पक्ष लिया करती थी। मैं जानती थी कि हम लोग उनकी नजरों में अनभ्यस्त हैं; इसी कारण उनका व्यवहार अस्तव्यस्त हो उठता है—कभी कभी भद्दा हो जाता है, किन्तु वह उनका स्वाभाविक दोष नहीं है। जब उनकी आदत पड़ गयी तो उनका स्वर आप ही आप सहज और स्वाभाविक हो गया। छोटी इलायची बन गयी एला बहन। बीच बीच में कभी किसी के स्वर में मधुर रस भी टपक पड़ता है—टपकने की तो बात ही है—टपकेगा क्यों नहीं। परन्तु मैं कभी इसको लेकर भयभीत नहीं हुई। अपने अनुभव से मैंने देखा है, लड़कों के साथ व्यवहार करना खूब ही सहज है, यदि लड़कियाँ जानकारी में या गैरजानकारी में उनके साथ शिकार खेलने की ओर न झुकें तो, इसके बाद एक एक करके मैंने देखा, उन लोगों में जो लोग सबसे अच्छे थे, जिन लोगों में नीचता नहीं थी, जिनके मन में स्त्रियों के प्रति पुरुषोचित सम्मान का भाव—"

'अर्थात् कलकत्ते के रसिक लड़कों की तरह जिनका रस उफना नहीं उठता था—'

'हाँ, वे ही लोग दौड़ पड़े मृत्युदूत के पीछे-पीछे जी-जान से। वे सभी लोग प्रायः मेरी ही तरह (गँवार) थे वे ही लोग यदि मर जाने को दौड़ पड़ें तो मैं घर के कोने में जीवित रहना नहीं चाहती। किन्तु देखिये मास्टर साहब, मैं सच्ची बात कहूँगी, जितने ही दिन बीत रहे हैं, हमारा उद्देश्य उद्देश्य न रहकर नशा बनता जा रहा है। मानो हमारे काम की प्रणाली अपनी ताल-रहित ध्वनि से विचार-शक्ति के बाहर चली जा रही है। अच्छा नहीं लग रहा है ऐसे लड़कों की किस अन्ध-शक्ति के सामने बलि चढ़ायी जा रही है। मेरी छाती फटती जा रही है।'

'वत्से ! यह जो धिक्कार है, यही तो कुरुक्षेत्र की उपक्रमणिका है। अर्जुन के मन में भी क्षोभ उत्पन्न हो गया था। डाक्टरी शिक्षा पाने के प्रारम्भ में मैं मुर्दों को चीरते समय घृणा से प्रायः मूर्च्छित हो जाता था। वह घृणा ही घृणा करने योग्य है। शक्ति की जड़ में निष्ठुर की साधना है। अन्त में शायद क्षमा हो। तुम लोग कहती रहती हो कि, स्त्रियाँ माँ की जाति हैं, यह कोई गौरव की बात नहीं। माँ तो स्वतः प्रकृति के हाथ से ही बनाई गई हैं। पशु-जानवर भी इसके बाहर नहीं हैं। उसकी अपेक्षा भी बड़ी बात यह है कि तुम लोग शक्ति-रूपिणी हो, इसी बात को प्रमाणित करना पड़ेगा—दया-ममता की दलदली जमीन को पार करके शुष्क-कठोर भूमि पर। शक्ति प्रदान करो, पुरुष को शक्ति दो।'

'ये सब बड़ी-बड़ी बातें कर आप हम लोगों को बहका रहे हैं। हम लोग वास्तव में जो चीज हैं आप उसकी अपेक्षा कहीं बहुत अधिक का दावा कर रहे हैं। इतना बढ़ावा सहा न जायगा।'

दावे के जोर से ही वह दावा स... हो सकता है। तुम लोगों पर हम लोग जिस रूप में विश्वास करते रहेंगे तुम लोग उसी के अनुरूप बन जाओगी। तुम लोग भी हम लोगों पर उसी तरह विश्वास करो, जिससे हमारी साधना सत्य हो जाय।'

'आपको बातें करने में लगा देना मुझे अच्छा लगता है, किन्तु इस समय वैसी स्थिति नहीं है। मैं स्वयं आपसे कुछ कहने की इच्छा कर रही हूँ।'

'अच्छा, तो यहाँ नहीं, चलो उस पीछेवाली कोठरी में।'

परदा लगी हुई अर्ध अन्धकाराच्छन्न कोठरी में वे दोनों चले गये। वहाँ एक पुरानी मेज थी, और उसके दोनों तरफ

हो बँधे थीं; दीवाल पर एक बड़े आकार का भारतवर्ष का मानचित्र टंगा था।

आपने एक अन्याय किया है—यह बात कहे बिना मुझसे रहा नहीं जाता।

इन्द्रनाथ से ऐसी बात एक मात्र एला ही कह सकती है। फिर भी उसके लिए कह देना सहज नहीं था, इसी कारण उसे कहने के लिए अस्वाभाविक जोर लगाना पड़ा।

इन्द्रनाथ को देखने में सुन्दर कह देने से उसका पूरा वर्णन नहीं हो जाता। उसके चेहरे पर एक कठिन आकर्षण शक्ति मौजूद है। मानों उसके अन्तःकरण में बहुत दूर पर एक वज्र बंधा हुआ है, जिसका गर्जन कानों तक नहीं पहुँचता, उसकी निष्ठुर दीप्ति बीच-बीच में बाहर दौड़ पड़ती है। चेहरे के भाव में घिसी-मँजी शिष्टता है, शान लगायी हुई छुरी की तरह। कड़ी बातें कहने में रुकावट नहीं पड़ती। किन्तु हँसकर ही बोलता है। गले का स्वर क्रोध के वेग से भी ऊपर नहीं चढ़ता, क्रोध प्रकट होता जाता है उसकी हँसी में। जितनी सफाई से रहने में मर्यादा की रक्षा होती है उतनी को वह कभी नहीं भूलता और उसका अतिक्रम भी नहीं करता। सिर के बाल छोटे-छोटे छँटे हुए हैं, न सँवारने-सुलझाने से भी इधर उधर बिखर जाने की कोई आशंका नहीं है। चेहरे का रंग बादामी है, उस पर लाल रंग की आभा पड़ी हुई है। भौंहों के ऊपर दोनों तरफ चौड़ा फैला हुआ ललाट है, दृष्टि में कठिन बुद्धि की तीक्ष्णता है, होठों पर अविचलित सुदृढ़ निश्चय है और प्रभुता का गौरव है। अत्यन्त दुस्साध्य प्रकार का दावा वह अनायास ही कर सकता है। वह जानता है कि वह दावा सहज में ही अस्वीकृत नहीं हो सकता। कोई जानता है कि उसकी बुद्धि

असाधारण है, कोई जानता है कि उसकी शक्ति अलौकिक है। इसके अतिरिक्त कुछ लोगों की उस पर असीम श्रद्धा है, कुछ लोगों में उससे असाधारण त्रास है।

इन्द्रनाथ ने मुसकुराते हुए कहा—कैसा अन्याय ?

आपने उमा को विवाह करने की आज्ञा दी है, किन्तु वह ब्याह करना नहीं चाहती।

कौन कहता है कि वह नहीं चाहती।

वह स्वयं ही कहती है।

हो सकता है कि वह स्वयं ही ठीक नहीं जानती, अथवा स्वयं ही ठीक नहीं बताती।

उसने आपके सामने प्रतिज्ञा की थी कि वह विवाह ही न करेगी।

उस समय वही बात सत्य थी, अब वह सत्य नहीं है। मुँह की बातों से सत्य की सृष्टि नहीं की जा सकती। प्रतिज्ञा जो उमा स्वयं ही तोड़ देती, मैंने उसे तुड़वा दिया, उसको अपराध से बचा लिया।

प्रतिज्ञा की रक्षा करने या न करने का दायित्व उसी का है, चाहे वह उसे तोड़ डालती, या अपराध ही करती।

तोड़ते-तोड़ते वह आसपास तोड़-फोड़ का बहुत बड़ा ढेर लगा देती। हम सभी को नुकसान उठाना पड़ता।

किन्तु वह तो बहुत रो-धो रही है।

तो इस हालत में रोने-धोने का समय अधिक बढ़ने न दूँगा—कल-परसों के अन्दर ही विवाह सम्पन्न करा दिया जायगा।

कल-परसों के बाद भी तो उसका समस्त जीवन ही पड़ा हुआ है।

लड़कियों का विवाह के पहले का रोना 'प्रभाते मेघा-डम्बरम्' है।'

'आप हैं अत्यंत निष्ठुर।'

क्योंकि जो विधाता मनुष्य को प्यार करते हैं वे निष्ठुर हैं, जानवरों को ही वे प्रश्रय देते हैं।

आप जानते हैं उमा सुकुमार को प्यार करती है।

इसी कारण मैं उसको दूर हटा देना चाहता हूँ।

प्यार करने की सजा?

प्यार की सजा का कुछ भी अर्थ नहीं होता। यों तो चेचक की बीमारी भी एक दंड है। किन्तु गोटी निकल आने पर रोगी को घर से बाहर निकालकर अस्पताल में भेज देना ही श्रेयस्कर है।

सुकुमार के साथ ब्याह कर देने से ही तो काम बन जाता है।

सुकुमार ने तो कोई अपराध नहीं किया। उसके समान लड़के कितने हैं।

यदि वह स्वयं ही उमा से ब्याह करने को सहमत हो जाय?

यह कोई असम्भव बात नहीं है। इसीलिए इतनी हड़बड़ी है। उसके समान ऊँची श्रेणी के पुरुष के मन में विभ्रम उत्पन्न कर देना लड़कियों के लिए सहज काम है—सुकुमार के सामने दो चार बूँद आँसू गिरा देने से ही उसके प्रति प्रेम सिद्ध हो सकता है। क्या तुम सुनकर क्रुद्ध हो रही हो?

क्रोध क्यों करूँगी? ऐसी घटनाओं का मेरी जानकारी में अभाव नहीं है कि लड़कियों ने चुप रहकर अपनी निपुणता से प्रश्रय को उत्पन्न किया है और उसका दायित्व पुरुषों को ग्रहण करना पड़ा है। अब समय हो गया है सत्य के अनुरोध से

न्याय-विचार करने का। मैं ऐसा काम करती रहती हूँ, इसी कारण लड़कियाँ मुझे अच्छी निगाह से देख नहीं सकतीं। जिसके साथ उमा के ब्याह की आज्ञा की गई है उस भोगीलाल का मत क्या है।

उस निष्कण्टक भले आदमी में मतामत नाम का कोई भी उपसर्ग नहीं है। बंगालियों की सभी लड़कियों को वह विधाता की अपूर्व रचना के रूप में जानता है। ऐसे मुग्ध स्वभाववाले लड़के को दल से बाहर हटा देना ही उचित है। कूड़ा-करकट फेंकने के लिए सबसे अच्छी टोकरी है विवाह।

इन सब उपद्रवों की आशंका रहने पर भी आपने स्त्री-पुरुष को एकत्र क्यों किया है?

जिस संन्यासी ने शरीर पर भस्म पोत रक्खा है, और जिस भस्म-कुण्ड ने प्रवृत्तियों को राख बना दिया है; उन नपुंसकों से काम न चलेगा, इसीलिए। जब मैं देख लूँगा कि हमारे दल के किसी अग्नि-उपासक ने असावधानी से अपने ही अन्दर अग्नि-काण्ड मचाना शुरू कर दिया है, तब मैं उसे हटा दूँगा। हम-लोगों का अग्निकाण्ड देश-व्यापी है, बुझाये हुए मन से वह अग्निकाण्ड नहीं होगा और उन लोगों से भी यह न हो सकेगा जो लोग आग को दबा रखना नहीं जानते।

एला गम्भीर आकृति बनाये बैठी रही। कुछ देर बाद आँखें नीचे की ओर झुकाकर उसने कहा—तो अब आप मुझे छोड़ दीजिए।

इतना नुकसान करने को क्यों कह रही हो?

आप नहीं जानते।

जानता नहीं हूँ, कौन कहता है। एक दिन दिखाई पड़ा था तुम्हारे खद्दर में जरा सा रंग लग गया है। मुझे मालूम हो गया

कि हृदय में अरुणोदय हुआ है। मैं समझ सकता हूँ कि किसी के कदमों की आवाज की प्रत्याशा में तुम्हारे कान लगे रहते हैं। पिछले शुक्रवार को जब मैं तुम्हारे घर गया था तो तुमने सोचा था कि कोई दूसरा ही है। मैंने देखा कि अपने मन को ठीक तौर से सम्हाल रखने में तुमको कुछ समय लगा। लज्जा मत करो तुम, इसमें असंगत कुछ भी नहीं है।

कानों की जड़ तक लाल बनाकर एला चुप हो रही।

इन्द्रनाथ ने कहा—तुमने एक व्यक्ति को प्यार किया है, यही बात तो है। तुम्हारा मन तो जड़-पत्थर का बना नहीं है। तुम जिसको प्यार करती हो, उसको भी मैं जानता हूँ। पश्चात्ताप करने का कुछ भी कारण मैं नहीं देखता।

आपने कहा था, एकाग्रचित्त होकर काम करना पड़ेगा। सभी अवस्थाओं में यह बात सम्भव नहीं भी हो सकती।

सबके लिए यह बात लागू नहीं है, किन्तु प्रेम का भारी बोझ तुम्हारे व्रत को डुबा दे सकता है, ऐसी लड़की तुम नहीं हो।

किन्तु..........

इसमें 'किन्तु' कुछ भी नहीं है—तुम किसी तरह भी छुटकारा न पाओगी।

मैं तो आप लोगों के किसी काम में नहीं आती, यह बात तो आप जानते ही हैं।

तुमसे मैं काम लेना नहीं चाहता। काम-काज की सभी बातों मैं तुमको बताता भी नहीं। किस तरह तुम स्वयं समझोगी कि तुम्हारे हाथ का लाल चन्दन का तिलक लड़कों के मन में कैसी आग लगा देता है। उसे छोड़कर केवल सूखे वेतन पर काम कराने से मैं तुमसे पूरा काम न पाऊँगा। हम कामिनी-कांचन त्यागी नहीं हैं। जहाँ पर कांचन का अभाव रहता है,

वहाँ मैं कांचन की अवज्ञा नहीं करता। जहाँ कामिनी का प्रभाव है, वहाँ मैंने कामिनी को वेदी पर बैठाया है।

आपसे मैं झूठ नहीं बोलूँगी, समझ में यह बात आ रही है कि मेरा प्यार दिन प्रति दिन मेरे अन्य सभी प्रेमों को पार करता जा रहा है।

कुछ भी डर नहीं, खूब प्रेम करो। केवल माँ 'माँ-की' आवाज से जो लोग देश को पुकारते रहते हैं, वे चिरशिशु ही बने रह जायँगे। देश वृद्ध शिशुओं की माँ नहीं है, देश है अर्धनारीश्वर—स्त्री-पुरुष के मिलन से उसकी उपलब्धि है। इस मिलन को घर-गृहस्थी के पिंजड़े में आबद्ध करके तुम निस्तेज मत बना डालो।

किन्तु फिर भी आप तो उस उमा को—

उमा! काजू! प्रेम के सूखे हुए रुद्र रूप को वे लोग कैसे सह सकेंगे। जिस दाम्पत्य के घाट पर उनकी सभी साधनाओं की अन्त्येष्टि क्रिया होनेवाली है, समय रहते वहीं पर दोनों को ही गङ्गा-यात्रा के निमित्त भेज रहा हूँ। छोड़ो इस बात को। सुनने में आया है कि तुम्हारे मकान में परसों रात को डाकू घुसा था।

हाँ घुसा था।

अपनी जुजुत्सू शिक्षा का फल क्या तुमको मिला था?

मेरा विश्वास है कि डाकू का गट्टा मैंने तोड़ डाला है।

मन के भीतर आह-ऊह की पुकार तो नहीं उठी?

उठ जाती किन्तु डर यह था कि वह मेरा अपमान करेगा। वह यदि यंत्रणा में हार मान लेता तो अन्त तक मैं मरोड़ न सकती।

क्या तुम पहचान सकी थी कि वह कौन था?

अँधेरे में मैं उसको देख नहीं सकी थी।

यदि देख सकती तो तुम जान जाती कि वह अनादि था।

अहा! यह कैसी बात! हम लोगों का ही अनादि! वह तो अभी लड़का ही है।

मैंने ही उसको भेजा था।

आपही ने? ऐसा काम क्यों किया?

तुम्हारी भी परीक्षा हो गयी, उसकी भी।

कैसी निष्ठुरता है!

मैं था नीचे के कमरे में। उसी समय मैंने हड्डी ठीक कर दी। तुम अपने को समझती हो व्यथा-कातर। मैंने समझाना चाहा था कि विपत्ति के मुँह में कातरता स्वाभाविक नहीं है। उस दिन मैंने तुमसे कहा था—बकरी के बच्चे को पिस्तौल से मार डालने को। तुमने कहा था किसी तरह भी तुम यह काम न कर सकोगी, तुम्हारी फुफेरी बहन ने बहादुरी करके गोली चला दी। जब देख लिया कि एक पैर टूट जाने से वह जान पर गिर पड़ा, तो कठोरता का नकली भाव दिखाकर ठठाकर हँस पड़ी। वह हिस्टीरिया की हँसी थी। उस दिन रात को उसको नींद नहीं आयी। किन्तु यदि बाघ तुमको खा जाने के लिए आ जाता, तुम यदि डरपोक न होती, तो उस हालत में उसी क्षण तुम उसको मार डालती, दुविधा में न पड़ती। हम उस बाघ को मन के सामने साफ तौर से देखते रहते हैं, दया-ममता को विसर्जित कर दिया है, नहीं तो अपने को 'सेंटिमेण्टल' कहकर मैं घृणा करने लगता। श्रीकृष्ण ने अर्जुन को यही बात समझाकर कही थी। निर्दय मत होना, किन्तु कर्तव्य के समय निर्मम होना पड़ेगा। समझ सकी हो?

समझ सकी हूँ।

यदि समझ गई हो, तो तुमसे एक प्रश्न करूँगा—तुम

अतीन को प्यार करती हो ?

कुछ भी उत्तर न देकर एला चुप हो रही।

यदि कभी वह हम सभी लोगों को विपत्ति में डाल दे तो क्या तुम उसको अपने हाथ से मार न सकोगी ?

उसके लिए यह काम इतना असम्भव है कि हाँ, कह देने में मेरे मुँह में रुकावट न पड़ेगी।

यदि यही सम्भव हो जाय ?

मुँह से मैं जो भी बात क्यों न कह दूँ, अपने को क्या अन्त तक पहचानती हूँ।

पहचान ही लेना पड़ेगा अपने को। सभी भीषण कल्पनाओं को प्रतिदिन कल्पना में लाकर अपने को तैयार रखना पड़ेगा।

मैं निश्चित रूप से कह रही हूँ आपने मुझको गलती से चुना है।

मैं निश्चित जानता हूँ, मैंने गलती नहीं की है।

मास्टर साहब, आपके पैरों पर गिरती हूँ, अतीन को छुटकारा दे दीजिए।

मैं छुटकारा देनेवाला कौन हूँ। वह अपने ही वचन के बन्धन में बँधा हुआ है। उसके मन से दुविधा किसी दिन भी न मिटेगी, उसकी रुचि में चोट लगेगी प्रतिक्षण, तो भी, उसका आत्म-सम्मान उसको ले जायगा अन्त तक।

आदमी को पहचानने में क्या कभी आप गलती नहीं करते।

करता हूँ। बहुत से ऐसे मनुष्य हैं जिनके स्वभाव में दो तरह की बुनाई के काम हैं। दोनों में मेल नहीं है। फिर भी दोनों ही सत्य हैं। वे लोग अपने प्रति भी गलती करते हैं।

भारी गले से आवाज आई—क्या है भैयाजी।

कन्हाई हो क्या ! आओ आओ ।

कन्हाई गुप्त कमरे में आ गया ! नाटे कद का मोटा आदमी अधबूढ़ा है । एक सप्ताह तक दाढ़ी-मूँछ बनवाने का अवकाश नहीं मिला था । समस्त मुखमण्डल कण्टकित हो उठा है । सिर के सामने गंजा है । धोती पहने है, उसपर से मोटी खादी की चादर है, धोबी के प्रसाद से वञ्चित है, कुर्ता नहीं है । दोनों हाथ शरीर के परिमाण से छोटे हैं । मालूम होता है कि वे बराबर ही काम करने को तैयार हैं । दल के लोगों का यथा-सम्भव अन्न बचाने के लिए कन्हाई की चाय की दूकान है ।

कन्हाई ने अपने स्वाभाविक दबे और टूटे-फूटे गले से कहा—भैयाजी, तुम्हारी ख्याति है वाक्-संयम में । तुमको मुनि कहा जाय तो ठीक हो । एला बहन शायद तुम्हारी उस ख्याति को मिट्टी में मिला देगी ।

इन्द्रनाथ ने हँसकर कहा—बातें न कहने की ही साधना हम लोगों की है । नियमों की रक्षा करने के ही लिए व्यतिक्रम की आवश्यकता है । यह लड़की स्वयं कुछ नहीं कहती, दूसरों को बातें कहने का मौका देती है । वाणी का यह एक बहुमूल्य संयम है ।

क्या कहते हो तुम भैया । एला बहन बात नहीं कहती । तुम्हारे सामने चुप है, किन्तु जहाँ मुँह खोलती है वहाँ तो वाणी की बाढ़ ही आ जाती है । मैं तो पके सिर का आदमी ठहरा । तो भी आहट पाते ही खाता-पत्र फेंककर आड़ से उसकी बातें सुनने को आ जाता हूँ । अब मेरे ऊपर ज़रा ध्यान देना पड़ेगा । एला बहन की तरह मेरा गला नहीं है, किन्तु संक्षेप में मैं जो कुछ कहूँगा वह मर्म तक प्रवेश कर जायगा ।

एला झटपट उठ खड़ी हुई । इन्द्रनाथ ने कहा—जाने के

पहले एक बात तुमको बता देता हूँ, दल के लोगों के सामने मैं तुम्हारी निन्दा करता रहता हूँ। यहाँ तक कि ऐसी बातें भी मैं कह चुका हूँ कि किसी दिन तुमको शायद बिलकुल ही हटा देना पड़ेगा। मैंने कहा है—अतीन को तुम तोड़-फोड़ रही हो। उस तोड़-फोड़ में कुछ और भी फूट जायगा।

कहते-कहते बात को क्यों सच बनाते जा रहे हैं। कौन जाने यहीं से शायद मेरा कोई असामंजस्य हो।

हो तो भी मैं तुमपर सन्देह नहीं करता। किन्तु इस पर भी उन लोगों के सामने तुम्हारी निन्दा करता हूँ। तुम्हारा शत्रु कोई नहीं है यही जनश्रुति है, किन्तु मैं देखता रहता हूँ कि तुम्हारे बारह आने बंगाल प्रान्तीय अनुरक्तों का मन उस निन्दा पर विश्वास करने के लिए आग्रह के साथ लालायित हो उठता है। ये निन्दा-विलासी लोग निष्ठाहीन हैं। इनके नाम मैं नोट बुक में लिख लेता हूँ। बहुत से पन्ने भर गये हैं।

मास्टर साहब, वे लोग निन्दा से प्रेम रखते हैं, इसीलिए निन्दा करते हैं, मेरे ऊपर क्रोध करने के कारण नहीं।

अजातशत्रु नाम तुमने सुना होगा एला, ये सभी लोग जात शत्रु हैं। जन्म-काल से ही इनकी यह अकारण शत्रुता बंगाल प्रान्त के अभ्युत्थान की समस्त चेष्टाओं को केवल धूल में मिला रही है।

भैया, आज यहीं तक, यह विषय अगली बार समाप्त होगा। एला बहन, तुम्हारे चाय के निमंत्रण को चौपट कर देने की जड़ में यदि मैं गुप्त रूप से रह चुका हूँ, तो इसके लिए तुम कुछ खयाल मत करना। मेरी चाय की दूकान में ताला लग जाने का समय आ गया है। मालूम होता है कि तीन सौ मील दूर कहीं जाकर नाई की दूकान खोलनी पड़ेगी। इस बीच अलका-

नन्दा तेल के पाँच पीपे तैयार करके रख दिये हैं। महादेव की जटा निचोड़कर वह निकाला गया है। एक सार्टिफिकेट दे देना बेटी। लिख देना, अलका तेल लगाने के बाद से बालों को बाँधना एक आफत सी हो गयी है। बहुत ही बढ़ी हुई लम्बी वेणी को सम्हालकर रखना स्वयं दस भुजावाली देवी के लिए दुस्साध्य है।

जाते समय एला दरवाजे के पास आकर मुँह पीछे घुमाकर बोली—मास्टर साहब, आपकी बात मुझे याद रही, मैं तैयार रहूँगी। मुझे हटाने का दिन सम्भवतः आनेवाला है, चुपचाप ही मैं गायब हो जाऊँगी।

एला के चले जाने पर इन्द्रनाथ ने कहा—तुमको चंचल देख रहा हूँ, क्यों कन्हाई ?

अभी रास्ते के पास मेरी उस सामने की ही मेज पर बैठकर तीन-चार गुण्डे लड़के वीर रस का प्रचार कर रहे थे। आवाज से जान पड़ता है 'जान वृषभ' (जान बुल) के ही पालतू बछड़े हैं। उनकी शैतानी के संबंध में पुलिस में रिपोर्ट लिखा दी है ?

अन्दाज लगाने में तुमने भूल तो नहीं की है कन्हाई ?

बल्कि भूल करके सन्देह करना अच्छा है, किन्तु सन्देह न करके भूल करना सांघातिक है। यदि वास्तव में बेवकूफ हुए तो कोई भी उन लोगों को बचा न सकेगा, और यदि वे पक्के दुश्मन हुए तो उनको मारने वाला कौन है ? मेरी रिपोर्ट से उन्नति ही होगी। वे उस दिन रोब दिखाकर अपनी गुण्डई से खून बहा देने का प्रस्ताव कर रहे थे। उसका अभयचरण रक्षित नाम वास्तव में सार्थक है। मैं एक दिन शाम को कैश बाक्स लेकर हिसाब मिलाने के लिए बैठा था। एकाएक धूल

लपेटे, फटे कपड़े पहने हुए एक लड़के ने आकर चुपके से कहा—रुपये चाहिए पच्चीस, मुझे जाना पड़ेगा दिनाजपुर। अपने मामा मथुरा का नाम उसने लिया। मैं उछलकर खड़ा हो गया, चिल्लाकर बोल उठा—शैतान, इतनी बड़ा दुस्साहस है तुममें। अभी पुलिस के हाथ गिरफ्तार करा दूँगा।—मुझे अवकाश जरा भी नहीं था, नहीं तो उस प्रहसन को ही मैं समाप्त कर देता, ले जाता थाने में। तुम्हारे जो सब लड़के पास के कमरे में बैठकर चाय पी रहे थे, वे मेरे ऊपर आगबबूला हो गये। उसको देने के लिए चंदा संग्रह करने की चेष्टा करने लगे तो पता चला कि, सबकी जेबों में से निकालने पर तेरह आने से अधिक फण्ड तैयार नहीं हुआ। मुझे देखकर लड़का चुपके से खिसक गया।

तब तो मैं देख रहा हूँ कि तुम्हारे ढक्कन के छेद से गन्ध निकल रही है—मक्खियों का आना शुरू हो गया है।

इसमें सन्देह नहीं है। भैया, इसी समय अपने लड़कों को दूर-दूर बिखेर दो—उनमें से यहाँ एक भी बेकार न रहने पावे। ostensible means of livelihood—प्रत्येक के लिए जीविका का साधन होना ही चाहिए।

चाहिये तो अवश्य ही। किन्तु उपाय भी कुछ निश्चित किया है?

बहुत दिनों से। हाथ खाली नहीं था, स्वयं कुछ नहीं कर सका। सोच रखा है, सामग्री भी धीरे-धीरे जुटा रखी है। माधव कविराज बेचता है ज्वराशनि वटिका, उसमें बारह आने कुनैन है। उन सबको उसके यहाँ से लेकर लेबिल बदल कर नाम रख दूँगा मैलेरियारि गुटिका। कुनैन की प्रशंसा में बहुत सी झूठी बातें जोड़ देनी पड़ेगी। अतुल सेन को नियुक्त

किया जायगा कैन्विस बैग हाथ में लेकर उन गुटिकाओं के प्रचार-कार्य में। तुम्हारे निवारण—फर्स्ट क्लास एम. एस. सी. को चाहिए कि लज्जा त्यागकर भैरवी कवच में सप्त धातुओं के अतिरिक्त नव्य रसायन की और भी कई नवीन धातुओं के नाम जोड़कर, प्राचीन ऋषियों के साथ आधुनिक विज्ञान के अभूतपूर्व सम्मिलन की साधना की जा सकती है। जगबन्धु संस्कृत श्लोकों पर व्याकरण का जादू चलाकर ऊँचे स्वर से प्रचार करता रहे कि चाणक्य का जन्म हुआ था बंगाल के नेत्र कोना नामक स्थान में, मेरा भी जन्म-स्थान है उसी सब डिवीजन में। इस विषय को लेकर साहित्य के क्षेत्र में सांघातिक रूप से खण्डन-मण्डन चलने दो। अन्त में चाणक्य-जयन्ती मनायी जायगी मेरे ही प्रपितामह के परती पड़े हुए पुराने डीह पर। तुम्हारे कैम्बेली डाक्टर तारिणी खण्डेल को चाहिए कि, शीतला माता का मन्दिर निर्माण करने के निमित्त चन्दा मांग मांगकर गाँव-मुहल्लों को परेशान करता हुआ घूमने लगे। असल बात यह है कि तुम्हारे सबसे उच्च मस्तिष्क वाले बहादुर लड़कों के दल को कुछ दिनों तक व्यर्थ के व्यवसाय में लगा रखना पड़ेगा चाहे उन्हें कोई बेवकूफ कहे या चतुर व्यवसायी।

इन्द्रनाथ ने हँसकर कहा—"तुम्हारी बात सुनकर मेरी इच्छा हो रही है कि, किसी व्यापार में लग जाऊँ। और किसी बात के लिए नहीं, केवल दिवालिया बनने की कार्य-प्रणाली और उससे सम्बन्धित मनोवृत्ति का अनुशीलन करने के लिए।

कन्हाई ने कहा—तुम जिस व्यवसाय में लगे हुए हो भैया, वह चाहे आज हो या कल, निश्चय ही दिवालिया होने के द्वार पर है। जो लोग दिवालिया होते हैं, वे न समझने के कारण ही हो जाते हैं, ऐसी बात नहीं है। वे लोग नुकसान का रास्ता

किसी तरह भी छोड़ नहीं सकते, इसीलिए होते हैं। दिवालिया होने का मरणाकर्षण एक सब्लाइम आकर्षण है। इस समय उस विषय की आलोचना करने से कुछ भी फल न होगा। एक प्रश्न मुझे याद है, तुमसे पूछ लूँ। एला के समान सुन्दरी साधारणतः देखने को नहीं मिलती—यह बात तुम मानते हो या नहीं।

मानता तो हूँ अवश्य ही।

तो इस हालत में उसको अपने अन्दर तुमने रख छोड़ा है किस साहस से?

कन्हाई, इतने दिनों में मुझे पहचान लेना तुम्हारा कर्तव्य था। जो मनुष्य आग से डरता रहता है वह आग को काम में नहीं ला सकता। अपने काम में मैं आग को अलग नहीं रखना चाहता।

अर्थात् तुमसे काम चौपट हो जाय या न हो, इसकी परवा तुमको नहीं है।

सृष्टिकर्ता आग से खेलता है। निश्चित फल का हिसाब लगाते रहने से सृष्टि का काम नहीं चलता; अनिश्चित की प्रत्याशा में ही उसका विराट प्रवर्तन है। शीतल माल-मशाले द्वारा वृद्धांगुलि से दबा-दबाकर जो खिलौने तैयार किए जाते हैं उनके बाजार दर का हिसाब जोड़कर लाभ उठाने की मेरी इच्छा नहीं है। यह जो अतीन नामक लड़का एला के आकर्षण से आ गया है उसके अन्दर आफत ढाने का डाइनामाइट मौजूद है;—इसीलिए उसके प्रति मेरी इतनी उत्सुकता है।

भैया, तुम्हारी इस भयंकर लेबोरेटरी में हम लोग केवल कंधे पर झाड़न रखकर बेहरे का ही काम करते हैं। यदि कोई गैस उन्मत्त हो जाय, कोई यंत्र फूटकर छिटक पड़े तो उस हालत में टूट-फूटकर हमारे सिर के साथ टुकड़े हो जायँगे।

इस बात को लेकर गर्व करने योग्य बल हमारे मस्तिष्क में नहीं है।

इस्तीफा देकर विदाई क्यों नहीं ग्रहण करते ?

हम लोगों में फल का लोभ जो है, तुमको भले ही न हो। तुम्हारे ही दलालों के मुँह से मैंने सुना था Elixir of life (जीवनामृत) सम्भवतः मिल सकता है। तुम्हारे इस सर्वग्रासी खोज के षड्यंत्र में हम गरीब लोग फँस गये हैं सुनिश्चित आशा के ही खिंचाव से, अनिश्चितता की माया से नहीं। तुम इसको देख रहे हो जुआ खेलनेवाले की दृष्टि से, हम लोग देख रहे हैं व्यवसाय की स्वच्छ दृष्टि से। अन्त में खतिऔनी के खाते में आग लगाकर हमारे साथ मजाक मत कर बैठना भैया। उसके पैसे-पैसे में हमारे हृदय का रक्त है।

मेरे मन में किसी तरह का अन्धविश्वास नहीं है कन्हाई। हारजीत की बातों को सोचना तो मैंने बिलकुल ही छोड़ दिया है। कर्म के प्रकाण्ड क्षेत्र में मैं हूँ कर्ता, यहीं मैं अच्छा लगता हूँ, इसी कारण मैं हूँ,—वहाँ हार भी बड़ी है और जीत भी बड़ी है। उन लोगों ने चारों तरफ के दरवाजे बन्द करके मुझे छोटा बना देना चाहा था। मैं मरते-मरते प्रमाणित कर देना चाहता हूँ कि मैं बड़ा हूँ। मेरी पुकार सुनकर कितने ही मनुष्य मृत्यु की परवाह न करके चारों तरफ से दौड़ आये हैं, यह तो तुम देख ही रहे हो कन्हाई। क्यों ? मैं पुकार सकता हूँ इसी-लिए न। इस बात को मैं भली भाँति जानकर और जताकर जाऊँगा, उसके बाद जो बात होनेवाली है वह हो जायगी। तुम तो बाहर से एक दिन देखने में साधारण ही थे, किन्तु तुम्हारी असाधारणता को मैंने प्रकाशित कर दिया है। तुम लोगों को मैंने रसिक बना दिया है, मनुष्यों को लेकर यही मेरी रासायनिक

साधना है। और अधिक क्या चाहिए ? ऐतिहासिक महाकाव्य की समाप्ति पराभव के महाश्मशान में भी हो सकती है। किन्तु है तो वह महाकाव्य ही। गुलामी से बँधे हुए इस पंगु मनुष्यत्व के देश में मरने की भाँति मर सकना भी महान गौरव की बात है।

भैया, मेरी तरह अकाल्पनिक व्यावहारिक व्यक्ति को भी तुम खींचकर घोरतर पागलपन रूपी ताण्डव नृत्य-मञ्च के ऊपर ले आये हो। जब सोचने लगता हूँ तो इस रहस्य का अन्त मुझे नहीं मिलता।

मैं कंगाल की तरह कुछ भी याचना नहीं करता, इसी कारण तुम लोगों पर मेरा इतना जोर है। माया के भुलावे में डालकर मैं किसी को नहीं बुलाता। पुकारता हूँ असाध्य के बीच फल के निमित्त नहीं, वरन् बलवीर्य प्रमाणित करने के लिए। मेरा स्वभाव है निष्पक्ष ? जो अनिवार्य है, उसको मैं अक्षुब्ध मन से स्वीकार करके ले सकता हूँ। इतिहास तो पढ़ा ही है, देखा है कितने महा महा-साम्राज्य गौरव के आकाश-भेदी शिखर पर चढ़ गये थे, आज वे सभी धूलि में मिल गये हैं—उनके हिसाब के खाते में कहीं पर बहुत बड़ा कर्ज हो गया था, जिसको उन लोगों ने चुकाया नहीं। और यह देश, इसलिए कि यह हमारा ही देश है, सौभाग्य के चिर स्वत्व को लेकर इतिहास की उत्तर गद्दी पर प्रतिष्ठित होकर बैठा रहेगा और यशभाव को समस्त कारणों रूपी शरीर पर सिंदूर चन्दन लगा कर, घंटी हिला बजा कर पूजा करता रहेगा,—बेवकूफ की भांति प्यार की ऐसी जोरदार मांग मैं किसके सामने करूँगा ? मैंने तो ऐसा कभी किया ही नहीं। वैज्ञानिक का मोह-विहीन मन लेकर मैं मान लेता हूँ

कि जिसकी मृत्यु आ गई है, वह मरेगा ही।

तो अब ?

तो अब ! देश की चरम दुरवस्था मेरे मस्तक को नीचे झुका न सकेगी, मैं उसकी भी अपेक्षा बहुत ऊँचाई पर हूँ—आत्मा का अवसाद न होने दूँगा, मर जाने के सभी लक्षण देख लेने पर भी।

और हम लोग।

तुम लोग क्या बच्चे हो? जिस जहाज की पेंदी सागर की बीच धारा में जाकर सात जगहों में फट गई है, रोना-धोना मचाकर मंत्र पढ़कर, भगवान् की दोहाई देकर क्या उसकी रक्षा कर सकोगे ?

यदि न कर सकूँ तो उस हालत में ?

तो क्या ? तुममें से कई व्यक्तियों ने एक साथ मिलकर जान-बूझकर उस डूबनेवाले जहाज पर ही तूफान के मुँह की ओर सांघातिक पाल तान रखा है। तुम लोगों की छाती काँप नहीं गई। ऐसे जितने ही आदमी मिल जायँगे, डूबते हुए उन लोगों को लेकर ही हमारी जीत होगी। रसातल में जाने के लिए जो देश अन्ध-भाव से तैयार है, उसीके मस्तूल पर तुम लोग अन्त तक विजय-ध्वजा उड़ाते रहे हो, तुम लोगों ने न तो झूठी आशाएँ की हैं, और न तो कंगालपन ही दिखाया है, और न नैराश्य से हाय-हाय करके रोना-धोना ही मचाया है, तुम लोगों ने उस समय तक भी पतवार को नहीं छोड़ा, जब कि जहाज की पेंदी तक पानी भर चुका था। पतवार छोड़ देने में ही कापुरुषता है—बस, तुम लोगों में से जो कुछ लोगों को पा गया हूँ उन्हीं को लेकर मेरा काम तो हो गया। उसके बाद ? कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

तुम जो कुछ कह रहे हो उसमें से एक बात छूट गई है, ऐसा मालूम हो रहा है।

कौन-सी बात ?

तुम्हारे मन में क्या क्रोध भी नहीं है ? इतने इम्पर्सनल निषपक्ष हो तुम ?

क्रोध किस पर ?

अंग्रेजों पर।

जो जवान शराब पीकर आँखें लाल किये बिना लड़ ही नहीं सकता, उस गँवार की मैं अवज्ञा करता हूँ। क्रोध के आवेश से कर्तव्य पालन में तत्पर होने पर अकर्तव्य-पालन की ही सम्भावना अधिक रहती है।

भले ही ऐसी बात हो, किन्तु क्रोध का कारण रहने पर क्रोध न करना अमानुषिक है।

समस्त यूरोप के साथ मेरा परिचय है। मैं अंग्रेजों को भी जानता हूँ। पश्चिमी जितनी जातियाँ हैं, उनमें वे सबसे बड़ी जाति के हैं। शत्रु के उकसाने पर वे लोग मार नहीं सकते, ऐसी बात नहीं है, किन्तु पूर्ण रूप से नहीं मार सकते—लज्जा अनुभव करते हैं। उनके अपने ही लोगों में जो लोग बड़े हैं, उन लोगों के ही सामने जवाबदेही पेश करने में उनको सबसे अधिक भय रहता है। वे लोग अपने को भी भुलावे में डालते हैं और उन्हें भी डालते हैं, उन लोगों पर जितना क्रोध करने से पूरी स्टीम बना रक्खी जा सकती है, उतना क्रोध करना मेरे द्वारा सम्भव नहीं है।

अद्भुत हो तुम।

सोलहो आने मार की चोटों से हमारे मेरुदण्ड को वे चिर-काल के लिए चूर कर दे सकते थे। इसको वे कर नहीं सके। मैं उनकी मनुष्यता को बहादुरी देता हूँ। दूसरों के देश पर शासन करते-करते वह मनुष्यत्व क्षीण होता जा रहा है, इसीसे मरण दशा उत्पन्न हो रही है उन लोगों में। इतना अधिक

विदेशों का बोझ और किसी जाति के कन्धे पर नहीं है। इससे उनका स्वभाव नष्ट होता जा रहा है।

इसको वे लोग ही समझेंगे। किन्तु अपने इस अध्यवसाय को तुमने प्रायः अहैतुक बना दिया है, यह बात मेरे विचार से ब्याकुली ही मालूम हो रही है।

अत्यन्त भूल है, मैं अन्याय नहीं करूँगा, उन्मत्त न होऊँगा, देश को देवी कहकर, माँ माँ पुकारकर आँसू न गिराऊँगा, फिर भी काम करूँगा, इसीमें मेरा बल है।

शत्रु को शत्रु मानकर यदि उससे द्वेष न करोगे, तो उसके विरुद्ध हाथ उठाओगे किस तरह ?

रास्ते में पत्थर पड़ा रहने पर उसके विरुद्ध जिस तरह हथियार चलाता हूँ उसी तरह की अप्रमत्त बुद्धि लेकर। वे लोग अच्छे हैं या बुरे यह तर्क का विषय नहीं है। उनका शासन है विदेशी शासन। उससे अन्दर से हम लोगों का आत्म-लोप होता जा रहा है—इस स्वभाव-विरुद्ध अवस्था को डिगाने की चेष्टा करके, मैं अपने मानव स्वभाव को स्वीकार करता हूँ।

किन्तु सफलता के सम्बन्ध में तुमको निश्चित आशा नहीं है।

भले ही न रहे, तो भी अपने स्वभाव का अपमान मैं न होने दूँगा—सामने मृत्यु ही यदि सबसे अधिक निश्चित हो जाय तो भी। पराभव की आशंका है इसीलिए स्पर्धा करके, उसकी उपेक्षा करके आत्म मर्यादा की रक्षा करनी ही पड़ेगी। मेरा तो विचार है कि यही आज हमारा अन्तिम कर्तव्य है।

वही आ रहे हैं रक्त-गंगा बहानेवाले नकली भगीरथ। उनको चाय पिला आऊँ। उनके द्वारा स्पष्ट शब्दों में खबर भी दूँगा कि पुलिस में सभी बातें रिपोर्ट कर दी गई हैं। तुम्हारे दल के बेवकूफ लोग मुझे कहीं जीवित ही न जला डालें।

द्वितीय अध्याय

एला आरामकुर्सी पर बैठी हुई है, पीठ पर तकिया लगा हुआ है, पैर के ऊपर पैर रखे हुए है। देशबन्धु चित्तरंजनदास का चित्र-मुद्रित कापी काठबोर्ड के सहारे गोद में तिरछी करके रखी हुई है जिस पर वह मन लगाकर कुछ लिख रही है। दिन समाप्त होने में देर नहीं है, किन्तु अभी तक उसके सिर के बाल बिना सजावट के बिखरे हुए हैं। वह बैंगनी रंग की खादी की साड़ी पहने है। उसमें मलिनता छिपी रहती है, इसीलिए उसको एकान्त में काम में लाने की आवश्यकता रहती है। एला के हाथों में एक जोड़ी लाल रंग से रँगी हुई शंख की चूड़ियाँ हैं, गले में सोने का हार है। हाथी-दाँत का सा उसका गौर-वर्ण हृष्ट-पुष्ट शरीर है। जान पड़ता है कि आयु बहुत कम है, किन्तु मुख पर परिणत बुद्धि की गम्भीरता है। खादी के हरे रंग की चादर से ढकी हुई संकीर्ण लोहे की चारपाई कमरे के एक ओर दीवाल से सटी हुई पड़ी है। नारायणी स्कूल के करघे द्वारा बुनी हुई दरी फर्श पर बिछी हुई है। लिखने की छोटी मेज पर एक तरफ ब्लाटिंग पैड है। उसके एक ओर कलम-पेनसिल से सजाई हुई दावातदान है, दूसरी ओर पीतल के फूलदान में गन्धराज फूल हैं। दीवाल पर किसी प्राचीन काल के फोटोग्राफर की प्रेतात्मा झूल रही है, जो कि क्षीण पीली रेखाओं से लुप्तप्राय हो रही है। अँधेरा छा रहा है। बत्ती जलाने का समय हो गया है। एला उठने-उठने को सोच रही थी कि उसी समय खद्दर के परदे को सरकाकर अतीन्द्र हवा के झोंके की भाँति कमरे में घुस आया और आते ही बोल उठा—एली।

एला खुशी के मारे चौंक उठी, बोली—असभ्य, बिना सूचना

दिए ही घर में घुस आने का साहस करते हो।

एला के पैरों के पास झट से फर्श पर ही बैठकर अतीन बोला—यह जीवन अत्यन्त छोटा है, कायदे-कानून हैं बहुत लम्बे, नियम की रक्षा करने योग्य परमायु तो थी प्राचीन युग के मान्धाता में, कलिकाल में उसकी खींचा-तानी हो रही है।

मैं अभी तक कपड़े भी नहीं बदल सका हूँ।

अच्छा ही है। तब तो मेरे साथ मेल खा जायगा। तुम रहो रथ पर, मैं रहूँ पैदल बनकर—ऐसी असामान्यता तो मनु के नियमों के अनुसार अधर्म है। किसी समय में था निर्दोष सज्जन पुरुष, उस केंचुल को तो तुम ही ने उतारकर फेंक दिया है। अब मेरी वर्तमान वेशभूषा कैसी जान पड़ रही है?

शब्दकोष में इसे वेशभूषा नहीं कहते।

तो क्या कहते हैं?

शब्द ढूँढ़ने पर भी नहीं मिल रहा है। सम्भवतः भाषा में नहीं है। कुरते के सामने के ही भाग में वह जो टेढ़ा-मेढ़ा फट जाने का दाग है, वह क्या तुम्हारी अपनी सिलाई का लम्बा विज्ञापन है?

भाग्य का आघात गहरा होने पर भी, मैं छाती खोलकर ही उसे ग्रहण करता हूँ—यह उसी का परिचय है। इस कुर्ते को दर्जी को देने का साहस नहीं होता, उसको भी तो अपने आत्म-सम्मान का बोध है।

मुझे क्यों नहीं दिया?

तुमने तो नवयुग के संस्कार का भार ले लिया है, उसपर भी अब पुराने कुर्ते का संस्कार?

उसे सहन करने की ऐसी कौन सी आवश्यकता थी?

जिस आवश्यकता से भला आदमी अपनी स्त्री को सह लेता है।

इसका क्या अर्थ हुआ ?

इसका अर्थ है, एक से अधिक है ही नहीं, इसीलिए।

तुम क्या कह रहे हो अन्तू। इतने बड़े संसार में तुम्हारे पास इसी एक कुर्ते के सिवा दूसरा है ही नहीं ?

बढ़ाकर कहना अन्याय है, इसीलिए मैंने घटाकर कहा है। पहले श्रीयुत अतीन्द्र बाबू के पास कुर्ते थे बहुसंख्यक और अनेक प्रकार के। ऐसे ही समय में देश में आ गयी बाढ़। तुमने अपनी वक्तृता में कहा—जिस अश्रुप्लावित दुर्दिन में (याद है यह अश्रुप्लावित विशेषण ?) बहुसंख्यक नर-नारियों को अपनी लाज बचाने लायक कपड़े जुट नहीं रहे हैं, उस समय आवश्यकता से अतिरिक्त कपड़े जिसके पास हैं, लज्जा उसी को होनी चाहिए। अत्यंत अच्छे ढंग से तुमने यह बात कही थी। उस समय भी तुम्हारे सम्बन्ध में प्रकट रूप से हँसने का साहस मुझमें नहीं था। पर, मन-ही-मन मैं हँस पड़ा था। निश्चित रूप से मैं जानता था कि आवश्यकता से अधिक कुर्ते थे तुम्हारी सन्दूक में। किन्तु स्त्रियों के पास पचास रंगों की पचास कुर्तियाँ रहने पर भी, वे पचासों ही अति आवश्यक हैं। उन दिनों देशहितैषिणियों में प्रतिद्वन्द्विता चल रही थी—कौन कितना चन्दा संग्रह कर सकती है। मैंने लाकर रख दिया अपने कपड़ों का बक्स तुम्हारे चरणों के नीचे। तालियाँ बजाने लगी थीं तुम खुशी के मारे।

यह कैसी बात है ? मैं क्या जानती थी कि तुम बिलकुल ही समाप्त कर डालोगे ?

आश्चर्य में पड़ रही हो क्यों ? इस दुस्साध्य प्राप्ति को उठाने की शक्ति का संचार इस शरीर में दुर्जय वेग से किसने कर दिया था। संग्रह का भार यदि हमारे गणेश मजूमदार के ऊपर रहता, तो उस हालत में उसका पौरुष मेरे कपड़ों के बक्स को बहुत ही

क्रम हानि पहुँचाता।

छिः, छिः, अन्तू, मुझसे तुमने कहा क्यों नहीं ?

शोक मत करो। कोई अत्यन्त शोचनीय अवस्था नहीं है। दो कुरतों को रँगवाकर मैंने रख दिया है प्रतिदिन की आवश्यकता के लिए। पारी-पारी से उनको धो-धोकर पहनने का काम चल रहा है। और भी दो आपद्धर्म के लिए तहियाकर रखे हुए हैं। यदि किसी दिन इस संन्दिग्ध संसार में अपने को भद्रवंशीय प्रमाणित करने की आवश्यकता पड़ेगी, तो उन दोनों कुर्तों में धोबी-दर्जी के सर्टीफिकेट मौजूद हैं।

सृष्टिकर्ता के सार्टीफिकेट तो मौजूद हैं इस चेहरे में ही—गवाह बुलाने की जरूरत न पड़ेगी तुमको।

स्तुति! नारी के दरबार में स्तवों की अत्युक्ति तो चिरकाल से पुरुषों के ही अधिकार में रहती आयी है, तुम उसको उलट देना चाहती हो ?

हाँ, चाहती हूँ। प्रचार करना चाहती हूँ कि आधुनिक युग में स्त्रियों के अधिकार बढ़ते जा रहे हैं। पुरुषों के सम्बन्ध में भी सत्य बात कहने की अब उन्हें बाधा नहीं रही। नवीन साहित्य में देखती हूँ कि बंगाली नारियाँ अपनी ही प्रशंसा में व्यस्त हो रही हैं, देवी की प्रतिमा तैयार करने का कुम्भकार का काम उन्होंने स्वयं ही अपना लिया है। स्वजाति के गुण-गौरव पर वे साहित्यिक रंग चढ़ा रही हैं। वह उनके अंगरागों में ही शामिल है, उनके अपने ही हाथ का पीसा हुआ है, विधाता के हाथ का नहीं है। मुझे लज्जा मालूम होती है। अब चलो बैठकखाने में।

इस कमरे में भी बैठने की जगह है। मैं तो अकेला ही एक विशाल सभा नहीं हूँ।

अच्छा, तो बताओ, जरूरी बात क्या है ?

अकस्मात् कविता का एक पद मुझे याद आ गया, किन्तु किस जगह मैंने इसको पढ़ा था यह बात याद नहीं आ रही है। प्रातःकाल से ही हवा टटोलता हुआ घूम रहा हूँ। तुमसे पूछने के लिए आया हूँ।

अत्यंत आवश्यक जान पड़ता है। अच्छा कहो।

जरा सोचकर बताओ कि किसकी रचना है?

अपना सर्वनाश था देखा
मैंने तव नेत्रों में।

किसी प्रसिद्ध कवि का तो नहीं ही है।

पहले सुना हुआ तुम्हें नहीं जान पड़ रहा है? कभी सुना हुआ तो जान पड़ रहा है, दूसरी पंक्ति क्या है?

मेरा अनुमान था कि दूसरी पंक्ति स्वयं तुम्हें याद आ जायगी।

यदि एक बार और कहो तो संभवतः स्मरण आ जाय।

अच्छा सुनो—

प्रहर अंत में प्रकाश रंजित,
उस दिन चैत्र मास में।
अपना सर्वनाश था देखा,
मैंने तव नयनों में॥

अतीन्द्र के मस्तक पर हाथ रखते हुए एला ने कहा—आजकल कैसा पागलपन करना तुमने प्रारंभ किया है?

काठ के तख्ते और कापी को मेज पर फेंककर एला ने कहा—पड़ा रहने दो मेरा काम। बत्ती जला दूँ।

नहीं, रहने दो। बत्ती प्रत्यक्ष को प्रमाणित करती है, चलो चलें दीपहीन मार्ग से अप्रत्यक्ष की ओर। चार साल से कुछ कम समय की बात होगी। स्टीमर द्वारा मैं मोकामाघाट के उस पार जा रहा था। उस समय तक मैं अपनी पैतृक सम्पत्ति के बचे-

खुचे अंश का अधिकारी था। किंतु वह कर्ज के भार से लदा हुआ था शरद के जलविहीन बादलों की भाँति। शरीर पर सिल्क का पंजाबी कुरता था, कन्धे पर मूँगे की चादर थी। फर्स्टक्लास डेक पर बेंत की आरामकुर्सी पर अकेला बैठा हुआ था। फेंके हुए अखबार के पन्ने इधर-उधर फरफराते हुए उड़ रहे थे। अच्छा लग रहा था, देखने में जान पड़ रहा था कि मूर्तिमती जनश्रुतियों का अस्तव्यस्त नृत्य हो रहा है। तुम थी सर्वसाधारण के दल में कमर कसकर डेक पैसेंजर की हैसियत से। अचानक मेरे पीछे से अनजाने ही द्रुतवेग से तुम आ गईं मेरे सामने; आज भी आँखों के सामने दिखाई पड़ रही है तुम्हारी वह ब्राउन रंग की साड़ी। तुम्हारे माथे का कपड़ा जूड़े के साथ काँटे से चिपकाया हुआ था, वह हवा लगने से दोनों ओर फूल रहा था। चेष्टा करके असंकोच का भाव दिखाते हुए तुमने प्रश्न किया—'आप खद्दर क्यों नहीं पहिनते ?' याद है ?

खूब अच्छी तरह। अपने मानस-चित्र से तुम बातें कर सकते हो, मेरा चित्र तो मूक है।

मैं आज उस दिन की पुनरुक्ति करूँगा। तुमको सुनना पड़ेगा।

सुनूँगी क्यों नहीं ? उस दिन जहाँ पर मेरे नवीन जीवन की टेक थी, वहीं पर मेरा मन बार-बार लौट जाना चाहता है।

तुम्हारे गले का स्वर सुनकर ही मेरा समूचा शरीर चौंक पड़ा, वही स्वर मेरे मन में आकर एकाएक प्रकाश की छटा की भाँति लग गया। मानो आकाश से कोई सुन्दर पक्षी झपेटा मारकर मेरे चिर दिनों को छीन ले गया। अपरिचिता ललना की उस अचिन्तनीय स्पर्धा पर यदि मैं क्रोध दिखा सकता तो उस दिन की नौका इतने बड़े औघट घाट पर मुझे न पहुँचा देती। भले लोगों के ही मुहल्ले में, अन्तिम दिन तक, परिचित पथपर ही बीत

जाते। मन था भींगी हुई दियासलाई की तरह, क्रोध की आग जली नहीं। अहंकार मेरे स्वभाव का सर्वप्रधान सद्गुण रहा है, इसीलिए झट से मन में खयाल आ गया कि इस लड़की ने मुझे विशेष रूप से पसन्द न किया होता, तो इस प्रकार विशेष रूप से मुझे धमकी देने के लिए न आती। खद्दर का प्रचार—यह तो एक बहाना है, सच्ची बात है या नहीं, बताओ ?

अजी, कितनी ही बार कह चुकी हूँ—बहुत देर तक डेक के कोने में बैठकर तुमको मैं ध्यान से देख रही थी। यह भूल गई थी कि और कोई इस पर लक्ष्य रख रहा है या नहीं। जीवन में वही मेरा सबसे बढ़कर आश्चर्य है, एक ही बार में चिरपरिचय। मन ने कहा—कहाँ से आ गया यह अतिशय दूर जाति का आदमी, यह तो चारों ओर की नाप से बना हुआ नहीं है, सेवारों के बीच यह शतदल कमल है। उसी समय मन-ही-मन मैंने प्रतिज्ञा कर ली थी कि इस दुर्लभ मनुष्य को खींच लाना होगा, केवल अपने ही पास नहीं, हम सभी लोगों के पास।

मेरे भाग्य से तुम्हारी एक वचन की चाह दबी रह गयी बहुवचन की चाह के नीचे।

मेरे पास उपाय नहीं था अमू। द्रौपदी को देखने के पहले ही कुन्ती ने कहा था, तुम सभी लोग मिलकर अपना अपना हिस्सा बाँट लेना। तुम्हारे आने से पहले ही, मैंने कहा था मैं अकेले अपने लिए कुछ भी न रखूँगी। मैं देश के सामने वाग्दत्ता हूँ।

अधार्मिक है तुम्हारा प्रतिज्ञा-ग्रहण, इस प्रतिज्ञा की रक्षा करना भी तुम्हारा प्रतिदिन का विद्रोह है। यदि तुम प्रतिज्ञा भंग कर देती तो सत्य की रक्षा होती। जो लोभ पवित्र है, जो अन्तर्यामी की आदेशवाणी है, उसको तुमने अपने दल के पैरों के नीचे रौंद डाला है, इसकी सजा तुमको भुगतनी पड़ेगी।

अन्तू, सजा की तो कोई सीमा नहीं है। वह दिनरात मुझको मार रही है। जो आश्चर्यप्रद सौभाग्य सभी साधनाओं के परे है, जो दैव का अयाचित्त दान है, वह मेरे सामने आ गया तो भी मैं उसको ले नहीं सकी। हृदय में गाँठ बँधी हुई है, इस दशा में भी इतना बड़ा दुस्सह वैधव्य किसी भी स्त्री के भाग्य में न आना चाहिये। मैं एक अभिमंत्रित घेरे के अन्दर पड़ी हुई थी। किन्तु तुमको देखते ही मेरा यह मन उत्सुक हो उठा, बोला—टूट जाने दो समस्त घेरे को। ऐसा विप्लव उपस्थित हो सकता है यह बात मैं किसी दिन भी सोच नहीं सकी थी। इसके पहले किसी दिन मेरा मन विचलित नहीं हुआ था, यह कहना झूठ बोलना होगा। किन्तु चंचलता को जीतकर मैं अपनी शक्ति के बल पर प्रसन्न हो गयी थी। पर जीत लेने का वह गर्व आज नहीं है, इच्छा को मैंने खो दिया है—बाहर की बातों को छोड़ दो हृदय को ध्यान से देखो, हार गयी हूँ मैं। तुम हो वीर, मैं हूँ तुम्हारी वन्दिनी।

मैं भी हार गया हूँ अपनी वन्दिनी के सामने। हार समाप्त नहीं हुई है। युद्ध में प्रतिक्षण हारता जा रहा हूँ।

अन्तू, फर्स्ट क्लास के डेक पर तुमने अपूर्व आविर्भाव की भाँति मुझको दूर से दर्शन दिये थे, उस समय भी मैं जानती थी कि थर्ड क्लास का टिकट हमारे आधुनिक गौरव का एक उज्ज्वल निदर्शन है। अन्त में तुम चढ़ गये रेलगाड़ी पर सेकेण्ड क्लास में मेरे तन और मन को तुमने प्रबल वेग से आकर्षित कर लिया उसी क्लास की तरफ। यहाँ तक कि मन में एक चातुरी की कल्पना आ गयी, मैंने सोचा कि ट्रेन छुटने के अन्तिम क्षण में तुम्हारे ही डब्बे में चढ़ जाऊँगी, कहूँगी उतावली में गलती हो गयी इसी कारण चढ़ आयी हूँ। काव्य-शास्त्र में स्त्रियाँ ही अभिसार

करती आयी हैं। सांसारिक विधियों में बाधाएँ होने के कारण सम्भवतः कवियों की यह कल्पना है। अनिश्चित् मन की जितनी इधर-उधर बिखरी हुई इच्छाएँ हैं, वे अन्दर की अंधेरी कोठरी में चक्कर खा-खाकर दीवार से माथा टकराती हुई घूमती-फिरती हैं। उनकी बातों को स्त्रियाँ परदे के बाहर किसी तरह भी स्वीकार करना नहीं चाहतीं। तुमने मुझसे स्वीकार करा लिया है।

क्यों स्वीकार किया ?

नारी जाति का घमंड तोड़कर केवल यही स्वीकृति तुमको दे सकी हूँ, और तो कुछ भी मैं कर नहीं सकी।

अकस्मात् अतीन एला का हाथ जोर से दबाकर बोल उठा—तुम क्यों नहीं कर सकी। कौन सी बाधा थी मुझे ग्रहण करने में। समाज ? जाति-भेद ?

'छिः छिः, ऐसी बात विचार में भी मत लाना, बाहर की बाधा नहीं है, बाधा है अन्तर की।

'तुमने यथेष्ट प्यार नहीं किया है ?'

'इस यथेष्ट शब्द का कुछ अर्थ नहीं है अन्तू। जो शक्ति हाथ लगाकर पर्वत को ठेल नहीं सकी, उसको दुर्बल कहकर उसकी निन्दा मत करो। शपथ करके मैंने सत्य ग्रहण किया था कि विवाह न करूँगी। प्रतिज्ञा न करने पर भी शायद विवाह सम्भव न होता।'

'क्यों नहीं होता ?'

'क्रोध मत करो अन्तू, प्यार करती हूँ इसीलिए तो यह संकोच है। मैं हूँ दिवालिया, मैं तुमको भला कितना दे सकती हूँ।'

स्पष्ट बता दो।

'अनेक बार बता चुकी हूँ।'

'फिर बताओ, आज सब कहना-सुनना समाप्त कर देना

चाहता हूँ, इसके बाद फिर पूछूँगा नहीं।

बाहर से पुकार आई—'बहिनजी।'

'क्या रे अखिल, आजा न अन्दर।'

लड़के की उम्र सोलह अथवा अठारह वर्ष की होगी। जिद और दुष्टता से भरा हुआ प्रिय दर्शन चेहरा है। घुँघराले बाल इधर-उधर बिखरे हैं, कोमल साँवला रंग है। दोनों चंचल आँखें चमाचम चमक रही हैं। खाकी रंग की कमीज पहिने है, कमर तक का उसी रंग का खुले बटनवाला कोट है, छाती दिखाई पड़ रही है। कमीज के दोनों ओर की जेबें तरह-तरह की फालतू चीजों से फूली हुई हैं, छाती की जेब में विचित्र झलकवाली हरिण की सींग की एक छुरी है, कभी वह खेलने की नाव और कभी एरोप्लेन का नमूना तैयार करता है। सम्प्रति वह मल्लिक कम्पनी के आयुर्वेदिक बगीचे में पानी खींचने का हवाई-यंत्र देख-आया है। बिस्कुट के टीन आदि तरह-तरह की चीजों को जोड़-जोड़कर उसी की नकल करने का चेष्टा कर रहा है। अँगुली काट ली है, उसके ऊपर चिथड़ा लपेटकर बाँधा हुआ है, एला के पूछने पर कुछ ध्यान ही नहीं देता। एला इस मातृ-पितृहीन लड़के की दूर सम्पर्कीया आत्मीया है, उसके अनेक उत्पात सह लेती है। अखिल किसी के यहाँ से एक नाटे कद का बन्दर खरीद लाया है। यह जानवर भण्डार-घर में चोरी करने में प्रवीण है। एला के छोटे से परिवार में यह जन्तु एक बहुत बड़ा उत्पात बना हुआ है।

कमरे में घुसते ही अखिल ने सलज्ज द्रुतगति से पैर छूकर एला को प्रणाम किया। एला समझ गई कि यह प्रणाम किसी विशेष अनुष्ठान के अन्तर्गत है, क्योंकि भक्ति-वृत्ति अखिल का स्वभाव-सिद्ध गुण नहीं है।

एला ने कहा—'अपने अन्तू भैया को प्रणाम न करेगा ?'

कुछ भी जवाब न देकर अखिल अतीन की तरफ पीठ घुमाकर खड़ा हो गया। अतीन ऊँचे स्वर से हँस पड़ा। अखिल की पीठ पर थपकी लगाकर बोला—'शाबाश, मस्तक यदि झुकाना ही हो तो एक ही देवता के चरणों पर। उस एकेश्वरी के सामने मेरा भी मस्तक झुका हुआ है। अब प्रसाद के हिस्से के लिए क्रोध मत करो भाई, बचा-खुचा ही यथेष्ट है।'

एला ने अखिल से कहा—'तुझे कौन-सी बात कहनी है, कह जा।'

अखिल बोला—'कल है मेरी माता का मृत्यु-दिवस।'

'ठीक तो है। मैं बिलकुल ही भूल गयी थी। किसी को श्राद्ध का निमंत्रण देना चाहता है?'

'किसी को भी नहीं।'

'तो क्या चाहता है?'

'पढ़ाई से छुट्टी चाहता हूँ तीन दिन की।'

'क्या करेगा छुट्टी लेकर।'

'खरगोश का पिंजड़ा तैयार करूँगा।'

'तेरा खरगोश तो एक भी नहीं बचा है, तू पिंजड़ा तैयार करेगा किसके लिए?'

अतीन ने हँसकर कहा—'खरगोश तो कल्पना करने से ही हो जाता है, पिंजड़ा तैयार करना ही असल बात है। मनुष्य अनित्य है, आता है और चला जाता है किन्तु नित्य काल के योग्य उसके लिए पिंजड़ा तैयार करने का भार भगवान् मनु से लेकर मनु के आधुनिक अवतार तक सभी ने ले रखा है। इस काम में उन लोगों को भयंकर शौक है।'

'अच्छा अखिल जा, तेरी छुट्टी है।'

दूसरी बात न कहकर अखिल दौड़ता हुआ चला गया।

अतीन ने कहा—'उसको मैं पालन न कर सका। मेरी पहले की सम्पत्ति की बची-खुची चीजों में एक रिस्टवाच भी था, वह है आधुनिक लड़कों के लिए बहुत बड़ी वस्तु। एक दिन उसे मैंने उसको देना चाहा था। सिर हिलाकर वह चला गया। इसी बात से समझ जाओगी उसके और मेरे बीच का सम्बन्ध कायुम्यूनल (साम्प्रदायिक) हो उठा है, यह अन्तू और अखिल में दंगा हो जाने का लक्षण है।'

'लड़कों से मेल-जोल बढ़ाने में तुम्हारा जोड़ीदार कोई भी नहीं है, फिर भी इस बन्दर से तुम हार मान गये क्यों?'

'बीच में तीसरा पक्ष है, नहीं तो, वह और मैं दोनों हरिहर बन जाते। छोड़ो इस बात को, अब बताओ तुम्हारी कैफियत क्या है। क्यों मुझे तुमने हटा रखा।'

'एक सीधी-सी बात तुम याद क्यों नहीं रखते कि तुमसे मैं उम्र में बड़ी हूँ।'

यह है कि इस सीधी-सी बात को मैं भूल नहीं सकता कि तुम्हारी उम्र है, अट्ठाईस, मेरी उम्र अट्ठाईस के ऊपर कई महीने अधिक की है। यह प्रमाणित करना अत्यन्त ही सुगम है, क्योंकि दस्तावेज ताम्र-पत्र पर ब्राह्मी-लिपि में लिखा हुआ नहीं है।'

'मेरा अट्ठाईस तुम्हारे अट्ठाईस को पार करके बहुत दूर चला गया है।'

तुम्हारे अट्ठाईस में यौवन की सभी बत्तियाँ निर्धूम जल रही हैं। अबतक भी तुम्हारी खिड़कियाँ जिन लोगों की तरफ खुली हुई हैं, वे अनागत हैं, वे अचिन्तनीय हैं।

एली, तुम मेरी बात को किसी तरह भी समझना नहीं चाहती, इसी कारण समझ नहीं रही। अपने दल के सामने भगवान् के सत्य

के विरुद्ध तुमने सत्य का प्रण किया है, इसीलिए तरह-तरह के तर्कों की रचना करके अपने को भुला रही हो, मुझको भी। भुला दो, किन्तु यह बात मत कहो कि मेरे जीवन में अब तक भी अनागत अचिन्त्य दूर रह गया है। वह आ गया है, और वह हो तुम। तो भी, आज भी वह अनागत है। चिरकाल तक क्या उसके लिए द्वार खुला रहेगा। उस शून्य के भीतर से क्या बराबर ही मेरा आर्त्तस्वर बजता रहेगा। चाहता हूँ, तुमको चाहता हूँ, और दूसरी ओर से कुछ भी उत्तर न प्राप्त होगा?

न प्राप्त होगा, ऐसी बात कैसे कह रहे हो अकृतज्ञ चाहती हूँ, चाहती हूँ, चाहती हूँ, तुमसे अधिक कुछ भी मैं नहीं चाहती इस जगत् में। जिस समय भेंट हो जाने पर शुभकामना परिपूर्ण होती, उस समय तो भेंट ही नहीं हुई। किन्तु तो भी कह रही हूँ कि सौभाग्य से ही नहीं हुई।

क्यों? क्या हानि हो जाती उससे।

मेरा जीवन सार्थक हो जाता, उसका मूल्य ही कितना है, तुम किसी की बराबरी के नहीं हो। बहुत बड़े हो तुम। दूर पड़ी हूँ, इसी लिए तो देख सकी। तुम्हारे उस असाधारण प्रकाश को। अपने समान साधारण व्यक्ति द्वारा तुमको जकड़ रखने की बात कल्पना में लाते हुए भी मुझे डर लगता है। मेरे छोटे से संसार में प्रतिदिन की तुच्छता के पात्र हो जाओगे तुम। यह बात मैं तुमको किस प्रकार समझाऊँ कि मैं कितनी उच्चकने पर तुम्हारा मस्तक देख पाती हूँ। जीवन की जितनी छोटी-छोटी बातें हैं वे ही तो स्त्रियों की पूँजी हैं। उस बोझ से तुम्हारे समान पुरुष को भी ढक देने से भयभीत न होनेवाली, स्त्रियाँ शायद मौजूद हैं। वे कितनी दुःखान्त घटनाएँ उत्पन्न कर चुकी हैं, यह बात मैं जानती हूँ। मैंने स्वयं अपनी आँखों से देखा है कि लतापुंज ने वनस्पति को

बढ़ने नहीं दिया। ऐसी ही स्त्रियाँ शायद समझती हैं कि उन्हें जकड़ रखना ही यथेष्ट है।

एला, जो पाता है वही जानता है कि यथेष्ट किसको कहते हैं।

मैं अपने आपको भुलावे में नहीं डालना चाहती अन्तू। प्रकृति ने हम लोगों का जीवन भी अपमानित किया है। इस संसार में हम लोग जीव-विज्ञान का संकल्प ढोती आयी हैं। साथ-साथ ले आई हैं जीव-प्रकृति के अपने जुटाये हुए अस्त्रों और मन्त्रों को भी। उन सबको उचित रीति से व्यवहार में लाने की जानकारी होती तो हम लोग सरलता से अपने सिंहासन पर आसीन हो सकतीं। साधना के क्षेत्र में पुरुष को अपनी श्रेष्ठता प्रमाणित करनी पड़ती है। वह श्रेष्ठता क्या वस्तु है, सौभाग्यवश मुझे यह जान लेने का अवसर मिल गया है। पुरुष बहुत बड़े हैं।

मस्तिष्क में बड़े हैं?

हाँ, मस्तिष्क में ही। प्रकृति को अतिक्रमण करके बड़े बनने की महान शक्ति उसी के मस्तिष्क में है। मुझमें बुद्धि-शुद्धि यथेष्ट हो या न हो, मैं नम्र होकर अपने को जो समर्पित कर चुकी हूँ, वह केवल उसी को देखकर।

किसी नीच ने उपद्रव नहीं किया?

किया है। हमारे विचार से जो लोग जीव-विज्ञान के नीचे की मंजिल में उतर आते हैं वे भद्दी सूरत के होकर बिगड़ जाते हैं। व्यक्तिगत विशेष इच्छा या प्रयोजन न रहने पर भी नीचे खींच लाने के साधारण षड़यंत्र में हम सभी स्त्रियों ने एक साथ मिलकर सहयोग किया है, सज-धज, का भार, हाव-भाव एवं बनावटी बातों में हम सभी एक हैं।

मूर्खों को भुलावे में डालने के लिए!

हाँ जी, तुम लोग बेवकूफ हो, अति सहज मंत्र से ही भूल

जाते हो, इसीलिए हम लोगों को इतना गर्व है। हम लोगों ने बेवकूफों को प्यार किया है, तो भी उन लोगों को स्थूल बेवकूफी के सर्वोच्च शिखर पर देखा है। वे जब प्रकाश ले आये, तब हमने पूजा की। बहुत से नीचाशय गन्दे निन्दकों को हमने देखा है, और बहुतेरे कृपण कुत्सित लोगों को भी देखा है। उन सभी को छोड़कर, शेष सबको मान लेने पर भी तो बहुत बच रहता है। उन्हीं बचे-खुचे लोगों को ही हमने देखा है उज्ज्वल प्रकाश में; उनमें से बहुतों के नाम तक भी किसी को याद न रहेंगे, तो भी वे बड़े हैं।

एली, तुम्हारी बातें सुनकर मुझे लज्जा मालूम हो रही है, ऐसा मालूम हो रहा है कि कुछ भी प्रतिवाद न करने से अच्छा न लगेगा। फिर भी अच्छा लग रहा है। किन्तु सच्ची बातों में तुमसे मैं हार न मान सकूँगा। अपने देश के पुरुषों में कापुरुषता के जो लक्षण मैंने लड़कपन से देखे हैं, जिनके सम्बन्ध में मुझे बार-बार चिन्ता करनी पड़ी है, वह बात आज मैं तुमसे कहूँगा। मैंने देखा है, मेरे परिचित परिवारों में, और अपने परिवार में सास का असहनीय, अन्यायपूर्ण आधिपत्य रहता है। सास के अत्याचारों की कथाएँ चिरकाल से इस देश में प्रचलित हैं।

हाँ, यह बात मैं जानती हूँ। अपने ही घर में मैंने देखा है, जो मनुष्य शरीर के गठन में कमजोर है, दुर्बल का यमराज तो वही है—उसकी तरह निष्ठुर कोई हो नहीं सकता।

एला, ऐसी बातें कहकर तुम अपनी भावी सास की निन्दा की भूमिका मत तैयार करो। नववधुओं पर अमानुषिक अत्याचार की खबरें प्रायः मैं सुनता रहता हूँ, और देखता हूँ, उसकी प्रधान नायिका रहती है सास। किन्तु सास को अबाध अन्याय

करने का अधिकार दिया है किसने। यह तो उस माँ के बच्चों का ही काम है। अत्याचारिणी के विरुद्ध अपनी स्त्री की सम्मान रक्षा करने की शक्ति जिन लोगों में नहीं है, उन नाबालिगों को क्या कभी विवाह करने योग्य उम्र होती है? जब होती है तब वे स्त्रियों के बच्चे बन जाते हैं। जहाँ पुरुष का पौरुष दुर्बल है, वहीं स्त्रियाँ उतर आती हैं और उन्हें भी नीचता की तरफ उतारती रहती हैं। अब तो देखता हूँ कि हमारे देश में जो लोग कुछ काम करने का निश्चय कर लेते हैं, वे स्त्रियों को छोड़ देना चाहते हैं—वे स्त्रैण कापुरुष स्त्रियों से डरने लगते हैं। इस कारण ही कापुरुषों के इस देश में, तुमने विवाह न करने की प्रतिज्ञा की है, इस भय से कि तुम्हारे स्त्रियोचित प्रभाव से पीछे कहीं कोई कच्चा-मन लचककर टेढ़ा न हो जाय किन्तु जो यथार्थ पुरुष हैं, वे यथार्थ स्त्रियों के ही जोर से चरितार्थ हो जायँगे—विधाता के ही हाथ का आज्ञापत्र हमारे रक्त में मौजूद है। जो उस विधि-लिपि को व्यर्थ कर देता है, वह पुरुष नाम की योग्यता नहीं रखता। परीक्षा का भार तुम्हारे हाथ में ही था, परीक्षा करके तुमने मुझे देख क्यों नहीं लिया?

अन्तू, मैं तर्क कर सकती थी, किन्तु तुम्हारे साथ मैं तर्क न करूँगी। क्योंकि मैं जानती हूँ, तुमने अतिशय तंग होकर ही इन सब कुयुक्तियों का प्रसंग उठाया है। मेरी प्रतिज्ञा की बात तुम किसी तरह भी भूल नहीं सकते।

नहीं, भूल न सकूँगा, तुमने कह दिया है न कि पुरुष बहुत बड़े हैं, तुमको इसी बात का डर है कि स्त्रियाँ उनको छोटा बना देंगी। स्त्रियों को बड़ी होने की जरूरत ही नहीं पड़ती वे जिस परिमाण में हैं, उतना अपूर्ण है। जो अभागा पुरुष बड़ा नहीं है वह है असम्पूर्ण, उसके लिए सृष्टिकर्ता लज्जित है।

अन्तू, इस असम्पूर्णता के बीच भी हम लोग विधाता की इच्छा देख पाती हैं—वह इच्छा बड़ी है।

एली, विधाता की इच्छा ही बड़ी है, यह तो मैं कह नहीं सकता, क्योंकि उनकी कल्पना किसी अंश में भी छोटी नहीं है। उस कल्पना की तूलिका के संस्पर्श का जादू स्त्रियों की प्रकृति में लग गया है। वे ही संसार के क्षेत्र में आर्टिस्ट (कलाकार) की साधना ले आयी हैं, रंग से, स्वर से, अपने तन मन और प्राण से अनिर्वचनीयता को प्रकाशित कर रही हैं। यह सहज स्वाभाविक शक्ति का काम है। इसी कारण यह सहज नहीं है। यह जो तुम्हारे शंख की भाँति चिकने रंग के गले में सोने का हार दिखाई दे रहा है उसके लिए तुमको नोट कंठस्थ करने नहीं पड़े। ऐसी अभागिनी भी मौजूद हैं जो जीवन-लोक में सौन्दर्य की सृष्टि से रस उत्पादन न कर सकीं, मोटे सोने का बाला पहिनकर गृहिणीपन करती हैं वे ही मुखरा। वे दासी बनकर, आँगन लीप-पोतकर जीवन बिता देती हैं।

मैं सृष्टिकर्ता को ही दोष दूँगी अन्तू। स्त्रियों को लड़ाई करने की शक्ति उन्होंने क्यों नहीं दी। वंचना करके उन्हें क्यों अपनी रक्षा करनी पड़ती है। जब मुझे पुस्तकों में यह बात पढ़ने को मिली कि, दुनिया में सबसे अधिक घृणित जो गुप्तचर का पेशा है, उस पेशे में स्त्रियों की निपुणता पुरुषों की अपेक्षा अधिक है, तभी मैंने विधाता के पैरों पर माथा पटक पटककर कहा था, सात जन्मों में भी कभी मेरा जन्म स्त्री-योनि में न होवे। मैंने स्त्री-सुलभ नेत्रों से पुरुषों को देखा है, इसीलिए सबको काट-छाँट-कर मैं उनकी अच्छाई को देख सकी हूँ, उनके बड़प्पन को भी। जब मैं देश के बारे में विचार करने लगती हूँ, तब उन सब सोने के टुकड़ों—लड़कों—के ही सम्बन्ध में सोचा करती हूँ। मेरा देश तो

वे ही लोग हैं। वे यदि गलती करते हैं तो खूब बड़ी ही गलती करते हैं। जब मैं सोचती हूँ कि अपने घरों में ही इनको जगह नहीं मिली तो मेरी छाती फटने लगती है। मैं, उनकी माँ हूँ, उनकी बहिन हूँ, उनकी ही कन्या हूँ, यह बात याद करने से मेरी छाती भर आती है। अपने आपको सेविका कहने में अंग्रेजी पढ़ी लिखी लड़कियाँ हिचकती हैं—किन्तु मेरा समस्त हृदय बोल उठता है—मैं हूँ सेविका, तुम लोगों की सेवा करने में ही मेरी सार्थकता है। हमारे प्रेम का चरम फल इस भक्ति में है।

अच्छी ही बात है, तुम्हारी उस भक्ति के निमित्त अनेक पुरुष मौजूद हैं, किन्तु मुझको क्यों ? भक्ति न होने पर भी मेरा काम चल जायगा, स्त्रियों के सम्बन्ध की जो तालिका तुमने दी है, माँ बहिन, लड़की की। उसमें से एक मुख्य बात छूट गयी है, मेरे ही भाग्य के दोष से।

तुम अपने को जितना जानते हो, उससे मैं तुमको अधिक जानती हूँ अन्तू। मेरे आदर के छोटे से पिंजड़े में दो दिनों में ही तुम्हारे डैने फड़फड़ाने लगते। तृप्ति की जो साधारण सामग्री हमारे हाथों में है, उसका आयोजन किसी दिन तुम्हारे सामने ही पेंदी में आकर ठहर जाता। तब तुम जानते कि मैं कितनी गरीब हूँ। इसीलिए अपनी सभी माँगें मैंने वापस ले ली हैं। सम्पूर्ण चित्त से तुमको देश के हाथ में सौंप दिया है। वहाँ पर तुम्हारी शक्ति स्थान की कमी के कारण दुःख न पावेगी। अतीन की दोनों आँखें जल उठीं, मर्मस्थल पर मानो अत्यन्त चोट लग गयी। कमरे के इस छोर से उस छोर तक वह एक बार टहल आया। उसके बाद एला के सामने आकर खड़ा हो गया, बोला—तुमको कड़ी बात सुनाने का समय आ गया है। मैं

पूछता हूँ देश के निमित्त हो या जिस किसी के लिए भी क्यों न हो, तुम मुझे सौंप देनेवाली होती हो कौन ? तुम सौंप दे सकती थी माधुर्य के दान को, जो तुम्हारी अपनी यथार्थ सामग्री थी। उसको यदि सेवा कहना चाहो तो वही कहो, यदि वरदान कहना चाहती हो, तो वही कहो। मुझे यदि अहंकार करने दोगी तो मैं करूँगा अहंकार, नम्र होकर यदि तुम अपने दरवाजे पर आने को कहो तो वहाँ मैं आ भी सकता हूँ। किन्तु अपने दान के अधिकार को आज तुम छोटा बनाकर देख रही हो। नारी की महिमा से हृदय के ऐश्वर्य को जो कुछ तुम दे सकती थी, उसको हटाकर तुम कह रही हो—देश को दे दिया मेरे हाथ में। नहीं दे सकती हो, नहीं दे सकती, कोई भी नहीं दे सकता। देश को लेकर एक हाथ से दूसरे हाथ में घुमाना-फिराना संभव नहीं हो सकता।

एला का चेहरा फीका, बदरंग हो गया। उसने कहा—क्या कह रहे हो, अच्छी तरह समझ नहीं रही हूँ।

मैं कह रहा हूँ, नारी को केन्द्र बनाकर जो माधुर्यलोक फैला हुआ है, उसका फैलाव यद्यपि ऊपर से देखने में छोटा मालूम होता है, तो भी हृदय में उसकी गंभीरता की कोई सीमा ही नहीं है,—वह पिंजड़ा नहीं है। किन्तु देश की उपाधि देकर जिसके बीच मेरा बसेरा निर्धारित कर दिया था तुम लोगों ने अपने दल के बनाये हुए देश में, दूसरों के लिए वह जो कुछ भी हो, मेरे स्वभाव के लिए वही तो है पिंजड़ा। मेरी अपनी शक्ति उसके अन्दर पूरे तौर से प्रकाशित नहीं होती, इसीलिए वह अस्वस्थ हो जाती है, उसमें विकृति उत्पन्न हो जाती है, जो चीज उसकी अपनी नहीं है, उसे ही व्यक्त करने के प्रयत्न में पागलपन करने लगती है, लज्जित हो जाता हूँ, फिर भी बाहर

निकलने का दरवाजा बन्द रहता है। जानती नहीं हो, मेरे डैने छिन्न-भिन्न हो गये हैं, दोनों पैरों में बेड़ी कसी हुई पड़ी है। अपने देश में अपना स्थान लेने का दायित्व अपनी ही शक्ति में है, वह शक्ति मुझमें थी। क्यों तुमने मुझे उस बात को भूल जाने दिया।

भर्राई हुई आवाज में एला ने कहा—तुम भूल गये क्यों अन्तू?

भुलावे में डाल देने की शक्ति तुम लोगों में अमोघ होती है, भूल तो नहीं गया हूँ; इसके लिए मैं लज्जित हो जाता। मैं हजारों बार यही मान लूँगा कि, तुम मुझे भुलावे में डाल सकती हो, यदि मैं न भूलता तो अपने पौरुष पर सन्देह करने लगता।

यदि ऐसी ही बात है तो फिर मेरी भर्त्सना किसलिए करते हो?

किसलिए? यही बात तो बतला रहा हूँ। भुलावे में डालकर तुम उसी जगह पर ले जाओ, जहाँ तुम्हारा अपना संसार है, अपना अधिकार है। दल की बातों को प्रतिष्ठित करके कहने से यही कहना होगा कि, तुम कुछ लोगों ने जगत् में एक मात्र कर्तव्य के मार्ग को बाँध रखा है। तुम लोगों के पक्के सरकारी कर्तव्य-मार्ग में मेरा जीवन-स्रोत चक्कर खाकर गँदला होता जा रहा है।

सरकारी कर्तव्य?

हाँ, तुम लोगों के स्वदेशी कर्तव्य के जगन्नाथजी का रथ। मंत्र-दाता ने कहा—सभी एक साथ मिलकर एक मोटा रस्सा कंधे पर रखकर दोनों आँखें बन्द करके खींचते रहो—यही एक मात्र काम है। हजार-हजार लड़कों ने कमर कसकर रस्सा पकड़ लिया। कितने ही गिर गये पहिये के नीचे, कितने ही

जन्म भर के लिए पंगु हो गये। ऐसे ही समय में वापसी रथ-यात्रा के लिए मंत्र पढ़ा जाने लगा। रथ लौट पड़ा। जिनकी हड्डियाँ टूट गयी थीं, वे जुट नहीं सकतीं, पंगुओं के दल को झाड़-बुहारकर फेंक दिया गया धूलि के ढेरों में। अपनी शक्ति के ऊपर विश्वास रखने को प्रारम्भ से ही इस तरह संकुचित कर दिया गया था कि सभी कोई सरकारी पुलिसों के साँचे में अपने को ढाल देने के लिए स्पर्धा के साथ राजी हो गये। सरदार के रस्सी खींचने से, जब कि सबने एक ही नाच नाचना शुरू कर दिया, तो आश्चर्य में पड़कर वे लोग सोचने लगे—इसीको कहते हैं शक्ति का नाच। नाचनेवाले ज्योंही कुछ ढिलाई कर देते हैं, त्योंही हजार-हजार मनुष्य-पुतलियाँ बेकार हो जाती हैं।

अन्तू, इनमें से बहुतेरे पागलपन करके कदम बढ़ाने लगे, ताल को वे ठीक न रख सके।

प्रारम्भ से ही यह जान लेना उचित था कि मनुष्य बहुत दिनों तक पुतली का नाच नहीं नाच सकता। हो सकता है कि तुम मनुष्य के स्वभाव का संस्कार कर सको, परंतु उसमें समय लगता है। स्वभाव को मारकर मनुष्य को पुतला बना देने से काम सहज हो जाता है, यह समझना भूल है। मनुष्य को आत्मशक्ति का विचित्र जीव समझ लेना ही सच्चा समझना होता है। यदि मुझे वही जीव मानकर तुम श्रद्धा करती, तो मुझको तुम अपने दल में न खींचती, हृदय में खींच ले जाती।

अन्तू, शुरू में ही तुमने मुझे अपमानित करके क्यों नहीं खदेड़ दिया। क्यों तुमने मुझे अपराधी बना डाला?

यह बात तो मैं तुमसे बार-बार कह चुका हूँ, तुम्हारे साथ मैं मिल जाना चाहता था यह अत्यन्त सहज बात है। वह लोभ था दुर्जय। प्रचलित मार्ग बन्द था। जीवन अर्पित करके

मैंने जीवन को टेढ़े मार्ग में चला दिया। तुम मोहित हो गयीं। आज मैं जान गया हूँ, मुझे मर जाना होगा इसी रास्ते में। वह मरना समाप्त हो जाने पर तुम मुझे दोनों हाथ बढ़ाकर वापस बुलाओगी—बुलाती रहोगी अपनी शून्य छाती के पास दिन-रात लगातार।

तुम्हारे पैरों पर गिरती हूँ, ऐसी बात मत कहो।

बेवकूफ की तरह बोल रहा हूँ, रोमाण्टिक-सा सुनाई पड़ रहा है। मानो देहहीन वस्तुहीन को पा लेने को पाना कहते हैं। मानो तुम्हारा उस दिन का विरह आज के प्रतिहत मिलन का दाम एक कौड़ी परिमाण में भी चुकता कर सकता है।'

'आज तुमको बातों का जोश उमड़ा हुआ है अन्तू।'

'क्या कहती हो। आज बातों का जोश उमड़ा हुआ है। चिरकाल से ऐसा ही होता आया है। जब मेरी उम्र बहुत कम थी, अच्छी तरह मुँह से आवाज भी खुलती नहीं थी, उसी समय उस मौन अन्धकार के अन्दर से बातें फूट-फूटकर निकल पड़ी थीं। उनमें कितनी उपमाएँ थीं, कितनी तुलनाएँ थीं, कितने असम्बद्ध वचन रहते थे। उम्र बढ़ चली, साहित्य-लोक में मैंने प्रवेश किया, तो देखा कि इतिहास के राह-राह में राज्यों-साम्राज्यों के भग्न स्तूप पड़े हुए हैं, मैंने देखा, वीरों की रणसज्जाएँ टूटी-फूटी पड़ी हुई हैं, विदीर्ण विजय-स्तम्भों की दरारों में से पीपल के पेड़ निकल रहे हैं। अनेक शताब्दियों के बहुत से प्रयास धूलि के ढेरों में स्तब्ध पड़े हैं। काल के उस कूड़ों के ढेर के सबसे ऊँचे स्थान पर मैंने देखा एक अटल वाणी का सिंहासन। उस सिंहासन के पैरों के पास युग-युगान्तर की तरंगें लोट रही हैं। कितने ही दिनों तक मैंने कल्पना की है कि मैं उस सिंहासन के सोने के खम्भों पर अलंकार तैयार

करने का भार लेकर आया हूँ। तुम्हारा अन्तू चिरकाल से ही बातों का जोश रखनेवाला आदमी है। उसको तुम ठीक तरीके से किसी दिन भी पहचान सकोगी यह आशा अब नहीं रही—उसको शायद तुमने शतरंज खेलने के मुहरों में भर्ती कर लिया।

एला कुर्सी से उतर पड़ी और अतीन के चरणों के नीचे उसने अपना मस्तक रख दिया। अतीन ने उसको खींचकर उठाया और अपने पास बैठा लिया। तथा कहा—तुम्हारे इस छरहरे शरीर को मैं वचन दे-देकर मन-ही-मन सजाता आया हूँ, तुम मेरी संचारिणी पल्लविनी लता हो। तुम हो मेरी सुखदा या दुखदा। मेरे चारो तरफ अदृश्य आवरण हैं, वाणी के आवरण, साहित्य की अमरावती से नीचे उतरकर भीड़ को सम्हाले रखते हैं। मैं चिर स्वतन्त्र हूँ, इस बात को जानते हैं तुम्हारे मास्टर साहब, तो भी मेरे ऊपर विश्वास क्यों करते हैं?

इसीलिए विश्वास करते हैं। सबके साथ मिलने की जरूरत से तुम्हें सबकी बराबरी में उतरना पड़ता है। तुम स्वयं किसी तरह भी उतर नहीं सकते। तुम्हारे ऊपर मेरा विश्वास जम गया है इसी कारण। कोई भी स्त्री किसी पुरुष पर इतना विश्वास नहीं जमा सकी। तुम यदि साधारण पुरुष होते, तो साधारण स्त्री की तरह ही मैं तुमसे डरती रहती। निर्भय है तुम्हारा संग।

धिक्कार है उस निर्भय को। भय करने से ही तुम उस पुरुष की उपलब्धि कर लेती। देश के लिए दुस्साहस का दावा करती हो, अपनी-सी महीयसी के लिए करोगी क्यों नहीं। मैं हूँ कापुरुष। असम्मति के निषेध को तोड़कर क्यों मैं तुमको छीन-कर ले जा सका बहुत पहले ही, जब कि मेरे हाथ में समय था।

भद्रता ! प्रेम तो बर्बर होता है। उसकी बर्बरता पत्थर को ठेलती है रास्ता बनाने के लिए। वह पागल झरना है, सभ्य शहर के पालतू नल का पानी नहीं है।

एला ने जल्दी से उठकर कहा—चलो अन्तू, कमरे में चलो।

अतीन उठकर खड़ा हुआ, बोला—भय ! इतने दिनों के बाद आरम्भ हो गया। जीत हो गयी मेरी। जिस समय यौवन यह पहले-पहल आया था, उस समय भी स्त्रियों को मैंने पहचाना नहीं था। उनको कल्पना द्वारा दूर रखकर मैंने देखा है। यह प्रमाणित करने का वह समय चला गया कि तुम लोग जो चाहती हो वही मैं भी चाहता हूँ। मैं भीतर से पुरुष हूँ, मैं बर्बर उद्धत हूँ। समय को यदि न खो चुका होता तो इसी क्षण तुमको बाहुबन्धन से दबा रखता, तुम्हारे पंजर की हड्डी चरचरा उठती, तुमको सोचने-विचारने का समय मैं न देता, रोने योग्य शक्ति तुममें न रह जाती। निष्ठुर की तरह मैं तुमको खींचता हुआ ले जाता अपने कमरे के मार्ग में। आज जिस मार्ग में आ पड़ा हूँ वह मार्ग छुरे की धार-सा संकीर्ण है, यहाँ हम दोनों के लिए एक साथ चलने की जगह नहीं है।

मेरे दस्यु, छीनकर ले जाना नहीं पड़ेगा, ले लो, यह लो, यह लो।

यह कहकर दोनों हाथ बढ़ाकर वह अतीन के पास चली गयी और आँखें बन्द करके, उसकी छाती पर गिरकर उसके मुँह की तरफ अपना मुँह उसके सामने ही बढ़ा दिया।

खिड़की से रास्ते की तरफ देखकर एला एकाएक बोल उठी—सर्वनाश। वह देख रहे हो ?

क्या है बताओ तो।

वही तो है रास्ते की मोड़ पर। अवश्य ही वह बटु है—

यहीं आ रहा है।

आने योग्य स्थान को वह पहचानता है।

उसको देखने से ही मेरा समूचा शरीर संकुचित हो उठता है। उसके स्वभाव में मांस बहुत अधिक है, बहुत चर्बी है। जितनी ही राह छोड़कर चलने की या उसको दूर छोड़ रखने की चेष्टा करती हूँ। वह उतना ही निकट आ जाता है। अपवित्र है, अपवित्र है वह मनुष्य।

'मैं भी उसको सह नहीं सकता, एला !'

'उसके सम्बन्ध में अनुचित रीति से कल्पना कर रही हूँ; इसके लिए अपने को शान्त करने की बहुत चेष्टा करती हूँ परंतु किसी तरह भी सफल नहीं होती। उसकी बड़ी-बड़ी दोनों आँखें मानो दूर से लालायित स्पर्श से मेरा अपमान किया करती है।'

'उसकी तरफ भ्रूक्षेप मत करना एला। मन ही मन उसके अस्तित्व को क्या तुम बिलकुल ही उपेक्षा नहीं कर सकतीं ?'

'मैं उससे डरती हूँ इसीलिए उसे चित्त से हटा नहीं सकती। उसके अन्दर का एक चेहरा मैं देख पाती हूँ। जो है कुत्सित अष्टपद जन्तु की तरह। ऐसा ख्याल आता है कि वह अपने हृदय से आठों चटकीले पैर निकालकर मुझको किसी दिन अपमान से घेर डालेगा—केवल इसी बात का वह षड्यंत्र कर रहा है। तुम मेरी इस नासमझी को स्त्रियोचित आशंका कहकर हँसकर उड़ा दे सकते हो, किन्तु यह सत्य है कि भय का भूत मेरे ऊपर सवार हो गया है। केवल अपने ही लिए नहीं, तुम्हारे लिए मुझे और भी डर लगता है। मैं जानती हूँ उसकी ईर्ष्या तुम्हारी तरफ साँप के फण की तरह फुँफकार रही है।'

'एला, उसके समान जानवरों में साहस नहीं रहता, उनमें है दुर्गन्ध, यही कारण है कि कोई उनको छेड़ना नहीं चाहता। किन्तु वह मुझसे भी पूरे अन्तःकरण से डरता है, मुझे भयंकर समझकर नहीं, मैं उससे बिलकुल ही स्वतंत्र जाति का हूँ इसीलिए।'

'देखो अन्तू, जीवन में अनेक दुःख-विपत्तियों की सम्भावना मैंने सोच रक्खी है। उसके लिए मैं तैयार भी हूँ, किन्तु किसी दिन किसी अशुभ मुहूर्त में उसके पंजे में न पड़ जाऊँ यही मेरी इच्छा है, उससे तो मृत्यु कहीं अच्छी है।'

उसने अन्तू का हाथ जोर से पकड़ लिया, मानो इसी समय उद्धार करने का समय आ गया हो।

'क्या तुम जानते हो अन्तू, कभी-कभी मेरे चित्त में यह बात कल्पना से आती रहती है कि किसी हिंस्र जानवर के आक्रमण से अपमृत्यु भी हो सकती है, उस समय मैं देवता से यही प्रार्थना करने लगती हूँ, बाघ भालू, खा जायँ तो वह भी अच्छा होगा, किन्तु मुझे कीचड़ में घसीट ले जाकर घड़ियाल खा जाय—ऐसी घटना किसी दिन भी न होने पावे।'

'मैं बाघ-भालुओं की श्रेणी में हूँ क्या?'' नहीं जी, तुम हो मेरे नरसिंह, तुम्हारे हाथ से मर जाने में ही मेरी मुक्ति है। वह सुनो पैरों की आवाज। ऊपर आ जाने में कुछ भी देर नहीं है।' अतीन्द्र कमरे से निकलकर बाहर चला आया और ऊँचे स्वर से बोला—'बटू यहाँ नहीं, चलो नीचे बैठकखाने में।'

बटू ने कहा—'एला बहन!'

'एला बहन अभी कपड़े बदलने गयी हैं, चलो नीचे।'

'कपड़े बदलने? इतनी देर से? साढ़े आठ।'

'हाँ, हाँ, मैंने ही देर लगा दी है।'

'केवल एक ही बात है । पाँच मिनट ।'

'वे स्नान करने की कोठरी में गयी हैं । कह गयी हैं, इस कमरे में कोई आवे, ऐसी इच्छा उनकी नहीं है ।

'और आप ?'

'मुझको छोड़कर ।'

बटू खूब साफ तौर से ओठों को वक्र बनाकर हँस पड़ा । बोला—'हम लोग चिरकाल तक रह गये व्याकरण के साधारण नियमों के अन्तर्गत, और आप दो ही दिनों में आने के साथ ही, चढ़ गये हैं आर्ष-प्रयोग में । एक्सेप्शन चिकने पिच्छिल मार्ग का आश्रय-स्थल है, अधिक समय तक सहा नहीं जाता इसीलिए मैंने उसे छोड़ दिया ।'

यह कहकर दनादन उतरता हुआ वह चला गया ।

एक छोटी सी झारी हाथ में हिलाता हुआ अखिल आ गया और बोला—'चिट्ठी है ।' वह अपने अधूरे सृष्टिकर्म को बीच ही में छोड़कर उठ आया था ।

'तुम्हारी बहिनजी की ?

'नहीं आपकी । आपके ही हाथ में देने को कहा है ।'

'किसने ।'

'पहचानता नहीं हूँ ।' यह कहकर ही चिट्ठी देकर वह चला गया । चिट्ठी के कागज का लाल रंग देखते ही अतीन समझ गया यह है डैंजर सिगनेल । गुप्त भाषा में लिखी चिट्ठी पढ़कर उसने देखा—'एला के मकान पर अब नहीं, उसको कुछ न बताकर ही इसी क्षण चले आओ ।'

कर्म के जिस शासन को वह स्वीकार कर चुका है उसका अपमान करना अतीन आत्म-सम्मान के विरुद्ध ही समझता है । उसने चिट्ठी को खूब अच्छी तरह टुकड़े-टुकड़े करके फेंक

दिया। क्षणभर के लिए स्तब्ध होकर वह खड़ा रहा नहाने की कोठरी के बाहर। दूसरे ही क्षण द्रुतपद से बाहर चला गया। रास्ते में खड़े होकर एक बार उसने दुमंजिले की तरफ देखा। खिड़की खुली थी, बाहर से दिखाई पड़ रहा था आरामकुर्सी का एक हिस्सा, और उसके साथ ही लाल-पीले डोरे के चौखूंटे तकिये का एक कोना भी। कूदकर अतीन चलती हुई ट्राम पर सवार हो गया।

तृतीय अध्याय

एक दूसरे के शरीर से आपस में सटे हुए फीके हरे, गहरे-हरे, पीले हरे, ब्राउन हरे रंगों के छोटे-छोटे पौधों और वनस्पतियों के कारण निविड़ता छा रही है। बाँस की सड़ी हुई पत्तियों और कीचड़ की तहों से भरी हुई गड्ढही है। इसी के निकट से एक टेढ़ी-मेढ़ी गली चली गयी है, बैलगाड़ियों के पहियों से वह क्षत-विक्षत हो उठी है। कहीं ओल है, कहीं अरुई है और कहीं घंटाकरन है, बीच-बीच में नागफनी का झुंड दिखाई पड़ता है। उसके बीच की जगहों में मेंड़ से घिरे हुए नरम धान के खेतों में पानी भरा हुआ दिखाई पड़ रहा है। गली गंगा के घाट तक जाकर खतम हो गयी है। पुराने-जमाने की छोटी-छोटी ईंटों से बना हुआ टूटा-फूटा घाट तिरछा झुक पड़ा है, नीचे की ओर कछार पड़ जाने से गंगा पीछे हट गयी हैं। घाट से कुछ दूरी पर गंगाजी के किनारे जंगल है। उसमें एक पुराना टूटा-फूटा मकान है। उसके बारे में जनता में यह प्रवाद चला आ रहा है कि उसकी अभिराम छाया में डेढ़ सौ वर्ष पहले के किसी मातृ-हत्याकारी पापी के भूत ने आश्रय

ग्रहण किया है। बहुत दिनों से किसी सजीव स्वत्वाधिकारी ने उस अशरीरी के विरुद्ध अपना दावा रखने की चेष्टा तक भी नहीं की।

इस स्थान का दृश्य है—परित्यक्त पुराना पूजा का दालान। उसके सामने लंबा-चौड़ा आँगन है, जिसमें काई जम गयी है और जिसकी सतह ऊबड़-खाबड़ है। नदी के किनारे कुछ दूरी पर टूटा-फूटा मन्दिर है, टूटा हुआ रासमंच है, प्राचीन चहारदीवारी का भग्नावशेष है। किनारे की सूखी जमीन पर जटाधारी वटवृक्ष के नीचे टूटी हुई नाव का ढाँचा रखा हुआ है।

इसी जगह पर अतीन के वर्तमान वासस्थान में शाम को कन्हाई गुप्त ने छायाच्छन्न दालान के अन्दर प्रवेश किया। अतीन चौंक उठा, क्योंकि यहाँ का पता-ठिकाना कन्हाई के जान लेने की बात नहीं थी।

आप यहाँ कैसे?

कन्हाई ने कहा—जासूसीगिरी करने को निकल पड़ा हूँ।

मजाक को समझा दीजिए।

यह मजाक नहीं है, मैं तुम लोगों का रसद जुटानेवालों में से एक साधारण मनुष्य हूँ। चाय की दूकान पर शनि का प्रवेश हो गया, तो मैं बाहर निकल पड़ा। साथ ही साथ चल पड़ी उन लोगों की कुदृष्टि। अन्त में उन्हीं लोगों के जासूसी खाते में मैंने नाम दर्ज करा लिया। निमतल्ला (श्मशान) घाट का रास्ता छोड़कर जिनके सामने और कोई भी रास्ता नहीं है, उनके लिए यही ग्रैण्ड ट्रंक रोड है, देश की छाती पर पूरब से पश्चिम तक यह लगातार फैला हुआ है।

चाय बनाने का काम छोड़कर अब आप खबर बनाने लगे हैं?

मास्टर साहब के पास खबर पहुँचायी जा सकती है, किन्तु मन को खोला नहीं जा सकता। इन्द्रनाथ का प्रधान मंत्री मैं हूँ, किन्तु उसकी सभी बातों को मैं जानता हूँ, ऐसा खयाल भी तुम मत करना। ऐसी बातें भी हैं, जिनका अनुमान भी करने का साहस नहीं होता। मेरा विश्वास है, हमारे दल के जो लोग आप ही आप उबल पड़ते हैं, इन्द्रनाथ मेरी ही तरह उनको झाड़कर फेंक देता है पुलिस के जाल के नीचे। यह काम तो निन्दनीय है, किन्तु है निष्पाप। मैं कहे देता हूँ, किसी दिन उसकी अथवा मेरी ही सहायता से तुम्हारे हाथों में हथकड़ी पड़ जायगी, तब तुम कुछ भी ख्याल मत करना। तुम्हारे इस मकान में आ जाने का समाचार बटू ने ही पहले-पहल थाने के खुफिया विभाग में दिया है। इसीलिए मुझे भी बाजी मारनी पड़ी। फोटोग्राफ खींचकर उन लोगों के पास मैंने भेज दिया है। अब काम की बात कह रहा हूँ। चौबीस घंटे का समय तुमको दे रहा हूँ, उसके बाद भी यदि यहाँ रहोगे, तो उस हालत में मैं ही तुमको थाने के रास्ते में आगे बढ़ाकर ले चलूँगा। यहाँ से कहाँ जाना पड़ेगा, उसका रास्ता-घाट विस्तारपूर्वक मैंने यहीं लिख दिया है—वह तुमको मालूम है। तो भी कंठस्थ करके ही फाड़ डालना। यह देखो नकशा है। रास्ते के इस तरफ तुम्हारा डेरा है, स्कूल के कोने के कमरे में। ठीक सामने है पुलिस का थाना। वहाँ है एक आदमी, जो किसी नाते से मेरा नाती लगता है, वह राइटर कान्स्टेबिल है, उसको मैं माधव-दयाल कहकर पुकारता हूँ, तीन पुश्तों से पश्चिमी भारत में वह बसा हुआ है। बँगला पढ़ाने के लिए तुम मास्टरी पा गये हो। वहाँ जाने से ही राघव तुम्हारा सन्दूक टटोलेगा, जेबों की तलाशी लेगा, घूँसा-मूका भी चला सकता है। उसको तुम

भगवान की दया समझकर सह लेना। यह सत्य रघुवीर की हिन्दी भाषा में सर्वदा ही प्रकट होता रहता है कि बंगाली मात्र ही साले के सम्प्रदाय के अन्तर्गत हैं। तुम उसका किसी प्रकार का प्रतिवाद करने की चेष्टा मत करना। प्राण रहते इस देश में वापस मत आना। बाइसिकिल बाहर ही पड़ी हुई है, इशारा पाने के साथ ही सवार हो जाना। चलो बच्चा, अन्तिम दिन के लिए आलिंगन-मिलन कर लें।

आलिंगन-मिलन हो जाने पर कन्हाई वहाँ से चला गया।

अतीन चुपचाप बैठा रहा। हृदय की तरफ गौर से देखने लगा। असमय में आ गया उसके जीवन-नाटक का अन्तिम अंक। यवनिका तुरन्त ही गिरनेवाली है, प्रकाश बुझता जा रहा है। यात्रा आरम्भ हुई थी निर्मल भोर के प्रकाश में। वहाँ से आज बहुत दूर चला आया हूँ। मार्ग में कदम बढ़ाते समय जो राह-खर्च हाथ में था, उसका कुछ भी बचा नहीं है। पथ के अन्तिम भाग में तो अपने को केवल धोखा ही दे-देकर पेट पाल रहा था, एक दिन अचानक रास्ते के मोड़ पर, सौन्दर्य का जो आश्चर्यजनक दान लेकर भाग्यलक्ष्मी उसके सामने आ खड़ी हुई थी, वह मानो अलौकिक थी। ऐसा अपरिसीम ऐश्वर्य उसके जीवन में कभी प्रत्यक्ष हो जायगा यह बात इसके पहले वह कभी सम्भव रूप में सोच नहीं सका था, केवल उसका कल्परूप उसने देखा था काव्य और इतिहास में। उसके मन में बार-बार यह ख्याल आया था कि दान्ते और बियाट्रिच नवीन जन्म धारण कर रहे हैं उन दोनों के बीच में। उस ऐतिहासिक प्रेरणा ने उसके मन में बातें की हैं, दान्ते की ही तरह अतीन राष्ट्रीय-भँवर में कूद पड़ा था, किन्तु उसमें सत्य कहाँ, वीर्य कहाँ, गौरव कहाँ, देखते-देखते अनिवार्य वेग से

जिस कीचड़ की ओर वह खिंचता गया, उस नकाबपोश चोरी-डकैती, खूनखराबी के अन्धकार में इतिहास का आलोक-स्तम्भ कभी न खड़ा होगा। आत्मा का सर्वनाश करके अन्त में आज वह देख रहा है कि कुछ भी यथार्थ फल इसमें नहीं है। संशय-रहित पराभव है सामने। पराभव का भी मूल्य है, किन्तु आज के पराभव का नहीं, जो पराभव खींच लाया है गुप्त बीभत्स विभीषिका में, जिसका न अर्थ है और न तो अन्त ही है।

दिन का प्रकाश म्लान हो उठा। आँगन में झींगुर बोलने लगे। कहीं पास ही बैलगाड़ी जा रही थी, उसका आर्त्तस्वर सुनाई पड़ रहा था।

अचानक कमरे में द्रुतपद से एला चली आयी। जिस प्रकार कोई मनुष्य आत्महत्या करने के आवेश से पानी में कूद पड़ता है, उसी प्रकार हड़बड़ी के अन्धवेग से वह आ गयी। अतीन ज्योंही उछलकर उठ खड़ा हुआ, त्योंही उसकी छाती के ऊपर वह उछल पड़ी। वाष्परुद्ध स्वर से वह बोली—अतीन, अतीन, मुझसे रहा न गया।

अतीन धीरे-धीरे उसको छुड़ाकर सामने की तरफ हटाकर पकड़े रहा और उसके अश्रुसिक्त चेहरे की तरफ ताकने लगा।

बोला—एली, यह कैसा काण्ड कर डाला तुमने।

उसने कहा—कुछ भी मैं नहीं जानती कि क्या किया।

यह ठिकाना तुमने कैसे जान लिया?

एला ने गम्भीर अभिमान के साथ कहा—अपना ठिकाना तो तुमने बताया नहीं था।

जिसने तुमको बताया है वह तुम्हारा मित्र नहीं है।

यह बात मैं भी निश्चित रूप से जानती हूँ, किन्तु तुम्हारा कोई रास्ता मालूम न रहने से मेरा मन शून्य में घूमते हुए,

असह्य हो उठा था। शत्रु-मित्र का विचार करने योग्य मेरी अवस्था नहीं रही। कितने समय से तुमको मैंने नहीं देखा, बताओ तो।

तुम धन्य हो अन्तू। ज्योंही मेरे घर आने की मनाही हो गयी, त्योंही तुमने उसको मान लिया।

यह तो मेरी स्वाभाविक स्पर्धा है। प्रचण्ड इच्छा मुझको अजगर की तरह दिन-रात चारो तरफ घुमा सकी। वे लोग मुझसे कहते हैं सेण्टीमेण्टल, उन लोगों ने मन में यही निश्चय कर रखा था कि संकट के समय यह प्रमाणित हो जायगा कि मैं गीली मिट्टी से ही बनाया गया हूँ। वे लोग समझ ही नहीं सकते कि सेण्टीमेण्ट (भावुकता) ही मेरी अमोघ शक्ति है।

मास्टर साहब भी इस बात को जानते हैं ?

एली, ब्रिटिश साम्राज्य में इस भुतहे मुहल्ले की सृष्टि हो जाने के बाद से आज तक किसी भद्र महिला ने इस स्थान का स्वरूप निर्धारित नहीं किया।"

'इसका कारण यह है कि, बंग देश की किसी भद्र महिला के भाग्य में इतनी बड़ी गरज ऐसी दुस्सह होकर किसी दिन प्रकट नहीं हुई।'

किन्तु, एली, आज तुमने जो काम कर डाला है, वह है अवैध।

'मैं जानती हूँ यह बात, अपनी दुर्बलता को मानती हूँ, मैं तो भी तोड़ूँगी नियमों को, केवल अपनी ही तरफ से नहीं बल्कि तुम्हारी तरफ से भी। मेरा मन प्रतिदिन कहता है कि तुम मुझको बुला रहे हो। उत्तर न दे सकी इसलिए प्राण हाँफने लगते हैं। बताओ, मैं आ गयी हूँ इसलिए तुम्हारा मन प्रसन्न हो गया है न ?'

इतना प्रसन्न हो गया है कि उसको सिद्ध करने के लिए विपत्ति स्वीकार करने को तैयार हूँ। नहीं, नहीं, तुम्हारे ऊपर विपत्ति क्यों आवेगी। जो कुछ होनहार हो, वह मेरे ही ऊपर हो जाय। सो अब मैं जा रही हूँ अन्तू।

किसी तरह भी नहीं। तुम नियम तोड़कर चली आयी हो, मैं नियम तोड़कर तुमको पकड़ रखूँगा। दोनों व्यक्ति मिलकर अपराध को समान बना लें। नवीन आश्चर्य के रूप में बसन्ती रंग में मैंने एक दिन तुम्हारी उस आकृति को देखा था, वह आज युगान्तर तक पीछे हट गया है। आओ, आज उस दिन का आवाहन किया जाय इस खाली गिरे-पड़े मकान में। आओ, और भी निकट आ जाओ।

ठहरो, कमरे को जरा और साफ-सुथरा करके सजा लेने की चेष्टा कर लूँ।

हाय रे! गंजे सिर पर कंघी चलाने की चेष्टा!

एला ने एक बार चारों तरफ घूमकर देख लिया। फर्श पर था कम्बल, उसके ऊपर थी चटाई। तकिये के बदले में पुस्तकों से भरी कैन्वस की एक थैली पड़ी थी। लिखने-पढ़ने के लिए एक पुराना बकस था। कोने में पानी की गगरी मिट्टी के सकोरे से ढकी हुई थी। पुरानी टोकरी में केलों का एक गुच्छा पड़ा हुआ था, एक कटोरी थी जिसका एनामेल छूट गया था, कभी संयोगवश मौका आ जाने पर उससे चाय पीने का काम लिया जाता है। कमरे के दूसरे ओर पर एक बड़ा चौड़ा सन्दूक है, उसके ऊपर मिट्टी की बनी गणेशजी की एक मूर्ति है। इससे प्रमाणित होता है कि यहाँ अतीन का कोई एक साथी भी रहता है। एक खम्भे से दूसरे खम्भे तक रस्सी बँधी हुई है, उस पर तरह-तरह के दागवाले बहुत-से मैले अँगौछे टँगे हुए हैं।

सीड़ से भरे कमरे में ऐसी गन्ध है कि दम घुटनेवाली भाप-सी उठ रही है।

ठीक इसी प्रकार का भले ही न हो, पर इस तरह के दृश्य कभी-कभी एला ने देखे हैं। कभी उसको विशेष दुःख नहीं मिला था, वरन् त्यागवीर लड़कों को मन ही मन इसने बहादुरी ही दी है। एक दिन किसी जंगल के किनारे उसने अनिपुण हाथों से रसोई बनाने की चेष्टा में उजड़े छप्पर के घर में खर-पतवार जलाये हुए चूल्हे का भग्नावशेष देखा था। उसको देखकर खयाल हुआ था कि यह राष्ट्र-विप्लवी रोमांस की अंगार से अंकित छवि है। किन्तु आज कष्ट से उसका गला रुँध आया। आराम से पालित-पोषित धनवान के लड़के की अवज्ञा करने में ही एला अभ्यस्त थी। किन्तु अतीन को इस अपरिष्कृत, मलिन, अभावजीर्ण दरिद्रता के बीच रहते देखकर किसी तरह भी उसका मन सुस्थिर न रह सका।

एला की घबड़ाहट से भरी हुई आकृति देखकर अतीन हँस पड़ा, बोला—मेरा ऐश्वर्य तुम स्तम्भित होकर देख रही हो। उसका जो विराट अंश दिखाई नहीं पड़ रहा है, उसीसे तुम आश्चर्य में पड़ गयी हो। हमें अपने पैरों को हलका रखना पड़ता है, जिससे कि दौड़कर भागते समय कोई आदमी पीछे से रोक न सके, न कोई चीज रुकावट ही डाल सके। कुछ दूरी पर जूट मिल के मजदूरों की बस्ती है, वे लोग मुझे मास्टर साहब कहकर पुकारते हैं, चिट्ठियाँ पढ़वा लेते हैं, पता-ठिकाना लिखवा लेते हैं, समझ लेते हैं कि लेन-देन की रसीद ठीक हो गयी है या नहीं। उनमें से किसी-किसी सन्तान-प्रेमी को शौक है कि अपने लड़के को किसी दिन मजदूर-श्रेणी से हुजूर-श्रेणी में पहुँचा दे। वे मेरी सहायता चाहते हैं, फल-मूल लाकर देते हैं,

किसी किसी के घर गाएँ पली हैं, दूध लाकर देती हैं।

अन्तू, कोने में वह जो सन्दूक पड़ा है, वह किसकी सम्पत्ति है?

खराब जगहों में अकेला रहने पर नजरों में वह बड़े रूप में दिखाई देता है। अलक्ष्मी की झाड़ू में लगकर वह रास्ते से यहाँ आ गया है उस मकान में एक मारवाड़ी, तीसरी बार दीवालिया हुआ है। मुझे सन्देह हो रहा है कि दीवालिया होते रहना ही उसका सर्वप्रधान व्यवसाय है। यह खाली दालान उसके दो भतीजों की ट्रेनिंग एकाडमी है। वे लोग भोर में ही सत्तुआ खाकर काम करने के लिए आते हैं, बस्ती की औरतों के लिए सस्ते दाम में कपड़े रँगते हैं, बेचकर मूलधन का ब्याज देते हैं। असल का भी कुछ-कुछ चुकता करते हैं। तुम वह जो मिट्टी के गमले देख रही हो, उनको मैं अपने यज्ञ की रसोई में व्यवहार नहीं करता, उन सबमें रंग तैयार किया जाता है। कपड़े उठाकर उसी बक्स के अन्दर रख जाते हैं। इसके अलावा उसमें बस्ती की औरतों के लिये सजावट की तरह-तरह की चीजें हैं, बिल्लौरी कंघियाँ, छोटे-छोटे आईने, पीतल के बाजू हैं, उनकी रक्षा करने का भार मेरे और प्रेतात्मा के ऊपर है। दिन में तीन बजे सौदा खरीदने के लिये निकल पड़ते हैं, फिर यहाँ वापस नहीं आते। जानता नहीं हूँ कि कलकत्ते में वह मारवाड़ी किस चीज की दलाली करता है। मेरी अंग्रेजी की जानकारी के लोभ में पड़कर उसने मुझे साझेदार बनाना चाहा था, जीवों के प्रति दया करके मैं राजी नहीं हुआ। मेरी आर्थिक अवस्था का भी पता लगाने की चेष्टा की थी, मैंने समझा दिया कि पूर्व पुरुषों के घर में जो कुछ मौजूद था उसका चौदह आना हिस्सा उन लोगों के ही

घरों में हस्तान्तरित हो गया है।

'यहाँ पर तुम्हारी मीयाद कितने दिनों की है ?'

अन्दाज करता हूँ चौबीस घंटे की। इस आँगन में तरह-तरह के रंगों की रसभरी लीलाएँ समान भाव से बराबर चलती रहेंगी। परंतु अतीन्द्र विलीन हो जायगा पांडुवर्ण के दूरवर्ती सुदूर दिगन्त में। मेरी यही कामना है कि, जिस मार-वाड़ी को मेरी छूत लग गयी है, उसपर हथकड़ी लगनेवाली महामारी की सवारी न होने पावे। अभी तक यह बात मैं कह नहीं सकता कि, मूलधन के बिना मेरा हिस्सेदार बन जाने की सम्भावना उसके लिए है या नहीं।

तुम्हारा भविष्य का पता-ठिकाना ?

बताने का हुकुम नहीं है।

तो क्या मैं कल्पना भी न कर सकूँगी कि तुम किस स्थान में रह रहे हो ?

कल्पना करने में दोष क्या है। मानस-सरोवर तट की भूमि अच्छी जगह है।

इसी बीच में झोले में से पुस्तकें निकालकर एला उन्हें उलट-पुलटकर देख रही थी। उनमें से कुछ काव्य हैं, कुछ हैं अंग्रेजी, और दो-चार बंगला भाषा के हैं।

अतीन ने कहा—'इतने दिनों से इनको ढोता हुआ घूमता रहा हूँ, इस शंका से कि कहीं अपनी जाति को ही न भूल जाऊँ। इनके ही वाणीलोक में मेरा आदि निवास-स्थान था। पन्नों को खोलने से ही पेन्सिल से चिह्नित उनके रास्तों का निर्देश पाओगी। और आज। यह गौर से आँखें खोलकर देख लो ध्यानपूर्वक।

एला ने एकाएक जमीन पर लोटकर अतीन के पैर जकड़

लिये । कहा—'माफ करो, अन्तू, मुझको माफ करो ।

तुमको माफ करने के लिए क्या है एली ? भगवान् यदि हैं, यदि उनकी असीम दया है, तो वे मुझे क्षमा करेंगे ।'

'जब तुमको मैंने पहचाना नहीं था, तभी तुमको मैंने इस रास्ते पर खड़ा किया था ।

अतीन हँसने लगा, बोला—'अपने ही पागलपन के जोश में इस कुस्थान पर पहुँच गया हूँ। यह यश भी मुझको तुम नहीं दोगी ? मुझे नाबालिग की श्रेणी में फेंककर अभिभावक बनना मैं सहन न कर सकूँगा, यह मैं कहे देता हूँ । इससे अच्छा तो यह है कि तुम मंच पर से उतर आओ, मेरे मुँह की तरफ देखकर बोलो—आओ आओ प्रियवर, मेरे आधे आँचल पर बैठ जाओ ।'

'सम्भव है कि मैं यही कह देती, किन्तु आज तुम इस तरह सनक क्यों गये हो ।'

'सनक न जाऊँ ? तुमने कहा है न कि, अपने भुज-बल से तुमने मुझको घर से निकाल दिया है ।'

'सच्ची बात कह देने से तुम नाराज हो जाते हो क्यों ?'

'सच्ची बात हो गयी ? मैं तो छिटककर पड़ा हूँ रास्ते में हृदय के आवेश से, तुम तो उपलक्ष्य मात्र हो । किसी दूसरी बंगाली महिला को उपलक्ष्य पा लेने पर इतने दिनों में मैं गोरा-काला मिलन-क्लब में ब्रिज खेलने के लिए चला जाता । घुड़दौड़ के मैदान में गवर्नर के बक्स की तरफ स्वर्गारोहण पर्व की साधना करता रहता । यह प्रमाणित हो जाय कि मैं मूर्ख हूँ, तो बड़े शान के साथ कहूँगा कि यह मूर्खता स्वयं मैंने ही की है, जिसको कि भगवत्-प्रदत्त प्रतिभा कहते हैं ।

'अन्तू तुम्हारी दुहाई है अब तुम निरर्थक बकवाद मत

करो। तुम्हारी जीविका में मैंने ही बाधा दी है, इस दुःख को मैं कभी भूल न सकूँगी। देख रही हूँ तुम्हारे जीवन की जड़ उखड़ गयी है।'

'इतनी देर में उस ललना का प्रकाश हो गया है जो वास्तविक है। थोड़ी ही बातों से मालूम हो जाता है कि देशोद्धार के रंग-मंच पर तुम रोमाण्टिक हो। जिस गृहस्थ-परिवार में काँसे की थाली में दूध-भात, साग-सबजी परोसी जाती है। उसके ही केन्द्र में तुम बैठी हुई हो ताड़ का पंखा हाथ में लेकर। जहाँ पर राजनैतिक लठैती का बोल-बाला रहता है वहाँ तुम बिखरे केशों से दोनों आँखों को लाल किए हुए आकर खड़ी हो जाती हो घबड़ाहट-भरे आवेश से, सहज बुद्धि लेकर नहीं।'

'इतनी बातें भी कह सकते हो अन्तू, औरतें भी तुमसे हार मान लेती हैं।

स्त्रियाँ भी बातें कर सकती हैं क्या? वे तो केवल बकवाद ही करती हैं। बातों की भयंकर आँधी से, सनातन मूढ़ता की दीवार को तोड़ने के निमित्त किसी दिन मन में तूफानी बादल जमा हो गये थे। उसी मूढ़ता के ऊपर तुम अपने विजय-स्तम्भ को खड़ा करने के लिए निकल पड़ी हो केवल शारीरिक बल द्वारा।

मैं तुम्हारे पैरों पर गिरती हूँ, मुझे तुम समझा दो कि मेरी भूल से तुमने भूल क्यों कर डाली? तुमने जीविकावर्जन का दुःख क्यों स्वीकार कर लिया?

वह तो मेरी व्यंजना थी, अंग्रेजी में उसे कहते हैं जेस्चर। वह थी मेरी अन्तिम काल की भाषा। यदि मैं दुःख को न स्वीकार करता तो तुम मुँह मोड़कर चल देती; किसी तरह भी तुम समझ ही न पाती कि तुमको मैं कितना प्यार करता हूँ।

बड़े मजाक में उड़ाकर यह मत कहना कि यह मेरा देश-प्रेम था।

क्या देश इसमें नहीं है अन्तू?

देश की और तुम्हारी साधनाएँ एक हो गयी हैं, इसीलिए देश इसमें मौजूद है। किसी समय बलवीर्य के बल पर योग्यता दिखाकर स्त्रियों को प्राप्त किया जाता था। आज उसी कारण प्रतिज्ञा का अवसर मुझे मिल गया है। उस बात को भूलकर मेरी साधारण जीविका के अभाव को लेकर तुमको व्यथा लग गयी है, अन्नपूर्णा!

हम स्त्रियाँ सांसारिक हैं। गृहस्थी में जरूरी सामान की कमी को हम सहन नहीं कर सकतीं। मेरी एक बात तुमको मान ही लेनी पड़ेगी। मेरे पास एक पैतृक मकान है, और कुछ रुपये भी जमा हैं। दुहाई तुम्हारी, मैं बार-बार तुम्हारी दुहाई दे रही हूँ, मेरी बात मान लो। मेरे पास से रुपये लेने में संकोच न करो, तुमको अत्यंत आवश्यकता है।

बहुत जरूरत पड़ जाने पर मेरे लिए मैट्रिक्युलेशन का नोट लिखने से लेकर कुलीगिरी तक के काम खुले हुए हैं।

मैं मानती हूँ, अन्तू, मेरे पास जो रुपया जमा है, वह सब ही देश के कामों में इतने दिनों में खर्च कर देना उचित था। किन्तु उपार्जन करने का अवसर हम लोगों को बहुत कम ही मिलता है, इसी कारण संचय करने में हमारी अन्ध आसक्ति रहती है। हमलोग हैं डरपोक।

वह तुम लोगों की स्वाभाविक बुद्धि का उपदेश है। निःसम्बलता से स्त्रियों की शोभा नष्ट हो जाती है।

हम लोगों के डेरे छोटे होते हैं, वहाँ पर हम लोग बहुत कम जमा करती हैं। किन्तु वह तो केवल जीवित रहने की आवश्यकता से नहीं, प्रेम की आवश्यकता से है। मेरा जो कुछ

है, सब ही तुम्हारे लिए है, इस बात को यदि मैं समझ सकूँ तो बच जाऊँगी।

किसी तरह भी मैं न समझूँगा उस बात को। आज तक स्त्रियाँ करती रही हैं सेवा, पुरुषों का काम रहा है जीविका का उपाय करना। इसके विपरीत काम होने से हमारा सिर झुक जाता है। जिस याचना को लेकर संकोच छोड़कर तुम्हारे सामने हाथ पसार सकता हूँ उसको धोखे में डालकर तुमने प्रतिज्ञा का बाँध बाँध दिया है। उस दिन नारायणी स्कूल का खाता लेकर तुम हिसाब मिला रही थीं। मैं तुम्हारे पास जाकर बैठ गया, जिस तरह तूफान का झपेटा खाकर चील जमीन पर गिर पड़ती है। उसी तरह मार खाये हुए मन को लेकर मैं गया था। कर्तव्य की मिथ्या छाप लगी हुई चीजों पर स्त्रियों की वैसी ही निष्ठा होती है, जैसी पंडों के चरणों में यात्रियों की। उसे दूर करना असम्भव है। तुमने मुँह ऊपर उठाकर देखा तक नहीं। बैठे-बैठे टकटकी लगाकर देखते हुए मैं इच्छा कर रहा था कि तुम्हारी उन सुकुमार अँगुलियों के नोकीले छोरों से मेरे तन-मन पर स्पर्श-सुधा झरकर गिर पड़े। परंतु तुमको कुछ भी दया नहीं आयी। कृपण, तुम इतना भी न दे सकीं। मैंने मन ही मन कहा—शायद और भी ज्यादा देना पड़ेगा। किसी दिन फूटा सिर, कटा शरीर लेकर जमीन पर गिर पड़ूँगा तब टूटे हुए प्राण को तुम अपनी गोद में उठाकर रखोगी।

एला की आँखें छलछला उठीं, बोली—'ओह, तुमसे मैं जीत नहीं सकती, अन्तू। इतना भी बिना माँगे तुम ले नहीं सके। छीनकर ले लिया क्यों नहीं मेरा खाता। तुम समझ नहीं सकते, तुम्हारा ही संकोच मुझे संकुचित कर देता है। अन्तू, तुम्हारा स्वभाव कुछ अंशों में है औरतों की तरह। इच्छा होते हुए

भी बलपूर्वक उसकी माँग पेश करने में तुमको हिचक होती है।'

यह वंशागत धारणा बचपन से ही रक्तमांस में प्रविष्ट है। बराबर ही सोचता आया हूँ कि स्त्रियों के तन-मन में पवित्रता की मर्यादा है। उनके शारीरिक सम्मान की सशङ्क चित्त से रक्षा करना हमारा वंशपरंपरागत अभ्यास है। मेरे कुंठित मन को थोड़ा सा भी प्रश्रय देने के लिए तुम्हारा मन यदि कभी द्रवित हो जाय तो मेरी तरफ से भीख माँगने की आशा मत करना। मैंने सीखा नहीं है उस तरह माँगना। भूख की कोई सीमा नहीं है, इसी कारण मैं पेटू न बन सकूँगा। यह मेरे स्वभाव में नहीं है। अपनी कामना की कुलीनता को मैं नष्ट नहीं कर सकता।'

एला अतीन के पास आकर सटकर बैठ गयी। उसका माथा अपनी छाती पर खींचकर उसके ऊपर अपना सिर भी उसने झुकाकर रख दिया। बीच-बीच में धीरे-धीरे उसके बालों में अपनी अँगुलियों को फेरने लगी। कुछ देर बाद अतीन सिर उठाकर बैठ गया और एला का हाथ उसने दबा लिया। वह बोला—'जिस दिन मोकामा में जहाज पर सवार हुआ था, उस दिन भाग्य देवी (विलासक्षी) अपने अदृश्य हाथ से कान मलकर चली गयी, उसे मैं समझ नहीं सका था। उसके कुछ देर बाद से ही मेरा मन केवल आकाश-कुसुम चयन करता हुआ स्मृति के आकाश में घूम रहा है। उस दिन की बात तुम्हारे लिए क्या अब पुरानी हो गयी है।

'जरा भी नहीं।'

'हाँ, तुम सुनो। नीचे के डेक से मेरा नौकर बिहारी भारी असबाब गाड़ी में ले गया था। मेरे पास एक छोटा चमड़े का सूट केस पड़ा था—इधर-उधर मैं ताक रहा था कुली की प्रतीक्षा

में। बिलकुल ही भले आदमी की तरह तुमने मेरे पास आकर कहा—'कुली चाहते हैं? जरूरत है क्या। मैं ले चलती हूँ।' 'हाँ हाँ; यह क्या करती है, क्या करती हैं, कहते-कहते ही, तुमने उसको उठा लिया। मेरी विपत्ति देखकर मानो पुनः निवेदन स्वरूप तुमने कहा, संकोच मालूम हो रहा हो तो, आप एक काम कीजिए, मेरा बकस वही है, उसको आप उठा लीजिए, परस्पर ऋण-शोध हो जायगा। उठा लेना पड़ा। मेरे सूट केस की अपेक्षा वह सात गुना भारी था। मूठ पकड़कर दायें हाथ में बायें हाथ में बदलते-बदलते किसी प्रकार मैंने रेलगाड़ी के तीसरे दर्जे के कमरे में उठाकर रख दिया। उस समय रेशमी कुरता पसीने से तर हो गया था। निःश्वास द्रुत वेग से चल रहा था, निस्तब्ध अट्टहास्य था तुम्हारे चेहरे पर। हो सकता है कि किसी जगह पर करुणा छिपी हुई थी, उसको प्रकट कर देना तुमने अकर्तव्य मान रखा था। उस दिन मुझे आदमी बनाने का महान् दायित्व था तुम्हारे ही हाथ में।'

'छिः छिः, कहो मत, कहो मत, वह बात याद करते ही मुझे लज्जा मालूम होने लगती है। क्या थी मैं उस समय, कैसी बेवकूफ थी, कैसी अद्भुत थी। उस समय तुम हँसी को दबा रखते थे इसीलिए मेरी स्पर्धा बढ़ गयी थी। तुमने सह लिया था किस तरह। स्त्रियों में क्या बुद्धि रहने की कोई आवश्यकता नहीं है।'

'रहे या न रहे? उससे तो कुछ आता जाता नहीं है। उस दिन जिस वातावरण में तुमने मुझे दर्शन दिये थे वह तो हायरमैथेमैटिक्स नहीं था, लाजिक भी नहीं था। वह था जिसको कि मोह कहते हैं। शंकराचार्य के समान महान् विरक्त भी जिसपर अपना तनिक भी प्रभाव न डाल सके। उस समय

दिन ढल चुका था, आकाश में जिसको कहते हैं—नववधू देखने का बादल। गंगा का जल लाल आभा से टलमल कर रहा था। वह दुबला-पतला क्षिप्रगामी शरीर उस लाल प्रकाश की भूमिका में चिरकाल के लिए मेरे मन में अंकित रह गया। उसके बाद क्या हुआ? तुम्हारी पुकार मैंने सुन ली कानों में। किन्तु आ पहुँचा हूँ कहाँ। तुमसे कितनी दूर। तुम भी क्या जानती हो उसका सब विवरण।'

'मुझको तुम जानने नहीं देते क्यों अन्तू?'

'मजाही माननी पड़ती है। केवल यही क्यों? क्या होगा सब बातें कहने से—प्रकाश घट गया है, आओ और निकट आओ। मेरी दोनों आँखें टकटकी बाँधकर तुम्हारी ओर लगी हैं। एक मात्र तुम्हारे पास ही मेरा छुटकारा है। अत्यन्त छोटा है उसका आयतन, सोने से रँगे हुए फ्रेम की तरह। उसी में चित्र को जड़वा क्यों न लूँ। ये जो तुम्हारे दो-चार बालों की अशिष्ट लटें आँखों के ऊपर आ पड़ी हैं। 'जिनको तुम हाथों से शीघ्रतापूर्वक बार-बार ऊपर हटाती जा रही हो, काली पाढ़ की टसर की साड़ी है, कंधे पर ब्रोच नहीं है, आँचल माथे के बालों में गूँथ रखा गया है, आँखों में थकावट के क्लेश की छाया है, ओठों पर विनती का आभास है, मानो चारों तरफ से दिन की ज्योति डूब रही है अन्तिम अस्पष्टता में। यह जो देख रहा हूँ यही है आश्चर्य-जनक सत्य। इसका अर्थ क्या है, किसी को समझाकर बता न सकूँगा, किसी अद्वितीय कवि के हाथों से पकड़ा न जा सका, इसी कारण इसके माधुर्य में इतना गंभीर विषाद है। इस एक छोटी सी अद्भुत परिपूर्णता को चारों तरफ से भौंहें तानकर घेर रही है बड़े नामवाली बड़ी छायावाली विकृति।

'क्या कह रहे हो अन्तू ?'

'बहुत कुछ झूठ। याद पड़ रहा है, तुमने कुली बस्ती में मुझे डेरा लेने के लिए कहा था। तुम्हारे मन में तो था मेरे वंश के अभिमान को धूल में मिला देने का अभिप्राय। पर तुम्हारे उस सुमहत् अध्यवसाय में मुझे मजा मिलने लगा था। डिमोक्रेटिक पिक्निक में उतर पड़ा। गाड़ीवानों के मुहल्ले में चक्कर लगाया, उनसे दादा-चाचा का रिश्ता जोड़ लिया, तरह तरह के बैल-भैंसों के बाड़ों के पास से चलने-फिरने लगा। किन्तु उनके लिए भी यह समझना बाकी न रहा, और मेरे लिए भी नहीं था कि, धूप लगने पर इन रिश्तों का टिकना कठिन है। अवश्य ही ऐसे महत् व्यक्ति होंगे, जिनका स्वर सभी वाद्ययंत्रों के साथ एक सा बजता रहता है, यहाँ तक कि रुई धुनने के यंत्र के साथ भी। हम लोग जब नकल करने जाते हैं तो स्वर नहीं मिलता। तुमने देखा नहीं है, अपने मुहल्ले के ईसा के शिष्य को, भाई कहकर जिसको तिसको छाती से लगा लेना उसके अनुष्ठान का एक अंग है। इससे तो ईसा मसीह के प्रति व्यंग्य ही करना होता है।

तुमको क्या हो गया है अन्तू, किस क्षोभ से तुम ये सब बातें कह रहे हो ? तुम क्या यह कहना चाहते हो कि अरुचि को निकाल देने पर भी, कर्तव्य को कर्तव्य कहकर माना नहीं जा सकता।

रुचि की बात नहीं हो रही है एली, स्वभाव की बात हो रही है। अत्यन्त अरुचि रहते हुए भी श्रीकृष्ण ने अर्जुन को वीर का कर्तव्य पालन करने को कहा था। कुरुक्षेत्र को जीतने के लिए उन्होंने एग्रीकल्चरल इकानामिक्स की चर्चा करने को नहीं कहा था।

तुम रहते, तो तुमसे श्रीकृष्ण क्या कहते अन्तू ?

बहुत दिन पहले ही उन्होंने कानों में कह रखा है। कानों में कही गयी उनकी उन्हीं बातों को मुँह खोलकर कहने का भार मेरे ऊपर था। भेद-भाव के बिना सभी का कर्तव्य एक है, कान पकड़कर गुरुजी के यह बात कह देने से ही इतनी कृत्रिमता की सृष्टि हो गयी है। मैं तुम्हारे मुँह पर ही कह रहा हूँ कि उनके जिस मुहल्ले में घमंड करके तुम नम्रता दिखाने जाती हो, वहाँ तुम्हारे लिए भी जगह नहीं है। देवी ! तुम सभी देवियाँ हो। नकली देवी की पोशाक कृत्रिम है जो कि स्त्रियों की दूसरी पोशाकों की ही तरह, पुरुष दर्जी की दूकानों पर तैयार की गयी है।

देखो अन्तू, आज तक भी मैं यह समझ नहीं सकी कि जो रास्ता तुम्हारा नहीं है, उस रास्ते से तुम क्यों बलपूर्वक वापस नहीं चले आते।

तो मैं बता रहा हूँ। इस मार्ग में प्रवेश करने के पहले बहुत सी बातों की मुझे जानकारी नहीं थी। एक-एक करके ऐसे लड़कों को मैंने अपने निकट देखा जो यदि वय में छोटे न होते तो मैं उनके पैरों की धूलि सिर पर चढ़ा लेता। उन लोगों ने मेरी आँखों के सामने क्या देखा है, क्या सहन किया है, कैसा अपमान हुआ है उन लोगों का, वे सब दुस्सह बातें कहीं भी प्रकट न होंगी। इसकी ही असहनीय व्यथा ने मुझे पागल बना डाला था। मैंने बार-बार मन ही मन प्रतिज्ञा की है कि भय से हार न मानूँगा, पीड़न से हार न मानूँगा, पत्थर की दीवाल पर सिर पटककर मर जाऊँगा तो भी चुटकी बजा-बजाकर उपेक्षा करूँगा उस हृदयहीन दीवाल की।'

'उसके बाद क्या तुम्हारा मत बदल गया।'

'सुनो मेरी बात। शक्तिशाली के विरुद्ध जो लड़ाई करता है, वह उपाय-विहीन होने पर भी, उसी शक्तिशाली के सामने खड़ा होता है, उससे उसके सम्मान की रक्षा होती है। उस सम्मान के अधिकार की मैंने कल्पना की थी, दिन जितना ही आगे बढ़ने लगा, आँखों के सामने दिखाई पड़ा — असाधारण उच्च मन वाले लड़के थोड़ा-थोड़ा करके मनुष्यता को खोने लगे हैं। इतना बड़ा नुकसान और कुछ भी नहीं है। मैं निश्चित रूप से जानता था कि मेरी बातों को हँसकर उड़ा देंगे, कुपित होकर व्यंग्य करने लगेंगे, फिर भी उन लोगों से मैंने कहा। अन्याय में अन्यायकारी के समान होनेपर भी उसमें हार है, पराजय के पहले, मरने के पहले हमें प्रमाणित करके जाना होगा कि हम लोग उन लोगों की अपेक्षा मानव-धर्म में बड़े हैं—नहीं तो इतने बड़े बलशाली के साथ इस तरह की हार का खेल खेल रहे हैं क्यों? निर्बुद्धिता का आत्मघात करने के लिए? मेरी बातों को उन लोगों में से किसी ने समझा ही नहीं, ऐसी बात नहीं है। किन्तु वे कितने थे ही!'

'उसी समय तुमने उनको छोड़ क्यों नहीं दिया?'

'वे सजाओं के निष्ठुर जाल द्वारा पूर्णरूप से जकड़ चुके थे। मैं कैसे छोड़ सकता। उस समय तो उन लोगों का इतिहास मैंने स्वयं ही देखा, समझ गया उनकी मर्मान्तक वेदना को, इसीलिए चाहे मैं क्रोध ही करूँ, या घृणा ही करूँ, तो भी विपत्तिग्रस्त लोगों को मैं छोड़ न सका। किन्तु इस अभिज्ञता से एक बात मैं पूर्ण रूप से समझ गया कि शारीरिक बल में हम लोग जिनकी बराबरी के तनिक भी नहीं हैं उन लोगों के साथ शारीरिक बल का मल्ल-युद्ध करने की चेष्टा करने से हमारी दुर्गति शोचनीय हो जायगी। रोग सभी शरीरों में ही दुःखदायक है,

किन्तु क्षीण शरीर में वह प्राणघातक ही होता है। मनुष्यता का अपमान करके भी कुछ दिनों के लिए विजय-डंका बजाकर चल सकते हैं वे ही लोग, जिनके पास है बाहुबल. किन्तु हम लोग इसे न कर सकेंगे। आदि से अन्त तक कलंक से काले होकर पराभव की आखिरी सीमा में बदनामी के अन्धकार में हम लोग विलीन हो जायँगे।

'कुछ दिनों से इस भयंकर ट्रेजेडी का स्वरूप मेरे सामने भी स्पष्ट हो उठा है अन्तू। गौरव के आह्वान से मैं उतर पड़ी थी, किन्तु लज्जा बढ़ती चली आयी है प्रतिदिन। अब हम लोग क्या कर सकती हैं बता दो मुझे।'

'सभी मनुष्यों के सामने ही धर्मक्षेत्र में धर्मयुद्ध है, वहीं है मृतो वापि तेन लोकत्रयं जितं। किन्तु कम से कम हम इने-गिने लोगों के लिए इस बार की यात्रा में कुरुक्षेत्र का मार्ग अवरुद्ध है। यहाँ का कर्म-फल यहीं पर ही पूर्णरूप से चुकाकर जाना पड़ेगा।'

'मैं सब समझ रही हूँ, तो भी अन्तू हमारे देश के कामों के बारे में कुछ दिनों से ऐसा कठोर धिक्कार देकर तुम बात करते हो कि इससे मुझे बड़ी चोट लगती है।'

'उसका कारण क्या है, उस बात को अब न बताने से भी कोई हानि नहीं। समय बीत चुका है।'

'तो भी बताओ।'

'मैं आज तुम्हारे सामने स्वीकार करूँगा—तुम लोग जिसको देशभक्त कहती हो, मैं वह देशभक्त नहीं हूँ। देशभक्त की अपेक्षा जो चीज बड़ी है उसको जो लोग सबसे उच्च स्थान पर नहीं मानते, उनकी देशभक्ति घड़ियाल की पीठ पर चढ़कर नदी पार करने में नाव का काम लेने की भाँति है। मिथ्याचरण, नीचता,

परस्पर अविश्वास, शक्ति पाने का षड्यंत्र, गुप्तचर-वृत्ति; ये सब एक दिन खींच ले जायँगे उनको कीचड़ के नीचे। यह मैं स्पष्ट ही देख रहा हूँ। इस गड्ढे के अन्दर के भद्दी शक्लवाले जगत् की विषाक्त हवा से किसी समय भी अपने स्वभाव से उस पौरुष की रक्षा मैं न कर सकूँगा, जिसके द्वारा दुनिया में कोई बड़ा काम किया जा सकता है।'

'अच्छा अन्तू, तुम जिसको आत्मघात कहते हो, वह क्या केवल हमारे ही देश में है ?'

'यह मैं नहीं कहता। देश की आत्मा को मारकर देश के प्राण बचाये जा सकते हैं आजकल इस भयंकर झूठी बात को दुनिया भर के राष्ट्रवादी पाशविक गर्जना द्वारा घोषित करने को तैयार रहते हैं, उसका प्रतिवाद मेरी छाती के अन्दर असहनीय आवेग से बार-बार चक्कर खाता रहता है—इसी बात को सच्ची भाषा में शायद मैं कह सकता था, और वह सुरंगों में लुकना छिपना जारी रखकर देशोद्धार करने की चेष्टा की अपेक्षा कहीं अधिक चिरस्थायी और बड़ी बात होती। किन्तु इस जन्म के लिए यह कहने का समय ही नहीं मिला। इसीलिए मेरी वेदना आज इतनी निष्ठुर हो उठी है।'

'एला ने लम्बी साँस खींच ली, कहा—'लौट आओ अन्तू।'

'अब लौटने का रास्ता ही नहीं है।'

'क्यों नहीं है ?'

'अनुचित स्थान पर यदि आ जाता हूँ तो वहाँ का भी दायित्व निभाना है अन्त तक।'

एला ने अतीन के गले को जकड़कर कहा—'लौट आओ अन्तू। इतने दिनों से जिस विश्वास के बीच मैंने अपना डेरा जमाया था उसकी दीवार तुमने तोड़ दी है। आज मैं

पड़ी हुई हूँ बहती हुई टूटी नाव को पकड़कर, मेरा भी उद्धार करके लेते चलो। इस तरह चुपचाप तुम बैठे मत रहो, बोलो अन्तू, एक बात बोलो। अभी तुम आज्ञा दे दो, मैं तोड़ दूँगी प्रतिज्ञा, भूल की है मैंने। मुझको तुम माफ करो।'

'उपाय नहीं है।'

'क्यों उपाय नहीं है। अवश्य है।'

'तीर लक्ष-भ्रष्ट हो सकता है।' पर तरकस में वापस नहीं आ सकता।'

'मैं हूँ स्वयंवरा, मुझसे तुम विवाह कर लो अन्तू। अब मैं अधिक समय नष्ट न कर सकूँगी—गान्धर्व विवाह हो जाने दो—सहधर्मिणी बनाकर ले चलो अपने मार्ग में।'

'विपत्ति का रास्ता होता तो मैं साथ ले जाता, किन्तु जहाँ धर्म नष्ट हो गया है, वहाँ मैं तुमको सहधर्मिणी न बना सकूँगा। रहने दो, रहने दो इन सब बातों को इस जीवन की नाव-दुर्घटना के अन्त में, कुछ सत्य अब भी बाकी है। उसकी ही बात सुन लूँ तुम्हारे मुँह से।'

'क्या कहूँ।'

'कह दो तुम मुझसे प्रेम करती हो।'

'हाँ, मैं प्रेम करती हूँ।'

'बोलो, मैंने तुमको प्यार किया है, यह बात तुमको याद रहेगी तब भी जब कि मैं न रहूँगा ?'

एला निरुत्तर रहकर चुपचाप बैठी रही, आँसू झरने लगे दोनों आँखों से। बहुत देर के बाद उसने वाष्प-रुद्ध गले से कहा—'फिर मैं कह रही हूँ, अन्तू, कुछ ले लो मेरे हाथ से—ले लो यह मेरे गले का हार।'

यह कहकर उसने पैरों पर रख दिया गले का हार।

'किसी हालत में भी नहीं।'

'क्यों, अभिमान।'

'हाँ, अभिमान। कभी ऐसे दिन थे, उस समय यदि तुम देती तो मैं पहन लेता गले में—आज दिया तुमने जेब में, अन्ना-भाव के गड्ढे के भीतर। भीख न लूँगा तुमसे।'

एला अतीन के पैरों के पास लोटकर बोली—'ग्रहण करो, मुझको, अपनी संगिनी बना लो।'

'लोभ मत दिखाओ एला, अनेक बार कह चुका हूँ, मेरा रास्ता तुम्हारे लिए नहीं है।'

"तो वह रास्ता तुम्हारा भी नहीं है। लौट आओ, लौट आओ।"

"रास्ता मेरा नहीं है, मैं ही रास्ते का हूँ। गले की फँसरी को कोई भी गले का गहना नहीं कहता।"

"अन्तू, निश्चित रूप से जान रखो, तुम्हारे चले जाने पर, एक क्षण भी मैं बचूँगी नहीं। तुम्हारे सिवा और कोई नहीं है मेरा, इस बात पर आज यदि तुम सन्देह भी करो, तो एकाग्र मन से मैं आशा करती हूँ कि, मृत्यु के बाद उस सन्देह को पूरे तौर से दूर करने का कोई न कोई रास्ता कहीं पर मौजूद है।"

"हठात् अतीन उछलकर खड़ा हो गया। तीर की भाँति तीखी ह्विसिल (सीटी) की आवाज आयी दूर से। चौंककर वह बोल उठा मैं जा रहा हूँ।"

एला ने उसको जकड़कर पकड़ लिया। कहा—"और थोड़ी देर रुक जाओ।"

"नहीं।"

"कहाँ जा रहे हो?"

"कुछ भी नहीं जानता।"

एला ने अतीन के पैरों को पकड़कर कहा—"मैं हूँ तुम्हारी सेविका, तुम्हारे चरणों की सेविका' मुझे छोड़कर मत चले जाना। छोड़कर मत जाना।"

अतीन थोड़ी देर तक ठिठककर खड़ा रहा। द्वितीय बार ह्विसिल की आवाज आयी। अतीन ने गरज कर कहा—"छोड़ दो।"

यह कहकर अपने को छुड़ाकर वह चला गया।

उस समय सन्ध्या का अन्धकार घना हो गया था। एला फर्श के ऊपर औंधी पड़ी हुई थी। उसके हृदय का भीतरी भाग सूख गया था। उसकी आँखों में आँसू तक नहीं था। ऐसे ही समय में उसने गम्भीर गले की पुकार सुन ली—एला ?"

वह चौंककर बैठ गयी। उसने देखा कि इलेक्ट्रिक टार्च हाथ में लिए इन्द्रनाथ हैं। उसी क्षण उठकर वह खड़ी हो गयी, बोली, वापस ले आइए अन्तू को।"

"इस बालक को छोड़ो। यहाँ तुम क्यों आयी ?"

"विपत्ति है, यह जानकर ही आयी हूँ। तीव्र भर्त्सना के स्वर से ही इन्द्रनाथ ने कहा—"तुम्हारी विपत्ति की बात के बारे में कौन चिन्ता कर रहा है। यहाँ की खबर तुमको किसने दी ?

"बटू ने।"

"तो भी, तुमने समझा नहीं उसका मतलब ?

"समझने की बुद्धि मुझमें नहीं थी। प्राण हाँफ उठा था।"

"तुमको मार सकता तो इसी क्षण मार डालता। जाओ, घर वापस चली जाओ। टैक्सी खड़ी है बाहर।"

चौथा अध्याय

"फिर अखिल ?—तू भाग आया है बोर्डिंग से ! तेरे साथ किसी तरह भी ठीक से पेश आने का उपाय नहीं है । बार बार कह रहा हूँ, खबरदार इस मकान में आना मत । मर जायगा रे ।"

अखिल ने कोई उत्तर न देकर अपने गले की आवाज धीमी बनाकर कहा—"कोई एक दाढ़ी वाला पीछे की सीढ़ी पारकर बगीचे में घुस आया है, इसीलिए तुम्हारे इस कमरे के दरवाजे को मैंने अन्दर से बन्द कर दिया है यह सुनो पैरों की आवाज ।'

अखिल अपनी छुरी के सबसे मोटे फलक को खोलकर खड़ा हो गया ।

एला ने कहा—"छुरी खोलने की जरूरत न पड़ेगी तुम तो वीर पुरुष हो, दे दो मुझको ।"

उसके हाथ से उसने छुरी छीन ली ।

सीढ़ी से आवाज आयी—भय की बात नहीं है, मैं हूँ अन्तू ।

क्षणमात्र में एला का चेहरा पीला हो गया—बोली—"दरवाजा खोल दे ।"

दरवाजा खोलकर अखिल ने पूछा—'दाढ़ी वाला कहाँ है ?"

'दाढ़ी जरूर ही मिल जायगी बगीचे में, बाकी आदमियों को पाओगे यहाँ ही । जाओ पता लगाओ दाढ़ी वाले की !"

अखिल चला गया ।

एला पत्थर की मूर्ति की तरह टकटकी बाँधे खड़ी देखती रही । बोली—'अन्तू यह कैसा चेहरा हो गया है तुम्हारा ?'

अतीन ने कहा—'मनोहर नहीं है ।'

'तो क्यों सचमुच ही ।'

'क्या सचमुच ही।'

'तुमको सबसे खराब बीमारी हुई है।'

'विभिन्न डाक्टरों के विभिन्न मत हैं, विश्वास न करने से भी काम चलता है!'

'अवश्य ही तुमने खाया नहीं है।'

'इस बात को छोड़ो। समय नष्ट मत करो।'

'तुम क्यों आ गये अन्तू, क्यों आ गये। ये लोग तो तुमको गिरफ्तार करने की प्रतीक्षा में हैं।'

'उन लोगों को मैं निराश करना नहीं चाहता।'

अतीन का हाथ पकड़कर एला ने कहा—'तुम क्यों आ गये इस निश्चित विपत्ति के भीतर। अब उपाय क्या है?'

'क्यों आ गया, इस बात को जाने के ठीक पहले ही बताकर चला जाऊँगा। इसके बीच जितनी देर तक सकूँगा उतनी देर तक उसी बात को भुला रखना चाहता हूँ। नीचे के दरवाजों को बन्द करके आ रहा हूँ।'

क्षण भर के बाद वह ऊपर आकर बोला—'चलो छत पर। नीचे के तल्ले की बत्तियों के सब बल्बों को मैंने खोल दिया है। डरने की बात नहीं है।'

दोनों ने ही छत पर जाकर छत पर जाने के रास्ते को बन्द कर दिया। अतीन बन्द दरवाजे पर ओठँगकर बैठ गया, एला बैठ गयी उसके सामने।'

'एला, तुम मन को सहज स्वाभाविक बना लो। कुछ हुआ ही नहीं है, मानो हम दोनों लंका-काण्ड आरम्भ होने के पहिले सुन्दरकांड में हैं। तुम्हारे हाथ इस तरह बरफ की तरह ठंढे क्यों हैं? ये तो काँप रहे हैं। दो, गरम कर दूँ।'

एला के दोनों हाथों को लेकर अतीन ने कुरते के नीचे

अपनी छाती पर दबाकर रखा। उस समय दूर के किसी मुहल्ले में विवाहोत्सव के उपलक्ष्य में सहनाई बज रही थी।

'डर रही हो एली ?'

'किस बात का डर ?'

'सब कुछ का। प्रतिक्षण का।'

'भय है तुम्हारे लिए अन्तू, और किसी बात के लिए नहीं।'

अतीन ने कहा—'एली, मन में यह विचार लाने की चेष्टा करो कि हम लोग हैं पचास या सौ वर्ष आगे की किसी ऐसी ही निस्तब्ध रात्रि में। वर्तमान का घेरा अतिशय संकीर्ण है। उसमें भय-भावना दुःख-कष्ट सभी अपनी प्रकांडता का आभास देते हुए दिखाई पड़ते हैं। वर्तमान है इतनी निम्नश्रेणी का पदार्थ, जिसमें छोटे मुँह बड़ी बात के अतिरिक्त कुछ नहीं है। वह नकाब पहिनकर मानो हम लोग पलभर की गोद में खेलने वाले बच्चे हों। मृत्यु उस नकाब को खींचकर फेंक देती है। मृत्यु कभी अत्युक्ति नहीं करती। जिसकी प्राप्ति की इच्छा अत्यन्त प्रबलतर थी पर वर्तमान की धोखेबाज लेखनी ने जिसका मूल्य बहुत अधिक लिख रखा था, जिसको बिलकुल ही खो दिया है उसके शरीर पर दो दिनों की स्याही ने लेबेल लगाकर लिख दिया है असीम दुःख। यह झूठी बात है। यह जीवन ही जालसाजी है। वह अनन्त काल के हस्ताक्षरों को जाल करके चलाना चाहता है, मृत्यु आकर हँसने लगती है, जाली दस्तावेजों को गायब कर देती है। वह हँसना निष्ठुर हँसना नहीं है, व्यंग की हँसी नहीं है। शिवजी की हँसी की तरह वह मोहन-रात्रि के अवसान में शांत और सुन्दर हँसी है। एली, रात के समय अकेली बैठकर क्या तुमने कभी मृत्यु की स्निग्ध सुगम्भीर मुक्ति का अनुभव किया है। जिसके अन्दर

चिरकाल की क्षमा मौजूद है।'

'तुम्हारी तरह बड़े रूप में देखने की शक्ति मुझमें नहीं है अन्तू, तो भी तुम लोगों की बातों को याद करके जब मेरा मन घबड़ाहट से अभिभूत हो जाता है तब मैं इस बात को खूब निश्चित रूप से अनुभव करने की चेष्टा करती हूँ कि मर जाना सरल है।'

'डरपोक, मृत्यु को तुम भाग जाने का रास्ता क्यों समझ रही हो? मृत्यु सर्वापेक्षा निश्चित है—जीवन सभी गतिस्रोतों का चरम समुद्र है, सभी, सच-झूठ भले-बुरे का अत्यधिक समन्वय है उसके अन्दर। आज रात में हम दोनों ही विराट की फैलाई हुई बाहुओं के घेरे में पड़े हैं, याद पड़ रही है इब्सन की चार लाइनें—

Upwards
Towards the peaks
Towards the stars,
Towards the vast silence.

एला अतीन का हाथ गोद में लेकर बैठी रही स्तब्ध होकर; हठात् अतीन हँसने लगा। बोला—'पीछे की तरफ मरण का काला परदा लटकाया हुआ है असीम में। उसके ही ऊपर जीवन का कौतुक नाट्य नाचता हुआ चला जा रहा है अन्तिम अंक की तरफ। उसी की छवि को आज तुम ध्यान से देख लो। आज से तीन वर्ष पहले इसी छत पर तुमने मेरे जन्म-दिवस के उपलक्ष्य में उत्सव मनाया था, याद है?'

'खूब याद है।'

'तुम्हारे भक्त लड़कों के दल के सभी आ गये थे। भोज की तैयारी आडम्बर के साथ नहीं की गई थी। चिवड़ा मूंग-

कर दाना तैयार किया था। साथ ही उड़द का बरा भी बना था, मिर्च की बुकनी छिड़क दी गई थी, अण्डे का बड़ा भी बना था, याद है। सभी ने मिलकर खाया छीना-झपटी करके। एकाएक मोतीलाल ने हाथ-पाँव पटककर कहना शुरू किया—आज नव युग में अतीन बाबू का नवीन जन्म दिवस है—

मैं उछलकर उठ पड़ा, उसका मुँह बन्द कर दिया, बोला-यदि भाषण करोगे तो तुम्हारा पुराना जन्म दिवस यहीं ही खतम हो जायगा। बटू ने कहा—छिः छिः अतीन बाबू, वक्तृता की भ्रूण-हत्या!'

नव युग, नव जन्म, मृत्यु का तोरण आदि उनकी बँधी हुई बोलियों को सुनने से मुझे लज्जा लगती है। उन लोगों ने जी-जान से चेष्टा की थीं मेरे मन के ऊपर अपने दल की तूलिका चला देने की, किसी तरह भी रंग जमा नहीं।'

'अन्तु, मैं हूँ नासमझ; मैंने ही सोचा था कि तुमको मिला लूँगी अपने सभी पदातिकों के साथ एक वर्दी पहिनाकर।

'इसीलिए मुझे दिखा-दिखाकर उन लोगों के साथ घुल मिलकर बहिनपन निभा रही थी। तुमने सोचा था मेरे संशोधन के पक्ष में कुछ ईर्ष्या की भी जरूरत है। स्नेह यत्न, कुशल इत्यादि के सम्भाषण, विशेष मंत्रणा अनावश्यक उद्वेग आदि को तुमने बिसाती की रंगीन सामग्री की तरह उन लोगों के सामने सजा रखा था अपनी दूकान पर। आज भी तुम्हारे उस करुण प्रश्न को मैं कानों से सुन रहा हूँ, नन्दकुमार तुम्हारी आँखों और मुँह को लाल देख रहा हूँ क्यों। बेचारा भला आदमी था, सत्य के अनुरोध से सिर का दर्द अस्वीकार करने के पहले ही माथे पर फटे चिथड़े की पट्टी आ पहुँची। मैं मुग्ध हो जाता, तो भी समझ जाता कि यह तुम्हारी अत्यन्त प्रेम-

भरी बहिनपन अति पवित्र भारतवर्ष की विशेषकर महत्ता की वस्तु है। बिलकुल ही आदर्श स्वदेशी बहिनवृत्ति है।

ओह, चुप रहो, चुप रहो अन्तू।

बहुत सी फालतू चीजों की अधिकता थी उस दिन तुम्हारे अन्दर, बहुत से हास्यकर ढोंग थे, यह बात तुमको मान ही लेनी पड़ेगी।

मानती हूँ मानती हूँ, एक सौ बार मान रही हूँ। तुमने उन सभी को बिलकुल मिटा दिया है। तो आज फिर इस तरह की निष्ठुरता भरी बातें कह रहे हो क्यों?

किस मानसिक व्यथा से कह रहा हूँ सुनो। तुमने मुझे जीविका से भ्रष्ट कर दिया है; इसलिए तुम मुझसे माफी माँग रही थी। यथार्थ जीवन से मैं भ्रष्ट हो गया, फिर भी उस सत्यानाश के बदले में जिस चीज का दावा मैं कर सकता था, वह दावा भी पूरा नहीं हुआ। मैंने तोड़ डाला अपने स्वभाव को, कुसंस्कार से अन्धी बनी हुई तुम अपनी प्रतिज्ञा को तोड़ न सकी, जिसके अन्दर सत्य नहीं था। इसके लिए माफी माँगने में कौन सी विशेषता है। मैं जानता हूँ। तुम सोच रही हो, इतना कैसे सम्भव हुआ।

हाँ अन्तू, मेरा आश्चर्य किसी तरह भी दूर नहीं होता—मैं नहीं जानती कि मुझमें ऐसी कौन सी शक्ति थी।

तुम जानोगी कैसे। तुम लोगों की शक्ति तुम्हारी अपनी चीज नहीं है, वह तो है महामाया की। तुम्हारे गले का स्वर कैसा आश्चर्यजनक है, मेरे मन के असीम आकाश में ध्वनि की निहारिका का सृजन कर देता है। और तुम्हारे यह हाथ, तुम्हारी ये अंगुलियाँ, सत्य-असत्य सभी के ऊपर पारसमणि का स्पर्श करा सकती हैं। जानता नहीं हूँ किस मोह के वेग से।

धिक्कार देते देते मैंने स्खलित जीवन के अपमान को अपना लिया। इतिहास में इस तरह की बिपत्ति की बातें पढ़ चुका हूँ। किन्तु मेरी तरह बुद्धि-अभिमानी मनुष्य में यह घटना किसी दिन घट सकती है यह मैं सोच नहीं सकता था। इस बार जाल फाड़ देने का समय आ गया है। इसलिए आज तुमसे सच्ची बात ही कहूँगा, वे जितनी भी कड़ी क्यों न हों।'

कह डालो, कह डालो, जो कुछ कहना है कह डालो दया मत करो मेरे ऊपर। मैं हूँ निर्मम, निर्जीव, मैं हूँ मूढ़—तुमको पहचान लेने की शक्ति मुझमें किसी दिन भी नहीं थी। जो अतुलनीय है, वही आया था मेरे पास हाथ बढ़ाकर; मैं हूँ अयोग्य, मूल्य न दे सकी। बड़े भाग्य से मिला हुआ धन जीवन भर के लिए चला गया। इससे भी बड़ी सजा यदि कुछ हो, मुझे वही सजा दे दो।

रहने दो, रहने दो सजा की बात। क्षमा ही करूँगा मैं। जो क्षमा मृत्यु करती है, वही असीम क्षमा। इसीलिए आज आया हूँ।

'इसीलिए ?'

'हाँ, केवल इसीलिए।'

'भले ही क्षमा प्रकट न करते हुए। किन्तु क्यों आ गये इस तरह घिरी हुई आग के बीच? जानती हूँ, जानती हूँ, बचने की इच्छा नहीं है तुमको! यदि यही बात हो तो, इने गिने दिनों को केवल मुझको दे दो, दे दो अपनी सेवा करने का मुझे शेष अधिकार। तुम्हारे पैरों पर गिरती हूँ।'

'क्या होगी सेवा! फूटे हुए जीवन के घड़े में पा लोगी सुधा। तुम जानती नहीं हो, कैसा असहनीय क्षोभ है मुझको। शुश्रूषा देकर उसका तुम क्या कर सकती हो, जो मनुष्य अपने

सत्य को खो चुका है ।'

'सत्य को तुमने खो नहीं दिया है अन्तू। सत्य तुम्हारे हृदय में है अक्षुण्ण होकर ।'

'खो चुका हूँ, खो चुका हूँ ।'

'कहो मत, कहो मत ऐसी बात ।'

'मैं क्या हूँ यदि तुम जान जाती तो तुम्हारा सिर से पैर तक सिहर उठता ।'

'अन्तू, तुम आत्म-निन्दा को बढ़ाते जा रहे हो अपनी कल्पना से । निष्काम भाव से तुमने जो कुछ किया है, उसका कलंक तुम्हारे स्वभाव में कभी न लगेगा ।'

'स्वभाव की ही मैंने हत्या कर दी है, जो सब हत्याओं से बड़ा पाप है । किसी भी अहित को मैं समूल नष्ट नहीं कर सका, समूल नष्ट कर दिया है केवल अपने आपको । उसी पाप से, आज तुमको हाथ में पा लेने पर भी मैं तुम्हारे साथ मिल न सकूँगा । पाणि-ग्रहण ! इस हाथ को लेकर ! किन्तु किसलिए ये सब बातें । इन सभी काले दागों को मिटा डालेगा यमकन्या का काला पानी । उसी के किनारे आकर बैठा हुआ हूँ आज । हँसते-हँसते आज कह डाली जायँ जितनी भी हलकी हलकी बातें हैं । पहले उस जन्मदिवस के इतिवृत्त को समाप्त कर डालूँ । क्या कहती हो, एली ?'

'अन्तू, इसमें मन लगाने में मैं असमर्थ हो रही हूँ ।'

'हम दोनों के जीवन में ध्यान देने योग्य जो कुछ भी है, वह केवल उस तरह के गिने-गिने हलके दिनों के अन्दर अवशिष्ट है । भूलने योग्य भारी-भारी दिन तो बहुत से हैं ।'

'अच्छा, कहो अन्तू ।'

'जन्म-दिवस का खाना-पीना समाप्त हो गया । एकाएक

नीरद को शौक हो गया कि वह पलासी की लड़ाई का अभिनय करे। उठकर खड़ा हो गया, हाथ हिलाकर गिरीश घोष की तरह बोल गया—

कहाँ जाते हो इधर देखो सहस्र किरण।

एक बार देखो इधर ओ दिनमणि।

नीरद बहुत ही अच्छा आदमी है, अत्यन्त सीधा-सादा है, किन्तु निर्दय है उसकी स्मरणशक्ति। जब मेरा मन सभा को भंग कर देने के लिए उतावला हो गया था, तब उन लोगों ने भवेश से अनुरोध किया गाना गाने के लिए। भवेश ने कहा कि हारमोनियम साथ न रहने से वह हाँ कर ही नहीं सकता। तुम्हारे घर में वह पाप था नहीं। ग्रह का कोप टल गया। आशान्वित मन से सोच रहा था इस बार उपसंहार होने जा रहा है, ऐसे ही समय में संतू ने निरर्थक ही तर्क छेड़ दिया—मनुष्य जन्म लेता है जन्म-दिवस को, या जन्म-तिथि को। जितना ही मैं कहता था रुक जाओ, वह रुकता ही नहीं था। वादविवाद में देशाभिमान की गन्ध आने लगी, बढ़ने लगी गले की आवाज, बन्धु विच्छेद होने की नौबत आ ही गयी। बहुत ही क्रोध आ गया तुम्हारे ऊपर। मेरे जन्म-दिवस को सामान्य उपलक्ष्य बना दिया था, महत्तर लक्ष्य था सहधर्मी भाइयों को एकत्र करना।'

'कौन बात है लक्ष्य, कौन है उपलक्ष्य; इसपर विचार तुम बाहर से मत करो अन्तू। सजा के योग्य मैं हूँ, किन्तु अन्याय-पूर्ण सजा की नहीं। याद नहीं है तुमको, उसी जन्म दिवस को ही तो अतीन्द्र बाबू ने मेरे मुँह से अन्तू नाम ग्रहण किया। यह तो खूब छोटी बात नहीं है। तुम अपने अन्तू नाम का इतिहास कह डालो तो सुनूँ।'

हाँ सखी, तो अब सुनो। उस समय मेरी उम्र थी चार-पाँच साल की, कद में मैं था छोटा, मुँह से बातें नहीं निकलती थीं, सुना है कि बेवकूफ की भाँति थी आँखों की चितवन। बड़े चाचा ने पश्चिम से आकर पहले पहल मुझको देखा। गोद में मुझे उठा लिया, बोले—इस बालखिल्य का नाम अतीन्द्र किसने रक्खा है। यह तो है अतिशयोक्ति अलंकार, इसका नाम रख दो अनतीन्द्र; वही अनति शब्द स्नेह की पुकार में अन्तू बन गया है। तुम्हारे लिए भी एक दिन अति बन गया था अनति, अपनी इच्छा से मैंने सम्मान खो दिया है।

हठात् अतीन चौंककर चुप हो गया। बोला—मानो किसी के पैरों की आहट सुनाई पड़ रही है।

एला ने कहा—'अखिल है।'

आवाज आयी, 'बहिनजी।'

छतपर चढ़ने का दरवाजा खोलकर एला ने पूछा—'क्या है?'

अखिल ने कहा—'खाने के लिए कुछ।'

घर पर रसोई की व्यवस्था नहीं थी। पास ही के देशी रेस्तराँ से जरूरत भर खाना आ जाता था।

एला ने कहा—'अन्तू, चलो खाना खा लो।'

'खाने-पीने की बात मत कहो। खाना के बिना मनुष्य को मरने में बहुत दिन लगते हैं। नहीं तो भारतवर्ष अब तक टिकता ही नहीं। भाई अखिल, मन में अब क्रोध मत रखना। मेरा हिस्सा तुम ही खा डालो। उसके बाद पलायनेन समापयेत्—भाग जाना।

अखिल चला गया।

दोनों ही छत की फर्श पर बैठ गये। अतीन ने फिर कहना शुरू कर दिया। उस दिन का जन्म-दिवस चलने लगा लगातार,

कोई भी हिलने का नाम ही नहीं ले रहा था। मैं बार-बार घड़ी देख रहा था, किन्तु वह था केवल इशारा रसौंधीवाले के लिए। अन्त में मैंने तुम्हीं से कहा—तुमको जल्दी तो जाना चाहिये। अभी हाल में ही इन्फ्लुएंजा से तुम अच्छी हुई हो।'

प्रश्न उठा—'कितने बजे हैं।'

उत्तर मिला—'साढ़े दस बजे हैं।'

सभा भंग कर देने के लिए दो चार जम्हाइयाँ और अंगों का ऐंठना—ऐसे दो चार लक्षण दिखाई पड़े। बटू ने कहा—'बैठे हुए हैं क्यों अतीन बाबू? चलिये एक साथ चले जायँ।' कहाँ? वहीं, मेहतरों की बस्ती में; एकाएक वहाँ पहुँचकर उनका शराब पीना बन्द कर देना होगा। मेरा समूचा शरीर जल उठा। मैंने कहा—शराब तो बन्द कर दोगे, पर उसके बदले में क्या दोगे?—इस विषय को लेकर इतना उत्तेजित होने की जरूरत नहीं थी, फल यह हुआ कि जो लोग चले आ रहे थे वे खड़े हो गए। शुरू हो गया—तो आप क्या कहना चाहते हैं।

तीव्र स्वर से मैं बोल उठा—मैं कुछ भी नहीं कहना चाहता। इतना अधिक जोश भी अशोभनीय था। गले को भारी बनाकर तुम्हारी तरफ आधी नजर से देखकर मैंने कहा—तो आज जा रहा हूँ। दुमंजिले पर तुम्हारे कमरे के सामने पहुँचते ही पैर आगे को चलना ही नहीं चाहते थे। कौन सी बुद्धि की सूझ आ गयी कि छाती पर की जेब को टटोलकर मैंने कहा—फाउण्टेनपेन शायद छोड़ ही आया हूँ। बटू ने कहा—मैं ही ढूँढ़कर ला देता हूँ, यह कहकर वह तेजी से चला गया छत पर। पीछे-पीछे दौड़ चला मैं भी। थोड़ी देर तक ढूँढ़ने का नकली रूप दिखाकर बटू ने मुसकुराकर कहा, देखिये तो शायद जेब में ही पड़ी होगी। मैं तो निश्चित रूप से जानता ही था, मेरी

का क्ण्टेनपेन का आविष्कार करने के लिए भौगोलिक की जरूरत है अपने ही डेरे पर। साफ तौर से कह देना पड़ा. एला बहन के साथ विशेष बातें करनी हैं। बटू ने कहा—'अच्छी बात है मैं प्रतीक्षा करता हूँ।' मैंने कहा—प्रतीक्षा करने की जरूरत नहीं है, जाओ। बटू ने मुसकुराकर कहा—क्रोध करते हैं क्यों अतीन बाबू, मैं जा रहा हूँ।'

फिर किसी के पैरों की आहट सुनकर अतीन चौंककर रुक गया। अखिल आ गया छत पर। बोला—किसी आदमी ने यह चिट दी है अतीन बाबू के लिए। उसको रास्ते पर खड़ा कर आया हूँ।

एला की छाती धड़क उठी, बोली—'कौन आ गया ?'

अतीन ने कहा—'बाबू को आ जाने दो मकान में।'

अखिल ने जोर से कहा—'नहीं, आने नहीं दूँगा।'

अतीन ने कहा—डरने की बात नहीं है, बाबू को तुम पहचानते हो, अनेक बार तुमने उनको देखा है।'

'नहीं, मैं पहचानता नहीं हूँ।'

'खूब पहचानते हो। मैं कह रहा हूँ, डरने की बात नहीं है, मैं मौजूद हूँ।'

एला ने कहा—'अखिल जा तू, झूठमूठ डर मत।'

अखिल चला गया।

एला ने पूछा—'बटू आया है क्या ?'

'नहीं, बटू नहीं है।'

'बताओ न, कौन आया है। मुझे अच्छा नहीं लग रहा है।'

'रहने दो यह बात, जो बात मैं कह रहा था, उसको कहने दो।'

'अन्तू किसी तरह भी मन लगाने में समर्थ नहीं हो रही हूँ।'

'एला, खतम करने दो मुझे अपनी कहानी, बहुत देरी नहीं है।—तुम चढ़ आयीं छत के ऊपर। मृदु गन्ध मुझे मिली रजनीगन्धा की। फूल के गुच्छे को सबके ही पास से तुमने छिपा रखा था अकेले मेरे हाथ में देने के लिए। हम लोगों के सम्बन्ध के क्षेत्र में अन्तू की जीवन-लीला शुरू हो गयी इस लजीले फूल की गुप्त अभ्यर्थना से। उसके बाद से अतीन्द्रनाथ की विद्याबुद्धि, गम्भीरता क्रमशः डूबती गयी अतल स्पर्श—आत्मविस्मृति में। उस दिन पहले पहल तुमने मेरा गला जकड़ लिया, कहा—'यह लो लो, जन्म-दिवस का उपहार'—वहीं पा गया मैं प्रथम चुम्बन। आज दावा करने आ गया हूँ—अन्तिम चुम्बन की।'

अखिल ने आकर कहा—'बाबू ने दरवाजे पर धक्का लगाना शुरू कर दिया है। तोड़ डालेगा शायद। कह रहा है कि जरूरी बात है।'

'डरने की बात नहीं है अखिल, दरवाजा तोड़ने के पहले ही मैं उसको ठंढा कर दूँगा। बाबू को उसी जगह पर अनाथ के रूप में छोड़कर तुम इसी क्षण भाग जाओ दूसरे ठिकाने पर। मैं हूँ एला बहन की देख-भाल करने के लिए।'

एला ने अखिल को अपनी गोद के पास खींचकर, उसके माथे को चूमकर कहा—मेरे राजा भैया, सोना तू तो लक्ष्मी का धन है न, मेरा भैया है न, तू चला जा। तेरे लिए कुछ नोट मैंने अपने आँचल में बाँध रखे हैं। तेरी एला बहन का आशीर्वाद है यह। मेरे पैर छूकर बोल, तू इसी क्षण चला जायगा, देर न करेगा।

अतीन ने कहा—मेरी एक सलाह तुमको सुननी ही पड़ेगी। यदि कभी कोई आदमी तुमसे पूछे तो ठीक बात ही कह देना।

कहना—रात के ग्यारह बजे मैंने ही तुमको बलपूर्वक मकान से बाहर निकाल दिया था, चलो, अपनी बात को मैं सच बना आऊँ।

एला ने एक बार फिर अखिल को अपने पास खींचकर कहा—मेरे लिए तू कुछ भी चिन्ता मत करना भाई, तेरा अन्तू भैया तो है ही, कोई डर नहीं है।

अखिल को जब अतीन ठेलकर ले जा रहा था, तब एला ने कहा—मैं भी चलूँ तुम्हारे साथ अन्तू।

आदेश के स्वर से अतीन ने कहा—'नहीं, किसी तरह भी नहीं।'

छत की छोटी सी दीवार पर छाती को दबाकर एला खड़ी रही—गले के पास, उमड़-उमड़कर उठने लगी रुलाई, समझ गयी, आज रात को उसके पास से चिरकाल के लिए अखिल चला गया।'

लौट आया अतीन, एला ने पूछा—'क्या हुआ अन्तू?'

अतीन ने कहा—'अखिल चला गया। अन्दर से मैंने दरवाजा बन्द कर दिया है।'

'और वह आदमी?'

'उसको भी मैंने छोड़ दिया है, वह बैठा-बैठा सोच रहा था, काम से जी चुराकर शायद मैं केवल गप्प ही करता रहूँगा। मानो कोई एक नवीन अलिफ लैला ही शुरू हो गया है। ऊलजलूल उपन्यास तो है ही, समूचा ही गलत है। डर लग रहा है एला? मुझसे डर नहीं लगता तुमको?'

'तुमसे डर, कैसी बात कहते हो।'

'मैं क्या नहीं कर सकता। गिर चुका हूँ पतन की अन्तिम सीमा पर। उस दिन हमारे दल के लोग अनाथ विधवा का

सर्वस्व लूटकर ले आये हैं। मन्मथ उस बुढ़िया का ग्राम के सम्पर्क से जान-पहचान का आदमी है, वही खबर देकर रास्ता दिखलाता हुआ सबको ले गया था। वह छद्म वेष में था, तो भी बुढ़िया ने उसे पहचान लिया। वह बोल उठी—'मनू, बेटा, तू ऐसा काम कैसे कर सका?' उसके बाद फिर लोगों ने बुढ़िया को जाने भी नहीं दिया। जिसे हम देश की आवश्यकता कहते हैं, उसी आत्मधर्मनाशक आवश्यकता से, इसी हाथ से वे रुपये उचित स्थान में पहुँच गये हैं। अपना उपवास मैंने उसी रुपयों से तोड़ डाला है। इतने दिनों के बाद मैं यथार्थ दागी बन गया हूँ चोरी के कलंक से। चोरी का माल छुआ है, उसका उपभोग किया है। चोर अतीन्द्र के नाम का बटू ने भंडा फोड़ दिया है। पीछे कहीं प्रमाण के अभाव से मुझे सजा न मिले या कम सजा मिले, इस ख्याल से पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट की मार्फत, उस मुकदमे को अंग्रेज मैजिस्ट्रेट की अदालत में दायर न करके बंगाली जयन्त हाजरा के इजलास में ले जाने के लिए कमिश्नर के यहाँ से हुकुम निकलवाने की उसने मंत्रणा की है। वह निश्चित रूप से जानता है कि कल मैं गिरफ्तार हो ही जाऊँगा। इसके बीच मत डरो मुझसे, मैं स्वयं डरता हूँ अपनी मृत आत्मा के काले भूत से। आज तुम्हारे घर में और कोई नहीं है।'

'क्यों, तुम हो न?'

'मेरे हाथ से बचावेगा कौन?'

'भले ही न बचावे।''

'तुम्हारी ही अपनी मण्डली में किसी दिन एला दीदी के जो देश-वासी भाई थे, भाई का तिलक तुमने लगाया है जिनके ललाटों पर हर साल, उन्हीं लोगों में चर्चा उठ गयी है कि तुम्हारा बचा

रहना उचित नहीं है।'

'उन लोगों की अपेक्षा मैंने कौन-सा अधिक अपराध किया है।'

'बहुत-सी बातें तुम जानती हो, बहुतों के नाम-धाम। दबाव डालने से वे बाहर निकल पड़ेंगे।'

'कभी नहीं।''

'किस तरह बताऊँ कि जो आदमी आज आया था, इसी हुकुम को लेकर वह नहीं आया था। हुकुम का जोर कितना है यह तो तुम जानती ही हो।''

एला चौंक पड़ी, बोली—'क्या यह सच कह रहे हो अन्तू, सचमुच ही ?'

'एक खबर मिली है हम लोगों को।'

'कौन खबर।'

आज रात के अन्त में खूब भोर में पुलिस आवेगी तुमको गिरफ्तार करने के लिए।'

'मैं।निश्चित रूप से जानती थी कि किसी दिन पुलिस मुझको गिरफ्तार करने के लिए आ जायगी।'

'किस तरह जान गयी।'

'कल बटू की चिट्ठी मुझे मिली थी। उसने खबर दी है कि पुलिस मुझे गिरफ्तार करेगी, उसने लिखा है—वह अब भी मुझे बचा सकता है।'

'किस उपाय से ?'

'कहता है, यदि मैं उससे विवाह कर लूँ तो उस हालत में वह मेरी जमानत देकर मेरा दायित्व अपने ऊपर ले लेगा।'

'अन्धकाराछन्न हो गया अतीन का चेहरा, उसने पूछा—'क्या जवाब दिया तुमने उसको ?'

'मैंने उस चिट्ठी पर केवल लिख दिया है—'धिक्कार' और

कुछ भी नहीं।'

'मुझे खबर मिली है, वही बटू कल आवेगा पुलिस को अपने साथ लेकर। तुम्हारी सम्मति पा लेने के साथ ही बाघ के हाथ से तुमको बचाकर घड़ियाल की खोह में आश्रय देने के लिए वह जी-जान से लग जायगा। उसका हृदय है कोमल।'

एला ने अतीन के पैर पकड़कर कहा—'मार डालो मुझको अन्तू अपने हाथ से। इससे बड़ा सौभाग्य मेरा कुछ भी नहीं हो सकता।'

वह फर्श पर से उठ पड़ी, खड़ी होकर अतीन को बार-बार चुम्मा दे देकर बोली—मार डालो, इस बार मार डालो।

यह कहकर उसने अपनी छाती के ऊपर की अँगिया फाड़ डाली।

अतीन पत्थर की मूर्ति की तरह कठोर बनकर खड़ा रहा।

एला ने कहा—'जरा भी चिन्ता मत करो अन्तू। मैं तो हूँ तुम्हारी, पूर्ण रूप से तुम्हारी ही—मरने पर भी तुम्हारी। ले लो मुझको। गन्दे हाथों को लगने मत दो मेरे शरीर पर, मेरा यह शरीर तुम्हारा ही है।'

अतीन ने कठिन स्वर से कहा—'जाओ अभी तुरन्त ही सोने के लिए चली जाओ। हुकुम दे रहा हूँ, सोने के लिए चली जाओ।'

अतीन को अपनी छाती में सटाकर एला कहने लगी—'अन्तू, अन्तू मेरे, मेरे राजा, मेरे देवता, तुमको मैं कितना प्यार करती हूँ आज तक पूरे हृदय से, यह बात मैं बता नहीं सकी। उसी प्यार की दुहाई है, मार डालो, मार डालो, मुझे मार डालो।'

अतीन एला का हाथ बलपूर्वक पकड़कर उसको सोने के

कमरे में ले गया, बोला—'सो रहो, अभी इसी वक्त सो रहो। नींद में सो जाओ।

'नींद नहीं आवेगी।'

'नींद आने की दवा है मेरे हाथ में।'

'कुछ भी जरूरत नहीं है अन्तू। मेरी चेतना के शेष मुहूर्त को तुम ही ले लो। क्लोरोफार्म ले आये हो? उसको फेंक दो। डरपोक नहीं हूँ मैं, तुम्हारी गोद में जागती रहकर मर सकूँ, तुम वही काम करो। अन्तिम चुम्बन आज अनन्त हो गया! अन्तू! अन्तू!'

दूर से ह्विसिल (सीटी) की आवाज सुनाई पड़ी।

❀ समाप्त ❀